विचार दृष्टि

वर्ष : 7 अंक : 24 जुलाई-सितंबर 2005 25 रुपये

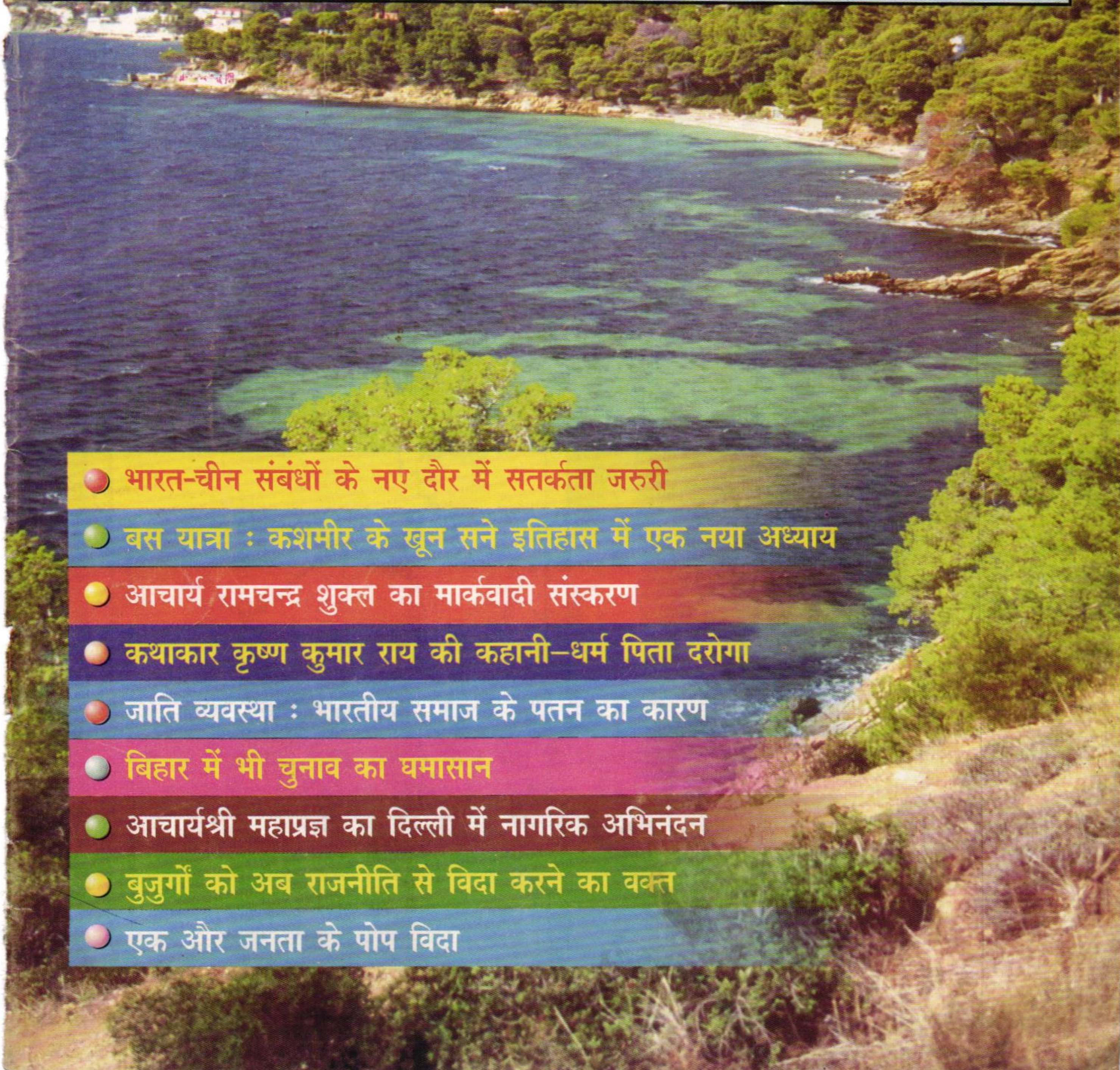

- भारत-चीन संबंधों के नए दौर में सतर्कता जरुरी
- बस यात्रा : कशमीर के खून सने इतिहास में एक नया अध्याय
- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मार्कवादी संस्करण
- कथाकार कृष्ण कुमार राय की कहानी–धर्म पिता दरोगा
- जाति व्यवस्था : भारतीय समाज के पतन का कारण
- बिहार में भी चुनाव का घमासान
- आचार्यश्री महाप्रज्ञ का दिल्ली में नागरिक अभिनंदन
- बुजुर्गों को अब राजनीति से विदा करने का वक्त
- एक और जनता के पोप विदा

राष्ट्रीय विचार मंच एवं विचार दृष्टि

की ओर से

अहिंसा यात्रा के प्रवर्तक आचार्यश्री महाप्रज्ञ एवं युवाचार्यश्री महाश्रमण के दिल्ली शुभागमन पर तथा चातुर्मास की अवधि में

अहिंसा यात्रा के लिए हार्दिक अभिनंदन

आचार्यश्री महाप्रज्ञ के बारे में कुछ उल्लेखनीय बातें :–

1. जैन परंपरा के अद्वितीय शलाका पुरुष।
2. योग, दर्शन अध्यात्म, तत्वज्ञान तथा मनोविज्ञान आदि विषयों पर लगभग दो सौ पुस्तकों के रचयिता।
3. लगभग एक लाख किलोमीटर की पदयात्रा कर जन-जन को नैतिक और चरित्र निष्ठावान बनाने के प्रेरणादायक।
4. विशिष्ट राष्ट्रीय एकता और अखण्डता अक्षुण्ण रखने हेतु की गई आपकी सेवाओं के लिए इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार से सम्मानित।
5. सर्वोच्च सांप्रदायिक सदभाव पुरस्कृत।
6. वैचारिक क्रांति के लिए कृत संकल्पित।
7. निस्वार्थ भाव से सेवा और सच्चा प्रेम ही जिनके जीवन का सार है।
8. मन में अपने पराये का कोई भेद-भाव नहीं।
9. अहिंसात्मक जीवन शौली द्वारा स्वस्थ समाज की संरचना।

तो आइए मंच तथा 'विचार दृष्टि' परिवार के हम सभी सदस्य इनके कार्यक्रमों में भाग लेकर वैचारिक क्रांति की दिशा में इनके अभियान में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करें और अणुव्रत-आन्दोलन को एक हिस्सा बनें।

–: निवेदक :–

सिद्धेश्वर
राष्ट्रीय महासचिव
राष्ट्रीय विचार मंच
सह सम्पादक, विचार दृष्टि

यू.सी. अग्रवाल भा.प्र.से.
पूर्व मुख्य सकर्तता आयुक्त
राष्ट्रीय अध्यक्ष
राष्ट्रीय विचार मंच

विचार दृष्टि

(राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक त्रैमासिकी)

वर्ष-7 जुलाई-सितंबर, 2005 अंक-24

संपादक व प्रकाशक:

सिद्धेश्वर

सं. सलाहकार: गिरीश चंद्र श्रीवास्तव

प्रबंध संपादक : **सुधीर रंजन**

सहा.संपादक : **डॉ. शाहिद जमील**

संपादन सहायक : **अंजलि**

साज-सज्जा: दिलीप सिन्हा एवं सुधांशु

शब्द संयोजन : **सोलूसंस प्वायंट**

(दीपक कुमार, अनुज कुमार)

प्रकाशकीय कार्यालय:

'दृष्टि', 6 विचार विहार, यू०-207

शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92

दूरभाष: (011) 22530652, 22059410

मोबाईल : 9811281443,9899238703

फैक्स: (011)22530652

E-mail: vichardrishti@hotmail.com

पटना कार्यालय:

'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना-1

दूरभाष: 0612-2228519

ब्यूरो प्रमुख:

मुम्बई: मनोज कुमार ☎ 2553701

कोलकाता: जितेन्द्र धीर ☎ 24692624

चेन्नई: डॉ० मधु धवन ☎26262778

तिरूवनंतपुरम:डॉ०रति सक्सेना ☎2446243

बैंगलूर:पी०एस०चन्द्रशेखर ☎26568867

हैदराबाद: डॉ० ऋषभदेव शर्मा

जयपुर: डॉ० सत्येंद्र चतुर्वेदी☎ 2225676

अहमदाबाद: रमेश चंद्र शर्मा 'चंद्र'

प्रतिनिधि:

लखनऊ: प्रो. पारसनाथ श्रीवास्तव,

ग्वालियर: डॉ. महेन्द्र भटनागर

सतना: डॉ. राम सिया सिंह पटेल

देहरादून: डॉ. राज नारायण राय

मुद्रक: प्रोलिफिक इनकारपोरेटेड

एक्स-47, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया,फेज-2, नई दिल्ली-20

मूल्य:	एक प्रति 25 रुपये
वार्षिक:	100 रुपये
द्विवार्षिक:	200 रुपये
आजीवन सदस्य:	1000रुपये

विदेश में:

एक प्रति:US $5, द्विवार्षिक:US $20,

आजीवन: US $250

(पत्रिका-परिवार के सभी सदस्य अवैतनिक हैं)

रचना और रचनाकार

पाठकीय पन्ना /2

संपादकीय /4

विचार-प्रवाह:

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मार्क्सवादी संस्करण /8

डॉ. ऋषभदेव शर्मा

साहित्य:

धर्म पिता-दरोगा - कहानी /10

कृष्ण कुमार राय

सरला डोम - कहानी /13

हृषीकेश पाठक

काव्य कुंज : /17.

पुनिधा सेंगोले, दिवाकर गोयल, दिनेश पंकज, जुम्मना एस.

दृष्टि :

जाति व्यवस्था: भारतीय समाज के पतन का कारण /20

सिद्धेश्वर

समीक्षा :

डॉ. राम विलास शर्मा: व्यक्ति और कार्य-डॉ. ऋषभदेव शर्मा /23

बंटते समाज की अखण्डता की कथा: मनमोहन भारद्वाज /25

भाव प्रवण रचना 'बूंद, फूल और मैं' /28

युगल किशोर प्रसाद

हिंदी-पत्रकारिता में अभिनव आयाम-डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव/30

समाज :

मेरे संशोधन की दिशा: भील 'लोक' /31

डॉ० भगवान दास पटेल

अल्प जन हिताय, अल्प जन सुखाय /35

डॉ. कलानाथ मिश्र

असफलता सफलता का आधार-स्तभ है /36

अंजलि

राजनीतिक नजरिया:

बुजुगों को अब विदा करने का वक्त /37

सिद्धेश्वर

बिहार में फिर चनाव का घमासान /39

आधी आबादी :

'डायन' के बहाने औरतों पर अत्याचार /41

अशोक कुमार सिन्हा

गतिविधियाँ :

आचार्यश्री महाप्रज्ञ का नागरिक अभिनन्दन /45

'साहित्यक पत्रकारिता की चुनौतियाँ' पर संगोष्ठी /46

दक्षिण भारत : हैदराबाद की चिट्ठी /47

सम्मान: /48

डॉ. नायर को 'गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार'

संस्मरण : /49

एक और जनता के पोप विदा

श्रद्धांजलि : /50

हिंदी के सच्चे सेवक विष्णुकांत शास्त्री का निधन

साभार-स्वीकार : /55

आचार्यश्री महाप्रज्ञ के सान्निध्य में कार्यक्रम

अभिनन्दन | दृष्टि | चुनाव | गतिविधियाँ | सम्मान | संस्मरण | श्रद्धांजलि

पत्रिका-परामर्शी

❑पद्मश्री डॉ.श्यामसिंह 'शशि'❑प्रो० राम बुझावन सिंह ❑ प्रो. धर्मेंद्र नाथ 'अमन'
❑ श्री जिया लाल आर्य ❑ डॉ० बालशौरि रेड्डी,❑ श्री जे.एन.पी.सिन्हा
❑श्री बाँकेनन्दन प्रसाद सिन्हा ❑डॉ० सच्चिदानंद सिंह 'साथी' ❑डॉ० एल० एन० शर्मा

रचनाकार के विचारों से पत्रिका-परिवार का सहमत होना आवश्यक नहीं।

खतरे में लोकतंत्र

सर्वमान्य तथ्य है कि अपनी सारी कमियों के बावजूद लोकतंत्र शासन का सर्वोत्तम रूप है। 'विचार दृष्टि' के अप्रैल-जून-05 अंक में प्रकाशित डॉ. शिवनारायण, सौजन्य संपादक, नई धारा के लेख 'खतरे में लोकतंत्र' को पढ़कर हैरानी हुई। लेखक को लोकतंत्र पर मंडराते खतरों में सबसे बड़ा खतरा राजनीति में बढ़ते अपराध या यों कहें कि राजनीति का अपराधीकरण ही लगा है जबकि वास्तविकता यह है कि लोकतंत्र को सबसे ज्यादा खतरा अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी तथा राजनैतिक बेईमानी से है जिसकी ओर लेखक का ध्यान गया ही नहीं।

लेख के प्रथम पैरा की अंतिम पंक्ति में लेखक लोजपा प्रमुख रामविलास पासवान पर खूब बरसे हैं। रामविलास के जिन दलीलों को वे बेशर्म मानकर खारिज करते हैं इसकी एकमात्र वजह है कि अगर लोजपा प्रमुख राजा के तथाकथित शेर के सामने बकरी खड़ा कर देते तो शेर बाजी मार ले जाता और शायद तब लेखक की राजद मानसिकता को संतुष्टि मिलती। ये नहले पर दहले से बिदके दिखाई पड़ते हैं। राजद के नहले पर वे लोजपा के छक्का देखना ज्यादा पसंद करते जो हुआ नहीं। इसका इन्हें मलाल है।

एक तरफ तो ये दलित-पिछड़ों एवं अल्पसंख्यकों (इनका मतलब मुस्लिमों से है) में आई राजनैतिक चेतना की प्रशंसा में कसीदे कढ़ते दिखाई देते हैं और आगे इतना बढ़ जाते हैं कि राजनीति के अपराधीकरण को सामाजिक परिवर्तन की लहर करार दे डालते हैं जिसे ये लोकतंत्र के लिए खतरा मानकर चलते हैं। बात यहीं नहीं समाप्त कर वे आगे कहते हैं कि इस लहर को अपराध का जामा पहनाकर सवर्णों द्वारा बदनाम किया जा रहा है।

राजनीति के अपराधीकरण से लोकतंत्र को खतरे का इनका सारा तर्क बालू की भीत की भांति ढहता नजर आ रहा है। अपने ही तर्कजाल में फँसकर लेख की विषय वस्तु को हास्यास्पद स्थिति में उन्होंने ला दिया है। इनके तथाकथित शेरों के सामने दलित एवं पिछड़े वर्ग का नेतृत्व ही अपने शेरों को खड़ा कर इन्हें पटखनी दी है फिर भी इन्हें इनकी जीत पच नहीं पा रही है।

मंडल कमीशन का भूत लगता है, इनका पीछा नहीं छोड़ रहा है। इन्हें तो ज्ञात होगा ही कि मंडल कमीशन को ठंढे बस्ते से निकालनेवाला कोई सवर्ण ही था जिनको ऐसी-तैसी कहने से डॉ. शिवनारायण अपने को रोक नहीं पाये हैं। इसका एकमात्र कारण लोजपा में सवर्णो की जीत है जो इनके राजद के शेरों द्वारा संचालित सवारी की गति को विराम देना है।

कुल मिलाजुलाकर इस लेख के माध्यम से राजद की हार का कारण लोजपा को मानकर राजद के अपराधियों, जिन्हें जिला बदर किया जा रहा है के प्रति इनका प्रेम झलकता है। इनकी पीड़ा को भली-भांति समझा जा सकता है।

-मनु सिंह, विनोबा नगर, पटना

खोटे सिक्कों का चलन

विचार-दृष्टि का 23 वां अंक। 'संपादकीय' 'सार्वजनिक जीवन में खोटे सिक्कों का चलन' समय-सच है। अर्थशास्त्र में ग्रेसम की भी यही स्थापना है कि खोटा सिक्का धीरे-धीरे खरे सिक्के पर हावी हो जाता है। अंत में खरा सिक्का बाजार से गायब हों जाता है और सर्वत्र खोटे सिक्कों का ही प्रचलन हो जाता है।

बाल साहित्यकार कीर्ति शेष रजनीकान्त के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर श्री सिद्धेश्वर के संस्मरणात्मक आलेख ने रजनीकान्त को जीवंत कर दिया है। प्रो० नवल किशोर प्रसाद श्रीवास्तव का आलेख 'रेणु की कहानियों में ग्रामीण जीवन के यथार्थ' आंचलिकता का आइना है। हिंदी में अहिंदी भाषी कवियों: हर्षलता शाह, प्रह्लाद श्रीमाली, पौलोनी और अनन्या राजू की कविताओं ने प्रभावित किया, प्रसन्न किया। विचार दृष्टि अच्छी पत्रिका है। श्री सिद्धेश्वर को सलाम।

-भोला नाथ आलोक,
नया सिपाही टोला, पूर्णियाँ-853401

पाठकों से

पत्रिका के विभिन्न स्तंभों में छपी रचनाओं पर आपके विचारों व प्रतिक्रियाओं का स्वागत है क्योंकि वे ही हमारे संबल हैं। आपके सुझाव हमारे लिए बहुत ही कीमत रखते हैं। हमें इस पते पर लिखें --

पाठकीय पन्ना, 'विचार दृष्टि'
'दृष्टि', यू-207, शकरपुर,
विकास मार्ग, दिल्ली-92

स्पष्ट दृष्टिकोण

'विचार दृष्टि' का अप्रैल-जून 05 अंक मिला । आपके संपादकीय का स्पष्ट दृष्टिकोण मुझे बेहद प्रसंद आया। डॉ0 शिवनारायण जी का आलेख भी विचारोत्तेजक है, तथ्यात्मक है। कहानी 'रेत के फूल' ने प्रभावित किया । 'फिरौती' भी अच्छी कहानी है। 'आरोही' जी का आलेख ज्ञानवर्द्धक है । पुस्तकों की समीक्षा का स्तंभ रुचिपूर्वक पढ़ा। रेणु की कहानियों का विश्लेषण भी उपयोगी है। निरंतर आप इस पत्रिका के रचनात्मक स्वरूप को रुचिकर बनाने में लगे हैं। बधाई स्वीकारें ।

रामयतन यादव, फतुहा, पटना

सुंदर व स्वच्छ अंक

मैंने 'विचार दृष्टि' का सुंदर व स्वच्छ अंक पढ़ा। पढ़कर मन और अशांत आत्मा तृप्त हुई । सफल संपादन के लिए ढेरों बधाई।

जयसिंह अलवरी, सिरूगुप्पा, कर्नाटक

सूक्ष्म चिंतन और संदीप्त लेखन

आपके यशस्वी संपादन में प्रकाशित 'विचार दृष्टि' पत्रिका का अंक मिला । संपादकीय में आपके सूक्ष्म चिंतन और संदीप्त लेखन के दर्शन हो रहे हैं, अंक की सारी रचनाएँ एवं अन्य सामग्री पत्रिका के नामानुरूप स्तरीय तथा रोचक प्रेप्य और बोधप्रह है। साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में आपका यह अनुष्ठान अभिनंदनीय एवं अविस्मरणीय है। इस महत् सत्कार्य हेतु शतशः साधुवाद ।

भानुदत्त त्रिपाठी 'मधुरेश'
362, सिविल लाइंस (कल्याणी)
उन्नाव, उ० प्र०

आपके द्वारा संपादित 'विचार दृष्टि' का अप्रैल-जून 05 अंक मिला। पढ़ा, अच्छा लगा। सबसे पहले गीतकार मधुर शास्त्री जी के 75 वें वर्ष पूर्ण होने पर मैं पत्रिका के माध्यम से उनकी दीर्घायु की कामना करता हूँ। एक अच्छे अंक के लिए संपादक मंडल को बहुत-बहुत बधाई।

यादराम शर्मा, अलीगढ़

रचनाकारों से

(1) रचना भेजने के लिए कोई शर्त नहीं है, सभी रचनाकारों का हम हार्दिक स्वागत करते हैं। उदीयमान रचनाकारों को विशेष रूप से प्रोत्साहित किए जाने का प्रयास रहेगा।

(2) राष्ट्रीय भावनाओं पर आधारित तथा वैचारिक रचनाओं को प्राथमिकता दी जाएगी।

(3) रचना एक तरफ/कम्प्यूटर पर कम्पोज्ड अथवा सुवाच्य स्पष्ट लिखी होनी चाहिए।

(4) रचना के अंत में उसके मौलिक अप्रकाशित व अप्रसारित होने के प्रमाण पत्र के साथ रचनाकार का नाम व पूरा पता अवश्य लिखा होना चाहिए।

(5) रचना के साथ पासपोर्ट/स्टाम्प आकार की श्वेत एवं श्याम तस्वीर की दो प्रतियाँ अवश्य संलग्न करें।

(6) प्रकाशित रचनाएँ वापस नहीं की जातीं, कृपया उसकी प्रति अवश्य रख लें।

(7) प्रकाशित रचनाओं पर फिलहाल पारिश्रमिक देने की कोई व्यवस्था नहीं है, हाँ, रचना प्रकाशित होने पर अंक की प्रति अवश्य भेजी जाएगी।

(8) किसी भी विधा की गद्य रचनाएँ 1500 शब्दों अथवा दो पृष्ठों की मर्यादा में ही स्वीकार्य होंगी।

(9) समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजना आवश्यक है।

(10) रचनाएं कम्प्यूटर पर कम्पोज्ड कराकर उसे इन्टरनेट पर भेजें जिसका

E-mail - vichardrishti@hotmail.com

सिद्धेश्वर
संपादक, 'विचार दृष्टि' दृष्टि 6, विचार बिहार,
यू-207, शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92,
दूरभाष: (011) 22530652, 22059410

कृपया ध्यान दें

पत्रिकाएँ और पुस्तकें खरीदकर पढ़ने में जितना मजा आता है उतना मुफ्त में पाकर नहीं। इसलिए जब आप 'विचार दृष्टि' पत्रिका नमूना प्रति की माँग करें तो यह लिखना न भूलें कि आप इसकी सदस्यता ग्रहण करना चाहते हैं। पता नहीं क्यों पत्रिकाओं का सदस्य बनना अपना कर्तव्य नहीं, लोग उसे मुफ्त में झपटना अपना अधिकार समझते हैं।'

दो वर्षों तक 'राष्ट्रीय विचार पत्रिका' और बाद में भारत के समाचार पत्रों के पंजीयक द्वारा 'विचार दृष्टि' शीर्षक अनुमोदित एवं निबंधित होने पर पिछले छः साल से निरंतर इसकी प्रति आप प्रबुद्ध पाठकों एवं साहित्य सेवियों के हाथों जा रही है और जिसके तेवर व कलेवर को भी आपने तहेदिल से स्वीकारा है। समझदारी का तकाजा है कि इसकी सदस्यता ग्रहण कर इसके नियमित प्रकाशन में आप अपेक्षित सहयोग करें। यह आप पाठकों की गरिमा के अनुरूप होगा और मैं भी आपकी आकांक्षाओं एवं विश्वासों के अनुरूप एक स्वस्थ पत्रिका आप तक पहुँचाने में समर्थ हो सकूँगा। पिछले दो-तीन महीनों में इसकी सदस्यता ग्रहण में अभिरुचि लेकर आपने मुझे प्रोत्साहित किया है यह आपकी सदाशयता एवं उदारता का द्योतक है। मैं तहेदिल से आभारी हूँ आप सभी नए सदस्यों का। अगर आपकी सदस्यता समाप्त हो चुकी है तो एक सौ रुपए भेजकर उसका नवीनीकरण करा लें।

राज्य कार्यालय
संपादक, 'विचार दृष्टि' 'बसेरा', पुरन्दरपुर
पटना-1 (बिहार) फोन: 2228519

'दृष्टि', यू. 207, शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92
फोन: 011-22059410
011-22530652

जरा इनकी भी सुनें

हमारे संविधान की मूल भावना और परिभाषा के अनुसार राज्यपाल राज्य का पहला नागरिक होता है। यह निर्णय आपको करना है कि आप प्रथम नागरिक बनना चाहते हैं या राजनीतिक या अन्य किसी अतीत की सीमाओं में कैद रहना चाहते हैं।

-डॉ० एपीजे अब्दुल कलाम

किसी भी राजनीतिक व्यक्ति को राज्यपाल नहीं बनाया जाना चाहिए।

-उपराष्ट्रपति भैरो सिंह शेखावत

राज्यपालों को राजनीतिक पक्षपात की सीमा से ऊपर उठकर प्रदेश को बैद्धिक व नैतिक नेतृत्व देने पर गंभीरता से विचार करना चाहिए ।

-प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह

उनके पास ऐसी कोई सीटी नहीं है जिसे बजाते ही कश्मीर में तमाम बंदूकें खामोश हो जाएँ

-पाक राष्ट्रपति परवेज मुशर्रक

जन संहारक हथियारों का भूत अब भी बरकरार है जिसके चलते भूमंडलीय निरस्त्रीकरण सिर्फ मृग मरीचिका है।

-काँग्रेस अध्यक्ष सोनिया गाँधी

भाजपा और काँग्रेस जैसे राष्ट्रीय दलों के दिन लद गए हैं ।

-मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव

अधिक तनाव से भी हो सकता है हृदयरोग।

-पद्मभूषण डॉ०पुरुषोत्तम लाल

मेरे जीने के लिए सौ की उमर छोटी है।

- शलाका पुरुष विष्णु प्रभाकर

गायत्री देवी की भूमिका से मैं खुश हूँ ।

-अदाकारा ऐश्वर्य राय

भारत-चीन संबंधों के नये दौर में सतर्कता जरूरी

भारत को यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि 'इतिहास स्वयं को दोहराता है।' भारत ने जब भी चीन के साथ दोस्ती का हाथ बढ़ाया है उसे लाभ के बदले कहीं ज्यादा नुकसान उठाने पड़े हैं। इस वक्त भारत एक बार पुन: उन सारी नुकसानदायी लम्हों को भुलाकर चीन के साथ मधुर रिश्ते बनाने का प्रयास कर रहा है। दो देशों के बीच रिश्तों की मजबूती बहुत जरूरी है, लेकिन इसके साथ ही हमें पिछले कटू अनुभवों से भी सीख अवश्य लेनी चाहिये।

आपको याद होगा सीमा विवाद को सुलझाने के उद्देश्य से सन् 1988 में राजीव गाँधी द्वारा चीन की यात्रा किये जाने के पश्चात चीन के तत्कालीन प्रधानमंत्री तंग श्याओ किंग ने उस मुलाकात को भारत-चीन के बीच एक नये युग की शुरूआत कही थी और विवाद के हल को लेकर दोनों देशों के बीच एक संयुक्त कार्यदल के गठन के लिये सहमति भी बनी थी, लेकिन तीन साल के भीतर ही चीन ने पाकिस्तान को एम-11 न्यूक्लियर मिसाइल देकर अपनी दोमुंही नीति को दर्शा दिया था। पुन: लाइन ऑफ एक्चूयल कंट्रोल के आसपास शांति बहाली के उद्येश्य से सन् 1993 में नरसिम्हा राव ने चीन की यात्रा की थी, लेकिन दो साल के भीतर ही चीन एक बार फिर पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम को बढ़ाने के लिये रिंग मैग्रेट तथा परमाणु हथियारों को ढोने की क्षमता रखनेवाले एम-9 मिसाइल उपलब्ध कराये। इसी प्रकार सीमा विवाद के समाधान के उद्येश्य से सन् 2003 में अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा चीन की यात्रा करने के दौरान ही चीन ने पाकिस्तान को 2000 किलोमीटर की मारक क्षमतावाला शाहीन मिसाइल प्रदान किया था और उसके परमाणु कार्यक्रम को बढ़ाने में हर संभव सहयोग करने को आश्वस्त भी किया था। और इन ऐतिहासिक घटनाओं के काफी पूर्व जवाहरलाल नेहरू के प्रधानमंत्रित्व काल में भारत ने चीन की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया था और उसकी सार्थक प्रतिक्रिया 'हिंदी चीनी भाई-भाई' के नारे के रूप में विश्व पटल पर उभरी थी, किंतु परिणाम के रूप में सन् 1962 में भारत पर चीनी आक्रमण देखने को मिला।

यहाँ इन बातों की चर्चा मैंने इसलिये की कि भारत की चीन के साथ आज की तारीख में एक ही बात पर कशिश है कि चीन पाकिस्तान को कुछ ज्यादा ही तरजीह देता है। यही नहीं, पाकिस्तान का परमाणु कार्यक्रम चीन के ही भरोसे है। चीन संभवत इस बात से भी अवगत होगा कि पाकिस्तान की विदेश नीति हमेशा से कुछ इस प्रकार की रही है कि वह सिर उठाकर बराबरी की दोस्ती करनेवाला देश नहीं रहा है और खासकर भारत को तो वह शंका की दृष्टि से ही देखता रहा है, क्योंकि कश्मीर पर उसकी गिद्ध-दृष्टि है। उसने हमेशा किसी न किसी महाशक्ति की चाटूकारिता की है और उनका पिट्ठू बनने का प्रयास किया है। साथ ही उसे यह भी डर है कि कहीं भारत एशिया महाद्वीप की महाशक्ति न बन जाय।

अभी-अभी पिछले अप्रैल माह में पाकिस्तान, श्रीलंका और बांग्लादेश का भ्रमण करने के पश्चात चीन के प्रधानमंत्री वेन जियाबाओ ने भारत की चारदिवसीय यात्रा की, जिसे दोनों देशों के प्रवक्ताओं ने ऐतिहासिक घोषित किया। बताते चलें कि इस दफा श्री वेन ने पाकिस्तान के साथ एक नयी मैत्री संधि के तहत एफ-17 लड़ाकू विमान कारखाने लगाने का वादा भी किया है और एक परमाणु विद्युत शक्ति उत्पादन केंद्र स्थापित करने की भी घोषणा की गयी है। उल्लेखनीय है कि सन् 2003 में श्री वाजपेयी की चीन यात्रा के बाद चीन आश्चर्यजनक तरीके से सिक्किम को भारत का अंग मानने पर राजी हो तो गया था, लेकिन सीमा विवाद का मामला इतना जटिल है कि दोनों ही देश जल्दी किसी खास नतीजे पर नहीं पहुँच पा रहे हैं, क्योंकि भारत की चीन के साथ सीमा को लेकर कई जटिल समस्याएँ हैं जिन्हें आसानी से हल नहीं किया जा सकता है। यह तभी संभव है जब दोनों ही देश जमीनी तौर पर रिश्ते बनाने के इच्छुक हों और सहयोगी भूमिका निभाएँ। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि भारत और चीन दोनों आज एक नये भविष्य की तलाश में हैं। सोवियत संघ के विघटन के बाद उसकी अनुपस्थिति में हमें तीसरी दुनिया में व्यापक सहमति बनाने के लिये एक नयी राह तलाशनी है और इसके लिये चीन का सहयात्री होना हमारे देश के लिये जरूरी है।

इसी ख्याल से इस बार चीन के प्रधानमंत्री श्री वेन की भारत यात्रा के दौरान दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने राजनीतिक मापदंड और मुख्य दिशा-निदेशक सिद्धांत पर समझौता किया है जिसमें सीमा विवाद का समाधान पंचशील नीति के आधार पर ढूँढ़ा जाना भी शामिल है। 'दोनों देश के नेता शांति और खुशहाली के लिये भारत-चीन सामरिक और सहयोगात्मक रिश्ते स्थापित करने पर सहमत हो गये हैं,--ऐसा दोनों देशों द्वारा जारी संयुक्त बयान में कहा गया है। अन्य बारह समझौते के अतिरिक्त दोनों देशों के बीच आर्थिक रिश्तों में बुनियादी परिवर्तन के संकेत भी मिलते हैं। इस संदर्भ में यह कहना यथोचित होगा कि भारत-चीन

व्यापार 5 साल में चार गुणा बढ़कर 1360 करोड़ डॉलर तक पहुँच चुका है। अब यह लक्ष्य है कि सन् 2008 तक 2000 करोड़ तक और 2010 तक में 3000 करोड़ डॉलर तक पहुँचाना है। इस बाबत हमें खुले दिल से स्वीकार करना होगा कि आर्थिक प्रगति के क्षेत्र में चीन हमसे आगे निकल चुका है। इसलिये हमें चीन के साथ सहयोग करके उसी रास्ते पर आगे बढ़ना होगा, किंतु इसमें सावधानी यह बरतनी है कि भारत उसके माल का केवल मंडी न बनकर रह जाय। कारण कि चीनी माल का उत्पादन सस्ता हो रहा है, क्योंकि वहाँ मजदूरी की दर सस्ती है और बिजली की कीमतें भी बहुत कम हैं। चीन में ज्यादातर उद्योगों को बैंक बिना ब्याज ऋण देते हैं। दूसरी बात कि चीन का कर्मचारी बहुत परिश्रमी, समय पर अपने कर्त्तव्य का निर्वहन करनेवाला तथा निर्धारित ड्यिूटी से अधिक काम करनेवाला होता है। वहाँ चोरी और भ्रष्टाचार की गुंजाइश कम है, क्योंकि चोरी, भ्रष्टाचार या अपराध में लिप्त पाये जानेवाले को वहाँ जनता के सामने गोली मार दी जाती है, चाहे वह कितना ही बड़ा अधिकारी क्यों न हो। यही कारण है कि आज पूरे विश्व में चीनी माल की धूम मची है। चीन में सरकार और शासन की जबर्दस्त दहशत रहती है। आखिर तभी तो हमसे बाद यानी सन् 1949 में आजादी पाने के बाद भी चीन आज प्रगति की जिस ऊँचाई पर है हम उसकी अभी कल्पना ही कर सकते हैं। हमारे देश की स्थिति उसके ठीक विपरीत है। माना कि चीन और भारत की राजनीतिक व्यवस्था अलग है। जहाँ वे मार्क्सवाद और लेनिनवाद के विचारों में भरोसा रखते हैं हम भारत के लोग बहुदलीय प्रजातांत्रिक व्यवस्था में यकीन करते हैं जिसमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर, चाहे आधे पेट रहकर या फिर 39 फीसदी से अधिक लोग गरीबी रेखा से नीचे गुजर-बसर कर भी यहाँ के लोग फूले नहीं समाते हैं। वहीं हमसे अधिक आबादी होते हुये भी चीन ने अपने वासियों को भरपेट खाना दे रखा है और आज भूख से वहाँ कोई नहीं मरता है। भारत में हम आम आदमी के नजदीक रहते हैं, इसीलिये अभिजात्य वर्ग हमें पसंद नहीं करता। यही कारण है कि इस पाखंड और प्रपंच में आम आदमी को जहालत की जिंदगी जीना पड़ रहा है।

भारत और चीन दोनों देशों की अपनी उम्मीदें और आशंकाएँ हैं जिन पर ईमानदारी से ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। भारत को तरक्की के रास्ते पर ले जाने के लिये चीन से कुछ खास-खास बातें सीखनी ही होंगी। आखिर उसने कैसे अपनी बढ़ती जनसंख्या पर नियंत्रण पा लिया। विदित हो कि चीन अबतक 11 देशों के साथ अपने सीमा-विवाद का हल खोज चुका है। भारत के साथ भी यह प्रक्रिया एक नयी दिशा ले रही है। अब राजनीतिक प्रतिनिधि उपरोक्त सिद्धांतों के आधार पर एक ढाँचा तैयार करेंगे। इसके बाद सर्वे द्वारा सीमा का निर्धारण किया जायेगा। सिंगापुर के पूर्व प्रधानमंत्री लीन कुआन यू ने एक सेमिनार में चीनी प्रधानमंत्री श्री वेन की भारत यात्रा पर टिप्पणी करते हुये कहा है कि दोनों ही देशों के बीच बढ़ते संबंधों का असर दुनिया के अन्य देशों पर भी पड़ेगा। वे समूचे एशिया में भारत-चीन संबंधों को एक पुनर्जागरण की शुरूआत के रूप में देखते हैं। इसी प्रकार माइक्रोसॉफ्ट के चेयरमैन बिल गेट्स ने हाल ही में कहा है कि अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिता की स्थिति में भारत और चीन के साथ अमेरिका हमेशा पीछे ही रहेगा। 'द वर्ल्ड इज फ्लेट: ए ब्रीफ हिस्ट्री ऑफ द टवेन्टी फर्स्ट संेचुरी' के लेखक तथा न्यूयार्क टाइम्स के स्तंभकार थॉमस एल फ्रेंडमैन के अनुसार भारत और चीन टेक्नोलॉजी और जियो इंफौमेटिक्स के क्षेत्र में एक नया इतिहास रचने की तैयारी में है।

चीनी प्रधानमंत्री वेन जियाबाओ की इस भारत यात्रा पर समूची दुनिया की निगाहें लगी रहीं। यकीनन दोनों देशों के रिश्तों की ऊँचाई देने की दिशा में श्री वेन की इस चार-दिवसीय भारत यात्रा को एक नये अध्याय की शुरूआत के रूप में देखा जा सकता है। कहना नहीं होगा कि सन् 1962 के भारत-चीन युद्ध के वक्त दोनों देशों के बीच जो कटूता का माहौल बन गया था उसके मद्देनजर संयुक्त घोषणा पत्र द्विपक्षीय रिश्तों की समग्रता की दिशा में एक बड़ा कदम सिद्ध होगा। चीन और भारत का यह सहयोग विश्व का गुरुत्व केंद्र अटलांटिक से पैसिफिक और भारतीय महाद्वीप में स्थानांतरित कर देगा। ऐसी आशा की जाती है कि श्री वेन की इस यात्रा से उपजे माहौल को मुर्शरफ भी संज्ञान में लेंगे। चीन द्वारा सिक्किम को अंततः भारत का अंग मानना और अरुणाचल प्रदेश की वास्तविक स्थिति पर बातचीत की रजामंदी को विवाद का समाधान निकालने की दिशा में एक सार्थक कदम समझा जायेगा। दोनों देशों के बीच रणनीतिक और सैन्य क्षेत्र में बढ़ावा देने के लिये जो आम सहमति बनी है, वह बदलाव की जरूरत को रेखांकित करती है।

इन सबों के बावजूद इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि चीन, भारत के साथ दोस्ताना रिश्ता कायम कर अपने लिये भारत जैसे विशाल देश को बाजार-मंडी तैयार करना चाहता है। यही नहीं जब इस वक्त भारत और चीन दोनों अन्य देशों से अपने रिश्ते सुधारने के प्रयास कर रहे हैं, चीन काफी समय से शंघाई कोओपरेशन संगठन, एशियन तथा संयुक्त राष्ट्र

सुरक्षा परिषद में भारत की भूमिका का विरोध कर रहा है, हालांकि वेन जियाबाओ ने इस बार की अपनी भारत यात्रा में यह भी कहा कि चीन संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद में भारत को देखकर प्रसन्न होगा। यद्यपि श्री वेन का यह बयान चीन के इस औपचारिक रूख को नहीं बदलता है कि बीजिंग इस मुद्दे पर आम सहमति का प्रक्षधर है। यह बात ठीक है कि चीनी बुद्धिजीवी भारत को दक्षिण एशिया में एक महत्त्वपूर्ण देश मानते हैं और इतनी विभिन्नता होते भी भारत चीन के साथ दोस्ती का हाथ बढ़ाने को आतुरता से अग्रसर है फिर भी ऐसा करते वक्त भारत को हर कदम फूँक-फूँक कर रखने और सर्तक रहने की जरूरत है।

बस यात्रा:कश्मीर के खून सने इतिहास में एक नया अध्याय

पिछले दिनों 7 अप्रैल 2005 को कश्मीर की राजधानी श्रीनगर से पाक अधिकृत कश्मीर की राजधानी मुजफ्फराबाद के बीच बस यात्रा की शुरूआत को कश्मीर के खून सने इतिहास में एक नया अध्याय माना जाएगा। भारत और पाकिस्तान के बीच भाईचारे की इस नयी लहर के बारे में अभी कुछ महीने पहले तक सोचा भी नहीं जा सकता था। इसी प्रकार बस यात्रा शुरू होने के एक सप्ताह के भीतर उधमपुर से नई दिल्ली के लिये रेल सेवा की शुरूआत निश्चय ही एक नये कश्मीर के उदय का संकेत है। बस सेवा जहाँ बिछुड़ों को मिलाने का माध्यम बनी है, वहीं यह रेल सेवा जम्मू-कश्मीर को मुख्यधारा से जोड़ने का निमित्त बनेगी। सड़क के किनारे औरत, मर्द और बच्चे बस के यात्रियों को विदाई देने के लिये कतार लगाये खड़े थे और जैसे खुशी की बारिस हो रही थी। सहसा लोगों को इस सब पर यकीन नहीं हो पा रहा था, क्योंकि यात्रियों में आतंकियों का दहशत तो था ही। वे जानते थे, कि इस बस यात्रा में कितना कुछ दांव पर लगा है। यात्रा की शुरूआत के मौके पर श्रीनगर के मध्य में स्थित पर्यटक स्वागत केंद्र की इमारत पर तीन आंतकियों ने धावा बोला था। फिर आपने देखा कि इस इमारत में आग लगा दी गयी। वैसे विगत कई वर्षों से कश्मीर आतंकवाद के जिस चपेट में है और आतंकवाद के उभार ने जिस प्रकार उसे पूरी तरह तहस-नहस कर रखा है, जिसके चलते राज्य के उद्योग-धंधे पूरी तरह ठप्प हैं उसमें इस दिशा में केंद्र और राज्य सरकारों की भूमिका की अपेक्षा थी। ऐसी स्थिति में श्रीनगर-मुजफ्फराबाद बस सेवा ने निश्चय ही नया आयाम दिया है। दोनों देशों को एक साथ जोड़ने का काम वास्तव में चुनौती से भरा है।

हर जगह गोलियों की आवाज और सर्द तेज हवाओं के गर्जन से भरी रात में धू-धू करके जल रही इमारत की आग से यह यकीन कर पाना मुश्किल था कि यह बस यात्रा खुशी की सौगात लेकर आयेगी और उसमें भी तब जब एक दूसरे के जानी दुश्मन रहे दो देशों के लोग इतिहास नये सिरे से लिखने के लिये एक-दूसरे का साथ हाथ मिला रहे थे। पिछले 50 साल में कश्मीर के निवासी इस तरह सड़क के किनारे कतार लगाकर किसी बात पर खुशी का इजहार करने के बारे में सोच भी नहीं सकते थे। वही कश्मीरियों ने एक ऐसा अवसर देखा, जो उनके इतिहास की चादर पर पड़े खून के धब्बों को धो डाला और कश्मीर के लोगों ने पाकिस्तान से आ रहे मेहमानों का खैर मकदम करने में कोई-कोर-कसर उठा नहीं रखा। अमन के इस कारवां को देखने से ऐसा लगता था कि रास्ते में भावना से भरी भीड़ की खुशी का पारावार न था। झगड़ों, हत्याओं और साल-दर-साल फिदायीन हमलों की यादें अचानक ऐसी लगने लगी जैसे ये सब बाबा आदम के जमाने की बातें हों। यह दर्रा न जाने कितनी लड़ाईयों का गवाह रहा है, लेकिन इस यात्रा के दौरान दर्रा मिलन की गर्मजोशी से छलछला गया। आसमान में छाये बादलों से झाँकते अस्ताचलगामी सूर्य की किरणों से बिखेरती उम्मीद के रंग ऐसे लग रहे थे जैसे उसमें नहाकर दर्रा का सारा पर्वत उल्लास का पहाड़ बन गया हो।

आज की तिथि में लोग यह सोचने को विवश हैं कि पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी की तरह विभाजित भारत और पाकिस्तान के लोगों का विभाजन से कोई भला तो नहीं ही हुआ, बल्कि ठीक इसके विपरीत कश्मीर सहित कई समस्याएँ आ खड़ी हो गयीं। अक्टूबर 2003 में श्रीनगर-मुजफ्फराबाद बस सेवा शुरू करने के प्रस्ताव से लेकर अब तक यह उम्मीद की जा रही थी कि इन परंपरागत रास्तों के खुलने से दोनों देशों के बीच न केवल व्यापार में भारी बढ़ोतरी होगी, अपितु जम्मू और कश्मीर के विभाजित परिवारों की पीड़ा भी कम होगी। नियंत्रण रेखा पर बने अमन सेतु के दोनों ओर खासकर जम्मू के राजौरी और पुंछ के मैदानी इलाकों तथा आजाद कश्मीर के सबसे बड़े क्षेत्र मीरपुर में भीमबेर, कोटली के लोग अपने दोस्तों और रिश्तेदारों से जुड़ने के लिये एक लंबे अरसे से बेताब थे, क्योंकि दोनों की भाषा एक है, संस्कृति एक है, फिर भी एक-दूसरे से मिलने से मजबूर थे और जिसने तीन बड़े युद्ध, करगिल समेत कई अघोषित युद्ध, झड़पों और स्थायी कलहों के नजारे देखे। ऐसे हालात

में श्रीनगर से मुजफ्फराबाद तक चले अमन के इस कारवां को पाक अधिकृत कश्मीर के प्रधानमंत्री सिकंदर हयात ने ठीक ही कहा कि यह बर्लिन की दीवार टूटने जैसी घटना है।

भारत और पाकिस्तान धीरे-धीरे अपने सारे गिले-शिकवे भुलाकर एक-दूसरे के करीब आने को उत्सुक हैं जो एक शुभ संकेत है। पाक के राष्ट्रपति जनरल परवेज मुशर्रफ की हाल की भारत यात्रा निश्चित रूप से इसकी एक कड़ी कही जाएगी। दोनों देशों के बीच बस सेवा और रेल सेवा की शुरूआत सराहनीय है। इस तरह दोनों देशों के बीच कटुता के बीज रोपनेवाले कट्टरपंथियों के लिए यह एक संकेत है कि अब उसके नापाक मंसूबे धरे रह जायेंगे। भारत ने पाकिस्तान के साथ शांति और संबंध सुधारने की जो प्रक्रिया शुरू की है वह दोनों देशों को इतिहास के एक नये दौर में ले जा सकती है।

दोनों देश सभी मसलों का हल इस तरह निकालने को इच्छुक हैं जो एक दूसरे को स्वीकार्य हो। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि दोनों देशों के रिश्तों में पहले के मुकाबले जमीन आसमान का बदलाव आया है। अब तो नौबत यहाँ तक आ गयी है कि भारतीय व्यापारी पाकिस्तान जाकर होटल बना रहे हैं, उद्योग-धंधे लगा रहे हैं तथा वहाँ के लोग यहाँ आकर संभावनाएँ तलाश रहे हैं। पाक राष्ट्रपति मुशर्रफ ने हाल की अपनी भारत-यात्रा के दौरान खुद कहा कि 'मैं फिर वही दिल नहीं लाया हूँ जो आगरा के वक्त था, अब तो मैं नया दिल लाया हूँ। इस नये दिल में मोहब्बत है, भाईचारा है, अमन-चैन का पैगाम है और खुशी है।' दरअसल उस समय उनके दिल में तल्खी थी, कड़वाहट थी, एक-दूसरे के प्रति गुस्सा था और नफरत थी। कहना नहीं होगा कि पिछले दो वर्षों में मुशर्रफ का दिल काफी कुछ बदला है। इसका अहसास उस समय सबको हुआ जब दिल्ली के अशोका होटल में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह द्वारा मुर्शरफ के सम्मान में आयोजित भोज में खुद मुशर्रफ ने फरमाया कि उनका पूरा घर आज भारत का मुरीद हो चुका है।

इस बस यात्रा की सफलता से यही पता चलता है कि राजनीति ने भारत और पाकिस्तान को भले ही 'दूर के पड़ोसी' बना दिया हो, वे दरअसल एक ही परिवार और गंगा-जमुनी तहजीव के वारिस हैं। भारत से जानेवाले उन्नीस तथा पाकिस्तान से आनेवाले 30 यात्रियों के लिये यह यात्रा महज एक घर वापसी जैसी घटना ही नहीं, बल्कि एक ऐसी सच्चाई है जिसे राजनीतिक कुटिलता और विवशता सदैव अनदेखा करती या दबाती-छिपाती रही है। सच तो यह है कि फिल्म, संगीत और क्रिकेट से लेकर एटमबम तक दोनों देशों में एक-दूसरे की तरह होने और दिखने की मानसिकता काम कर रही है। आखिर तभी तो समाजवादी चिंतक डॉ. राममनोहर लोहिया ने भारत-पाक की इस बुनियादी समानता के मद्देनजर दोनों देशों के एक महासंघ की अवधारणा सामने रखी थी।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि आजादी से पहले भारत और पाकिस्तान दोनों एक ही देश के हिस्से थे। राजनीतिक हालात की वजह से हमें अँग्रेजों से स्वतंत्रता दो अलग-अलग देशों के रूप में मिली। भारत और पाकिस्तान के बँटवारे के दौरान यानी सन् 1947-1948 की अवधि में लाखों लोगों को खौफनाक दौर से गुजरना पड़ा। दोनों देशों के लोग, जिन्होंने उस भयंकर त्रासदी का सामना किया है, वे आज तक कटू अनुभव से उबर नहीं पाये हैं। पर अब इतने दिनों बाद लगता है कि भारत और पाकिस्तान के आपसी संबंध निकट भविष्य में बेहतर होने की उम्मीद है, क्योंकि एक तो दोनों देशों की जनता यह चाहती है और दूसरी तरफ सरकारें भी इस दबाव को समझ रही हैं। मुशर्रफ की हालिया भारत-यात्रा इसी का साक्षी है। वैसे भी हिंदी के वरिष्ठ लेखक एवं मुंबई के मुख्य आयकर आयुक्त वीरेन्द्र कुमार बरनवाल की नयी पुस्तक-'जिन्ना एक पुनर्दृष्टि' के शोधपरक तथ्य पर विश्वास किया जाय तो पाकिस्तान के कायदे-आजम मोहम्मद अली जिन्ना ने अपने जीवन के अंतिम दिनों में अपने चिकित्सक कर्नल डॉ. इलाही वक्श से कहा था-'डॉक्टर, पाकिस्तान मेरी जिंदगी की सबसे बड़ी भूल है।' पुस्तक के अनुसार 19 जनवरी 1940 को लंदन की टाइम एण्ड टाइम पत्रिका में 'हिंदुस्तान में दो राष्ट्र' शीर्षक अपने लेख में जिन्ना ने लिखा था-''हिंदुस्तान हिंदुओं और मुसलमानों दोनों की एक समान जन्मभूमि है।' इस दृष्टि से देखा जाय तो श्रीनगर-मुजफ्फराबाद बस सेवा के द्वारा सीमा के आर-पार लोगों की बेरोकटोक आवाजाही न केवल शांति की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है, बल्कि भारत-पाक के बीच एक स्थायी शांति स्थापित कर भारत-पाक-बांग्लादेश के महासंघ के लक्ष्य को प्राप्त करने की कुंजी है। आखिर मजहब के नाम पर दो दिलों के बीच सियासतदानों तथा कुछ मुट्ठी भर कट्टरपंथियों द्वारा कब तक नफरत की दीवार खड़ी की जाती रहेगी? जब बर्लिन की दीवार टूट गयी तो नियंत्रण-रेखा भी टूटेगी और आगाज अच्छा रहने की वजह से यह अमन का कारवाँ अंजाम तक पहुँचेगा, ऐसी उम्मीद हमें करनी चाहिये। शांति का रास्ता कठिन जरूर है मगर इसी रास्ते से मंजिल तक पहुँचा जा सकता है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का मार्क्सवादी संस्करण

❑ डॉ. ऋषभदेव शर्मा

महान प्रतिभाओं को जब वाद-विशेष के चौखटे में जड़ने की कोशिश की जाती है तो उनके साथ अन्याय की पूरी संभावना रहती है। आचार्य प्रवर रामचंद्र शुक्ल जैसे बहुआयामी प्रतिभा के धनी साहित्यकार के संबंध में यह खतरा और भी बढ़ जाता है। जब समसामयिक राजनैतिक परिवेश के दबाव में विगत कुछ वर्षों में शुक्ल जी के धर्म, मर्यादा और तुलसीदास के प्रति प्रेम के प्रकाश में उन्हें दक्षिण में भी हिंदूवादी सिद्ध किया जा रहा हो, तो उनकी इस अवमानना के बदले में शुक्ल जी के प्रति अपने प्रेम के प्रकाश में यदि आचार्य रामचंद्र शुक्ल साहित्य शोध संस्थान उनकी वामपंथी मार्क्सवादी छवि गढ़ने का प्रयास कर रहा है तो इसमें न तो कुछ अस्वाभाविक है और न असत्य। खतरा बस यही है कि कहीं आधुनिक आलोचना के खंड सत्य को आचार्य शुक्ल के पूर्ण सत्य पर लागू करते-करते हम एकांगिता के शिकार न हो जाएं! अस्तु...........।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल साहित्य शोध संस्थान की 12 वर्ष पुरानी पत्रिका 'नया मानदंड' का 31 वाँ अंक जनवरी-मार्च 2004 में प्रकाशित हुआ है। पत्रिका की प्रधान संपादक कुसुम चतुर्वेदी ने विस्तारपूर्वक इस अंक के पीछे सक्रिय तथ्याधारित मान्यताओं का उल्लेख करते हुए प्रतिपादित किया है कि आचार्य रामचंद्र शुक्ल मूलत: 'भौतिकवाद के भीतर जीवन विस्तार' देखने वाले विचारक हैं और डॉ. रामविलास शर्मा सरीखे आलोचकों ने उन्हें एक ही साँस में भौतिकवादी न मानने के साथ ही प्रगतिशीलों से अधिक वैज्ञानिक सिद्ध करने में वास्तव में उनके खिलाफ दाँव खेला है। हुआ न वही, बहसा-बहसी में पड़कर एक महान प्रतिभा को काट-छाँटकर चौखटे में जड दिया गया। 'विरूद्धों का सामंजस्य' साधनेवाले साहित्यकार के आत्मवाद और भौतिकवाद को अंतर्विरोध के बावजूद सह-अस्तित्व आखिर क्यों अस्वीकार्य ही होना चाहिए?

इस अंक के अतिथि संपादक हैं श्री विष्णुचंद्र शर्मा तथा अंक पूरी तरह "आचार्य शुक्ल के विकासवाद भौतिकवाद" पर केंद्रित है। अधिकतर सामग्री बहस की मुद्रा में तैनात है, यह अच्छी बात हो सकती है बशर्ते कि शास्त्रार्थ खुले दिमाग और लोकतांत्रिक नजरिये से किया जाए। इसमें संदेह नहीं कि 'चिंतामणि-4' की सामग्री के आलोक में शुक्ल जी की विचारधारा का पुनर्मूल्यांकन अत्यावश्यक है लेकिन इसके लिए डॉ. रामविलास शर्मा के पीछे लाठी लिए फिरना कहीं अक्ल के पीछे लाठी लिए फिरना न बन जाए। यद्यपि विद्वान समालोचकों की सदाशयता पर संदेह नहीं किया जा सकता तथापि यदि वैज्ञानिक चिंतन की विकास प्रक्रिया में शुक्ल जी किसी सोपान पर आत्मवादी-भाववादी भी हों, तो इसे अस्वीकार करने से उनके साथ वैसा ही अन्याय हो जाएगा जैसा उनके क्षात्रधर्म को भगवा सिद्ध करनेवालों ने किया है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल को बार-बार पढ़ने, विचारने और उनसे अपने वर्तमान के लिए मार्गदर्शन प्राप्त करने की आवश्यकता भी है और सदा संभावना भी। यही कारण है कि 'नया मानदंड' का यह अंक अपने मार्क्सवादी अड़ियलपन के बावजूद सोच के नए क्षितिजों का उद्‌घाटन करता है। अतिथि संपादक की राय में आचार्य शुक्ल की इतिहास दृष्टि को न पहचानने वाले आलोचकों ने 'खूब रचा है चक्रव्यूह अध्यात्मवाद का'। इस दृष्टि को पहचानते हुए डॉ. जयप्रकाश सिंह ने समझाया है कि इतिहास में रूचि के कारण ही आचार्य शुक्ल प्रथम श्रेणी के साहित्येतिहासकार बन सके। **डॉ. भगवान सिंह** 'आचार्य शुक्ल: धर्म और विकासवाद' में इस बात पर बल देते हैं कि मूलत: धर्मतंत्र विरोधी विकासवाद का उपयोग शुक्ल जी ने धर्म और उससे जुड़ी अवधारणाओं का पक्ष पोषण करने में किया। (अब समझाइए इन्हें!) 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल और विकासवाद' का द्वंद्वात्मक संबंध 'विश्वप्रपंच' की भूमिका में खोजते हैं और इस तथ्य पर आश्चर्य प्रकट करते हैं कि "जिस पुस्तक के छपने पर यूरोप में विचारों की दुनिया में लगभग भूकंप आ गया था उसके समर्थन में लिखी लंबी भूमिका पर हिंदी में कोई हलचल नहीं हुई। पुस्तक की समीक्षा भी शायद ही छपी हो।"

डॉ. शिवकुमार मिश्र 'भौतिकवादी आचार्य रामचंद्र शुक्ल' में अंतत: यह प्रतिपादित करते हैं कि "यदि विचारों की किसी कोटि में उन्हें याद करना बहुत जरूरी हो तो बजाय भाववादी या भौतिकवादी कोटि में रखने के, कहा जा सकता है कि आचार्य शुक्ल हमारे समय के सबसे बड़े लोकवादी समीक्षक हैं।" "आचार्य शुक्ल की भाषा" में **डॉ.विश्वनाथ त्रिपाठी** ने शुक्ल जी के अद्वैत का लक्ष्य ब्रह्म के स्थान पर लोकदल से तदाकारता को सिद्ध किया है। **डॉ. हरभजन** का निबंध 'क्रोचे का अभिव्यंजनावाद और आचार्य शुक्ल' अंतत: रहस्योद्‌पादन करता है कि 'शुक्लजी शुक्लजी हैं, क्रोचे।'(!) **राखी सेजल** ने चिंतामणि-4 के संदर्भ में "आचार्य शुक्ल की सामाजिक दृष्टि" के "नए आयाम" खोजने में सफलता प्राप्त की है। **डॉ. रामनिहाल गुंजन** ने "चिंतामणि चार की पुस्तक समीक्षा" प्रस्तुत की है और कहा है कि आज के घबराए हुए लेखकों की तुलना में शुक्ल जी की दृष्टि अलग और स्वच्छ है।

यह बहस आचार्य शुक्ल के सही और सटीक मूल्यांकन के लिए अलग और स्वच्छ दृष्टि की आवश्यकता सिद्ध करती है, इसमें संदेह नहीं।

लोकजीवन की सहचरी है भाषा

शुक्ल जी यदि लोकवादी चिंतक हैं तो उस चिंतन परंपरा को आगे बढ़ाने वाले आज के वे तमाम कलमकार हैं जो भाषा को लोकजीवन की सहचरी मानते हैं। 'रूपांबरा' के अक्टूबर 2004 में प्रकाशित 'हिंदी कार्यान्वयन विशेषांक-15' का पहला वाक्य ही है-'भाषा लोकजीवन की सहचरी है।' अब यह लोक क्या है? लोक भी सबका अपना-अपना है, जादू की टोपी सरीखा! संपादक स्वदेश भारती इसे लोकतंत्र में-जनता में-निहित मानते हैं

और हिंदी के प्रचार-प्रसार-कार्य के लिए सरकार की मुखापेक्षा को अनुचित सिद्ध करते हैं।

'रूपांबरा' का हर विशेषांक सचमुच विशेष होता है, जैसा कि यह अंक है। इस अंक को समकालीन साहित्य सम्मेलन के संस्थापक स्वर्गीय डॉ. महेंद्र कार्तिकेय की स्मृति को समर्पित किया गया है।

पत्रिका के 'कविता' खंड में रमेशचंद्र शाह, राजेंद्र जोशी, अखिलेश अंजुम, कीर्तिनारायण मिश्र तथा मृत्युंजय उपाध्याय हैं तो 'कथा' खंड की शोभा बढ़ाने के लिए प्रेमचंद के साथ सिद्धेश और स्वाति तिवारी को रखा गया है। 'साहित्यिक निबंध' कीर्तिनारायण मिश्र, डॉ. यशपाल वैद और सुरेंद्र तिवारी ने लिखे हैं जबकि डॉ. तारा परमार एवं डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी ने अध्यात्म-चर्चा की है। डॉ. रत्नाकर पांडेय और प्रो. कल्याणमल लोढ़ा के पत्र अंक की उपलब्धि है। अंडमान की कविताओं का अलग खंड भी ध्यान खींचता है।

भाषा पर केंद्रित होने के कारण 'भाषा-चिंतन' के लेखों का इस पत्रिका में विशेष स्थान है। कविता वाचक्नवी ने अपने निबंध 'राष्ट्र की अखंडता को चिरजीवी बनाती है हिंदी' में पते की बात कही है कि वर्तमान संदर्भ में केवल हिंदी ही विभिन्न भाषा समाजों के राष्ट्रीय एकीकरण के लिए कारगर भूमिका निभाने में समर्थ है। डॉ. नीरजा टंडन ने भूमंडलीकरण और वैश्वीकरण के संदर्भ मे हिंदी के स्वरूप-विकास पर जोर दिया है जबकि राजेंद्र पटोरिया ने विश्व हिंदी सम्मेलन के इतिहास को उलटा-पलटा है। डॉ. एम.शेषन ने भी 'हिंदी संस्कृति' में विचारणीय मुद्दे उठाए हैं। उनका कहना है कि बहुलतावादी इस देश को एकसूत्र में बांधनेवाली उदारचेतना हिंदी जाति और हिंदी भाषा की संस्कृति की विशेषता है क्योंकि उसे समस्त राष्ट्र की चिंता रहती है, केवल अपनी जाति के हितों की ही नहीं। अन्य लेखकों में नारायण सिंह, सुरेंद्र तिवारी, राजेंद्र पटोरिया, डॉ. मृत्यंजय उपाध्याय, डॉ. धूलचंद मानव, डॉ. शकुंतला मिश्र और आनंद नारायण शर्मा जैसे नाम सम्मिलित है।

अंत में, पोर्ट ब्लेयर के कवि बासु कुमार के शब्दों में इतना ही कि "मैं जानता हूँ/सुबह होगी मेरे लिए/सिंदूरी रंगत के सच/एक रास्ता होगा/जो फूलों की घाटी की ओर जाता है,/लेकिन अभी/फासला तय करना है,/निचोड़ना है/अपने हिस्से की रोशनी/अँधेरे में से।" विवेच्य अंक में प्रकाशित यह कवितांश 'हिंदी-कार्यान्वयन' की मंजिल तक पहुँचने से पहले तय करने को बचे लंबे फासले के परिप्रेक्ष्य में पर्याप्त सटीक प्रतीत होती है। 'रूपांबरा' इसी फासले को पाटने और अंधेरे में से अपने हिस्से की रोशनी को निचोड़ने का सार्थक प्रयास है।

संपर्क: रीडर, दक्षिण भारत
हिंदी प्रचार सभा, नामपल्ली,
स्टेशन रोड, हैदराबाद

MAHESH HOMOEPATHIC
LABORATORY
&
GERMAN HOMOEO STORES
Saket plaza, Jamal Road,
Patna-800001
Ph:(0612) 2238292 (O) 2674041 (R)
Offers a wide range of mother Tinchers,
Dillutin Biochemic Tablet patents, Globels
Dr. Mahesh Prasad — Dr. Arun kumar
D.M.S. (Patna) — D.H.M.S (Patna)
Specialist in chronic Diseases

कहानी

धर्म–पिता दारोगा

❑ कृष्ण कुमार राय

उस दिन अचानक जब जवार का ही कुख्यात बाहुबली शमशेर सिंह दल–बल और हल–बैल के साथ त्रिवेणी सिंह की पाँच बीघा जमीन के चक पर कब्जा करने के लिये चढ़ आया तो सुनते ही उसके होश उड़ गये। उसे कुछ समझ में नहीं आया कि आखिर माजरा क्या है। डरा–सहमा जब वह अपने चक की मेंड़ के पास पहुँचा तो वहाँ का तूफानी मंजर देखकर उसके पैरों तले से धरती मानो खिसक गई। फिर भी डरता–डरता वह ठाकुर साहब के सामने पहुँचा और हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाता हुआ बोला, "ठकुराई भैया, हमने आपका, क्या बिगाड़ा है जो एक अबरें गरीब बिरादर को सता रहे हो। इसी खेत से तो बाल–बच्चों का गुजर होता है और कोई सहारा नहीं। हम तो बरबाद हो जाएँगे भैया, बच्चे भूखों मर जाएँगे। हाथ जोड़कर विनती करता हूँ ठकुराई भैया, हमारे ऊपर दया करो।"

शमशेर सिंह ने आँखें तरेरते हुए जरा कड़क आवाज में जवाब दिया, "कैसा सताना तिरबेनी? तुम कैसी बातें करते हो? इस जमीन का तो मैं बाजाब्ता बैनामा करा चुका हूँ। तुम्हारा इससे क्या लेना–देना! बच्चे पैदा किया है तो मेहनत–मजूरी करके उनका पेट पालो।"

"आप किस बैनामे की बात कर रहे हैं ठकुराई भैया? मैंने तो कभी कोई बैनामा नहीं किया है।"

"जबानदराजी न करो तिरबेनी, नहीं तो नतीजा बहुत बुरा होगा। जानते हो किससे बातें कर रहे हो? अरे, जो कुछ पूछना है जाकर अपने भाई–पट्टीदारों से पूछो जिन्होंने मेरे हक में इस जमीन का बैनामा किया है। मैं तो उन्हें पूरे पैसे दे चुका हूँ। खेत अब हमारा है और कोई भी मुझे इस पर कब्जा करने से नहीं रोक सकता है।

शमशेर सिंह का उग्र तेवर देखकर त्रिवेणी सिंह की सिट्टी–पिट्टी गुम हो गई। एक शब्द भी आगे बोलने का साहस नहीं हुआ। बात बढ़ाने का अंजाम वह खूब समझता था। इस समय जान बचाकर उल्टे पैरों घर लौट जाने में ही उसने अपना भला समझा। घर पहुँचते–पहुँचते उसके पैर लड़खड़ाने लगे और आँखों के आगे अँधेरा छा गया। दालान में पड़ी निखहरी खटिया पर वह निढाल ढह गया। उसका कोई अपना सगा भाई तो था नहीं, सहारा देने वाला कोई दूसरा असरदार रिश्तेदार

भी न था। चचेरे भाई–पट्टीदार तो एक जमाने से बैरी बने बैठे थे। सबकी कुदीठि उसकी पाँच बीघा जमीन पर लगी हुई थी और किसी भी जोड़–तोड़ से वे उसे हड़पने की फिराक में थे। सबने एकजुट होकर उसका जीना मुहाल कर रखा था। आये दिन झगड़े का एक न एक बहाना ढूँढ़कर उसे परेशान करते रहते थे। इसी चिंता में घुल–घुल कर उसकी घरवाली तीन साल पहले दो–दो जवान हो चली बेटियों को बेसहारा छोड़कर चल बसी थी। अपनी इस दारुण दशा से दुःखी त्रिवेणी अब लगभग टूट चुका था। उसकी व्यथा सुनने वाला कोई नहीं था। चकबंदी प्रक्रिया के दौरान अपना चक बचाने की जुगत में उसने अपनी सारी जमा–पूँजी चकबंदी अधिकारी को भेंट कर दी थी। पिछले साल दिवंगत पत्नी के मायके से मिले गहने बेचकर और कुछ करजा काढ़कर उसने किसी तरह बड़की बिटिया के हाथ पीले जरूर कर दिये थे, लेकिन अगले माह होनेवाली गौने की रस्म–अदाई अभी बाकी थी और उसी के साथ लड़के के बाप से किये गये बकाये वादे पूरा करना भी। किसी तरह रो–धोकर अपनी आन रखने की फिक्र में दिन–दिन गलते जा रहे त्रिवेणी पर इसी बीच अचानक इस नई विपदा की गाज तड़ित बनकर आ गिरी थी।

घंटों बाद जब त्रिवेणी चैतन्य हुआ तो चक की चिंता उसे फिर सताने लगी। जब कोई और रास्ता नहीं सूझा तो वह भागता हुआ अपने नये समधियाने जा पहुँचा। समधी भोला सिंह मिडिल स्कूल में हेड–मास्टर थे। उनके एक चचेरे भाई मोती सिंह माल के जाने–माने वकील थे। वकालते खूब चलती थी। त्रिवेणी सिंह का दुखड़ा सुनकर भोला सिंह उन्हें अपने साथ लेकर भाई मोती सिंह के पास गये और उन्हें सारी दास्तान कह सुनाई। वकील साहब कचहरी जाने के लिये तैयार थे। अपने चचेरे भाई और उनके समधी को भी वह अपने साथ ही कचहरी ले गये। वहाँ रजिस्ट्री दफ्तर के अभिलेखों का मुआइना करने पर यह पता चला कि त्रिवेणी सिंह के पट्टीधरों ने ही एक मुखतारनामे के आधार पर उसकी भूमि का बैनामा शमशेर सिंह के नाम कर दिया था। त्रिवेणी सिंह ने वकील साहब को बतलाया कि उन्होंने कभी किसी के हक में कोई मुखतारनामा नहीं लिखा। जब उन्हें तथाकथित मुखतारनामे की छाया प्रति दिखलाई गई तो उन्होंने दस्तावेज पर अपने हस्ताक्षर को फर्जी बतलाया। उनकी उँगलियों की छाप भी दस्तावेज पर नहीं थी। वकील साहब को यह समझते देर न लगी कि जरूर रजिस्ट्री कार्यालय के अधिकारियों की मिली भगत से इस फर्जी मुखतारनामे की रजिस्ट्री करा ली गई है और बाद को उसी नकली दस्तावेज के बिना पर त्रिवेणी सिंह के पट्टीदारों ने जमीन का बैनामा शमशेर सिंह सरीखे शोरापुश्त व्यक्ति के हक में कर दिया है ताकि वह अपने बाहुबल के बूते पर आसानी से चक पर कब्जा कर सके। स्थिति स्पष्ट होते ही वकील साहब ने त्रिवेणी सिंह को निर्देश दिया कि वह अगले दिन जमीन के स्वामित्व से संबंधित अपने सारे मूल कागजात लेकर उनके पास आवें।

दूसरे दिन त्रिवेणी सिंह की जमीन के कागजात देखने के बाद वकील साहब ने दो दिन के अंदर न केवल उस फर्जी मुखतारनामे और बैनामे की मंसूखी के लिये मुकदमा दाखिल कर दिया बल्कि त्रिवेणी की भू–संपत्ति

को गलत ढंग से हड़पने की साजिश रचने और उसे क्षति पहुँचाने के लिये शमशेर सिंह के खिलाफ फौजदारी अदालत में भी नालिश दाग दी। जब शमशेर सिंह को इन मुकदमों की नोटिस मिली तो वह आपे से बाहर हो उठा और उसने त्रिवेणी सिंह को उसकी गुस्ताखी के लिये सबक सिखाने की ठान ली। पहली ही पेशी पर जब त्रिवेणी सिंह अपने मुकदमें की पैरवी करके जिला कचहरी से अपने गाँव लौट रहे थे, सुनियोजित ढंग से तमंचे की नोक पर बीच रास्ते से ही उनका दु:साहसिक अपहरण कर लिया गया और अगले दिन शाम को गोलियों से छलनी उनकी गंधाती लाश गाँ से दूर एक तालाब में उतराई मिली। इस लोमहर्षक घटना से जहाँ आस-पास का सारा इलाका दहल गया, वहीं इस जघन्य हत्याकांड के षडयंत्र में शामिल त्रिवेणी सिंह के पट्टीदार रातो-रात गाँव छोड़कर फरार हो गये। त्रिवेणी सिंह के समधी को इस अप्रत्याशित घटना से गहरा सदमा पहुँचा। उन्होंने तत्काल इस आपराधिक घटना की रिपोर्ट थाने पर दर्ज करायी जिसमें न केवल त्रिवेणी सिंह के पट्टीदारों को बल्कि शमशेर सिंह को भी अपराधी के रूप में नामजद किया गया था। जिले के पुलिस कप्तान के समक्ष एक आवेदन-पत्र प्रस्तुत कर त्रिवेणी सिंह की अनाथ हो गई दोनों बेटियों को उचित संरक्षण प्रदान करने की भी याचना की गई।

उक्त सारी कार्यवाही की त्वरित प्रतिक्रिया हुई। अपनी ईमानदारी, कठोरता और अक्खड़ स्वभाव के लिये मशहूर क्षेत्र के थानेदार महीप सिंह ऊपर के अधिकारियों के दबाव के चलते घटना के तीसरे ही दिन मामले की तफशीश के लिये स्वयं मृतक त्रिवेणी सिंह के दरवाजे पर जा पहुँचे। त्रिवेणी सिंह का अपना कोई सगा न होने के कारण दूर-दराज के रिश्ते के एक नाबालिग भतीजे से उन्हें मुखाग्नि दिलवाई गई थी, किंतु अन्त्येंष्टि क्रिया के वास्तविक कर्ता-धर्ता तो उनके समधी भोला सिंह थे। दरवाजे पर नीम के पेड़ तले एक चौकी पर मूड़ मुड़ाये त्रिवेणी का तथाकथित भतीजा उदास बैठा हुआ था और उसके समीप एक खटिया पर गमगीन मुद्रा में बैठे हुए थे त्रिवेणी सिंह के समधी भोला सिंह। द्वार पर ससुर की उपस्थिति के कारण त्रिवेणी सिंह की बड़ी बेटी किरण तो घर के अंदर पड़ी अपनी फूटी किस्मत पर आँसू बहा रही थी, किंतु छोटी बिटिया आरती बाहरी ड्योढ़ी के पास गुमसुम बैठी सूनी बाँखों से आने-जाने वालों को कातर दृष्टि से निहार रही थी। दारोगा जी को दो सिपाहियों के साथ घर की ओर आते देखकर भोला सिंह ने आगे बढ़कर अदब के साथ उनका अभिवादन किया। दारोगा जी के पूछने पर भोला सिंह घटना के तथ्यों की जानकारी उन्हें देने लगे। इसी बीच अचानक आरती भी दौड़ती हुई दारोगा जी के सामने आ पहुँची और उनके पैरों से लिपटकर बिलखने लगी।

शोक-विह्वल आरती के करुण क्रंदन में भोला सिंह की बातें जैसे खो गई। दारोगा जी के पैरों से लिपटी आरती आर्तनाद करती हुई उनसे विनती कर रही थी, "हम दोनों अनाथ बहनों को भी गोली मार दीजिये दारोगा साहब नहीं तो बाबू के हत्यारे हमको बेआबरू करके छोड़ेंगे। क्रूर हत्यारों ने हमलोगों का सबकुछ लूट लिया है। अब कौन हमको खाना देगा? दीदी का गौना कौन करेगा? अब हम जीकर क्या करेंगे! हमें भी मौत की नींद सुलाकर एक ही बार में हमारे दु:खों का अंत कर दीजिये बाबूजी।"

आरती के करुण आर्तनाद ने थानेदार महीप सिंह के अंतर को ऐसा झकझोरा कि उनके भीतर सोया सहृदय इंसान सहसा जाग उठा। उनकी भावनाओं का बाँध टूट गया और उनकी खाकी वरदी के कवच के भीतर ढँका पाषाण हृदय मोम की तरह पिघल गया। उनकी आँखों से ममता के आँसू छलक पड़े और उन्होंने तत्काल आरती को उठाकर प्यार से गले लगा लिया। फिर उसके सिर पर हाथ फेरते हुए अवरूद्ध कंठ से बोले, "बेटी, धैर्य रखो। तुमलोग अपने को अनाथ न समझो। मेरे अंदर वह दैवी शक्ति तो नहीं कि तुम्हारे पिता को फिर से जीवित कर सकूँ, किंतु ईश्वर को साक्षी मानकर मैं यह शपथ लेता हूँ कि तुम दोनों बहनों के धर्मपिता का दायित्व आज से मैं स्वयं निभाऊँगा। मेरे जीवित रहते अब कोई भी व्यक्ति तुम्हारा बाल बाँका करने की जुर्रत नहीं कर सकता। तुम दोनों के सम्मानजनक, जीवन-यापन और सुरक्षा की संपूर्ण जिम्मेदारी अब मेरी होगी। मैं यह भी वादा करता हूँ कि यदि सात दिन के अंदर तुम्हारे पिता के हत्यारों और षड्यंत्रकारियों को मैंने जेल के अंदर नहीं पहुँचा दिया तो थानेदारी छोड़ दूँगा। मैं एक-एक हत्यारे को उसकी करनी की माकूल सजा दिलवाकर ही चैन की नींद सोऊँगा। अब तुम दोनों बहनें बिल्कुल निर्भय होकर रहो और अपने दिवंगत पिता की आत्मा की शांति के लिये ईश्वर से प्रार्थना करो। तुम्हें न खाने की चिंता करनी है और न अपनी दीदी के गौने की रस्म-अदाई की। तुम्हारे पिता नहीं रहे तो क्या हुआ, तुम्हारे धर्मपिता के रूप में अब सारा दायित्व मैं निभाऊँगा बेटी।"

फिर हेड मास्टर भोला सिंह की तरफ मुखातिब होकर दारोगा जी बोले, "मास्टर साहब, अब आप मुकदमों की चिंता बिल्कुल छोड़ दीजिये, उसे अंजाम तक पहुँचाने की जिम्मेदारी मेरी है। आप देखते रहिये, सात दिन के अंदर नतीजा आपके सामने होगा। हाँ, आपसे मेरा एक और निवेदन है। श्राद्ध-कर्म संपन्न होने के बाद निर्धारित तिथि पर ही आप बेटी के गौने की रस्म पूरी करने के लिये बारात लेकर इस दरवाजे पर आवें। मैं स्वयं इन बेटियों के धर्म-पिता के रूप में आप सबका स्वागत करूँगा और सारा कार्य उसी उत्साह और उमंग के साथ संपन्न करूँगा जिस तरह स्वर्गीय त्रिवेणी सिंह जी स्वयं करते।"

दारोगा जी के आत्मीय व्यवहार, उनकी सहृदयता और सहानुभूतिपूर्ण बातों ने भोला सिंह को इतना भावुक बना दिया कि उनकी आँखें डबडबा गई और प्रेमाश्रु रोके न रुक सके। वह भर्राये कंठ से बोले, "दारोगा जी, आपकी सदाशयता और भलमनसाहत के आगे मैं विनम्रतापूर्वक सिर झुकाता हूँ। आप जैसा नेक इंसान, विशेषकर पुलिस महकमें में, चिराग लेकर ढूँढने से भी न मिलेगा। आपको यह सूचित करते हुए मुझे खुशी हो रही है कि अब दिवंगत भाई त्रिवेणी सिंह के दरवाजे पर मैं एक नहीं दो दूल्हों के साथ बारात लेकर आऊँगा। उनकी दूसरी पुत्री आरती को भी मैंने अपनी छोटी बहू बनाने का संकल्प कर लिया है। मेरे छोटे बेटे का चयन नायब तहसीलदार

के पद पर हो चुका है और इसी माह में उसकी नियुक्ति का आदेश आनेवाला है। उसका विवाह मैंने आरती बेटी के साथ करने का निर्णय किया है ताकि दोनों बहनें एक ही घर-परिवार में सुख-शांति के साथ रह सकें। इतना ही नहीं, बारात के स्वागत-सत्कार में होनेवाला सारा व्यय भी मैं स्वयं वहन करूँगा। मुझे केवल दोनों बहुएँ चाहिए, और कुछ नहीं। ऐसी संस्कार-संपन्न, शालीन और सुयोग्य बेटियों को अपनी बहू के रूप में पाकर मैं कृतकृत्य हो जाऊँगा। इस शुभ कार्य में आप जैसे सहृदय और उदारमना व्यक्ति का भी सहयोग और संरक्षण प्राप्त कर मुझे जो तृप्ति मिलेगी उसे मैं शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता।"

भोला सिंह की दयानतदारी की दाद देते हुए दारोगा जी ने आगे बढ़कर उनकी पीठ थपथपायी और उन्हें गले से लगा लिया। उसी समय उन्होंने त्रिवेणी सिंह की बड़ी बेटी किरण को भी अपने पास बुलवाया और दोनों बेटियों को अँकवार में लेते हुए बोले, "आज से मैं तुम दोनों का धर्म-पिता हूँ बेटी। तुम्हारे पिता के सारे अधूरे कार्यों को संपन्न करना अब मेरी जिम्मेदारी है। तुम दोनों बहनें बिल्कुल निर्भय होकर अपने पिता की पुण्यात्मा की शांति के लिये प्रार्थना करती रहो, शेष सारा कार्य मेरे ऊपर छोड़ दो।"

दोनों बहनों ने भाव-विह्वल होकर दारोगा जी के चरणों पर माथा टेक दिया। उनके अंदर आज मानों एक नई आस और नया विश्वास जाग उठा था।

दारोगा जी ने पास खड़े हेड मास्टर भोला सिंह को संबोधित करते हुए कहा, "मास्टर जी, धर्म-पिता के नाते दोनों पुत्रियों का कन्या-दान करना और उनके अखण्ड सुहाग के प्रतीक के रूप में उन्हें आवश्यक वस्त्राभूषण भेंट करना मेरा पितृ-धर्म है। मैं भले ही दहेज के रूप में आपको अधिक कुछ न दे सकूँ, किंतु बारातियों का स्वागत-सत्कार और बेटियों को आशीर्वाद देने का दायित्व मैं स्वयं निभाऊँगा। भगवान ने मुझे कोई संतान नहीं दिया है। मैं इसे अपना परम सौभाग्य मानता हूँ कि आज मुझे इन दो अनाथ बेटियों का धर्मपिता बनकर अपना पितृ-धर्म निभाने का सुअवसर प्राप्त हो रहा है। अब आपलोग बिल्कुल निश्चिंत होकर बैठिये। मैं आज ही से कमर कसकर अपना अगला दायित्व निभाने के लिये अपनी सारी शक्ति और साधन झोंक दूँगा।"

भोला सिंह ने नत मस्तक होकर विनम्रतापूर्वक कहा, "दारोगा जी, मैं आपके अधिकार-क्षेत्र में हस्तक्षेप करने का दुस्साहस तो नहीं कर सकता, किंतु इतना अवश्य स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मेरी कोई अपेक्षा नहीं। मेरी तो बस एक ही आकांक्षा है और वह है इन दोनों कन्याओं को अपनी पुत्र-वधू के रूप में अंगीकार करना। आप जिस तरह गौना और विवाह समारोह आयोजित करना चाहें वह मुझे सहर्ष स्वीकार होगा। इस शुभ कार्य में आपको मेरा पूर्ण सहयोग मिलेगा।"

दारोगा जी ने दोनों पुत्रियों के सिर पर हाथ रखकर उन्हें आशीर्वाद दिया और भोला सिंह को हार्दिक बधाई दी। बेटियों की सुरक्षा की दृष्टि से उन्होंने एक सिपाही को कुछ रिदायत के साथ वहीं छोड़ दिया और दूसरे को साथ लेकर थाने की ओर रवाना हो गये। उनके सामने अब पहली सबसे बड़ी चुनौती थी हत्या के मामले की तफ़तीश को तुरंत गति देकर उसे अंजाम तक पहुँचाना और अपराधियों को जल्द से जल्द धर दबोचना। थाने लौटकर वह जी-जान से इस कार्य में जुट गये और दिन-रात एक करके तीन दिन के अंदर न केवल हत्यारों और उस षडयंत्र में शामिल आरोपियों के ठौर-ठिकाने का पूरा पता लगा लिया बल्कि उनके विरूद्ध पर्याप्त और ठोस साक्ष्य भी एकत्र कर लिये। इस मामले की तफ़तीश को उन्होंने अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था। नतीजा यह हुआ कि एक सप्ताह की चुनौती की अवधि समाप्त होने से पहले ही उन्होंने न, केवल वास्तविक हत्यारे शमशेर सिंह और उसके सहयोगी के हाथों में हथकड़ियाँ डालकर उन्हें जेल के भीतर पहुँचा दिया, बल्कि हत्या की साजिश रचनेवाले त्रिवेणी सिंह के दोनों पट्टीदारों को भी धर दबोचने में कामयाब हो गये और उन्हें भी जेल की हवा खिला दी। इतना काम पूरा करने के बाद दारोगा जी ने कुछ राहत की साँस ली क्योंकि उन्हें इस बात का पूरा यकीन हो गया कि जो ठोस सबूत उनके हाथ लगे हैं उनके आधार पर सभी हत्यारों को समुचित दंड मिलने में कोई संदेह नहीं रह गया है।

दारोगा जी ने अब अपना सारा ध्यान त्रिवेणी सिंह की दोनों बेटियों की शादी और गौने की तरफ केन्द्रित करना शुरू कर दिया। उनकी कर्मठता और पुनीत कार्यों की चर्चा आस-पास के क्षेत्र में घर-घर होने लगी थी। दारोगा जी की पहल पर देखते ही देखते इलाके के संपन्न और प्रभावशाली व्यक्तियों की ओर से आर्थिक सहयोग तथा उपहार सामग्रियों की झड़ी लग गई। विवाह और गौने की शुभ-तिथि आते-आते लाखों की नकद सहयोग राशि प्राप्त हो चुकी थी और उपहार सामग्रियों से घर भर गया था। निर्धारित तिथि पर दिवंगत त्रिवेणी सिंह के दरवाजे पर हेड-मास्टर भोला सिंह बड़ी धूम-धाम के साथ बारात लेकर आये। इस अवसर पर कन्या-पक्ष के मकान को सुरुचिपूर्ण ढंग से सजाया गया था। बारातियों को टिकाने और उनकी सुख-सुविधा की उत्कृष्ट व्यवस्था की गई थी। घर छोटा होने के कारण भव्य विवाह-मंडप बाहर बनाया गया था। घरातियों का दायित्व निभाने में न केवल समूचा थाना परिवार जी-जान से जुटा हुआ था, बल्कि पास-पड़ोस के कुछ उत्साही युवक भी इस पुनीत कार्य में बड़ी निष्ठा और लगन के साथ हाथ बँटा रहे थे। बारात के स्वागत-सत्कार और भोज का इतना अच्छा इंतजाम किया गया था कि देखते ही बनता था। कन्या-दान देने के लिये स्वयं दारोगा जी तैयार बैठे थे। उन्होंने पीत वस्त्र धारण कर रखा था और सुबह से ही व्रत भी रखा था। उनकी धर्म-पत्नी भी इस शुभ अवसर पर पति का साथ देने के लिये उपस्थित थीं और उन्होंने भी निराजल व्रत रखा था। गाँव के प्रधान दरवाजे पर सुबह से ही डटे हुए थे और सारे इंतजाम की बागडोर उन्होंने स्वयं संभाल रखी थी। त्रिवेणी सिंह की निर्मम हत्या के बाद जिस दरवाजे पर अभी कुछ दिनों पहले अचानक मरघटी सन्नाटा छा गया था और उनकी दो-दो सयानी बेटियों को सहारा देनेवाला कोई नहीं बचा था, उसी दरवाजे पर आज इतना भव्य समारोह भी आयोजित हो सकता है, यह लोगों की कल्पना से परे था, किंतु इसे चरितार्थ कर दिखाया था मानवीय संवेदनाओं से ओत-प्रोत एक सहृदय दारोगा ने। इस समूचे घटनाक्रम ने यह सिद्ध कर दिया था कि हर व्यक्ति के हृदय में कहीं न कहीं स्नेह, सहानुभूति, करुणा और ममत्व का स्त्रोत छिपा होता है, भले ही वह खाकी वरदीधारी पुलिस जैसे संवेदनहीन संगठन का सदस्य क्यों न हो। उचित अवसर पर करुणा का वही उत्स फूट पड़ता है और बेसहारों का संबल बन जाता है।

संपर्कः एस. 2/51-ए., अर्दली बाजार,
अधिकारी हॉस्टल के समीप
वाराणसी-221002 (उ.प्र.)

कहानी

सरला डोम

❑ हृषीकेश पाठक

जब भी कुछ लिखने बैठता हूँ, रुक जाती है मेरी लेखनी........पटरी पर दौड़ रही अचानक रुक गयी ट्रेन की तरह........शायद लाल सिग्नल की तरह समाज में रोज ही उभर रहे नए-नए दर्द और मूक होती संवेदनाओं से खिन्न होकर। कहाँ तक लिख पाएगी मेरी लेखनी..........किन-किन बातों को लिखेगी.... ....किन-किन को छोड़ेगी? डर लगता है कि पता नहीं कब चमार, जाटव कहलाने लगे और अस्सी वर्षों बाद भी प्रेमचंद को दलित-विरोधी होने का दंश झेलना पड़े? उनकी कृति 'रंगभूमि' की प्रतियों को जलना पड़े। भला बताईए...........ऐसा भी होता है कि रंगभूमि का सूरदास जिस रूप में मारा जाता है, ठीक उसी तरह वर्षों बाद महात्मा गाँधी की हत्या हो जाती है।

जब प्रेमचंद में इतनी दूर दृष्टि थी ही तो क्यों नहीं उसी समय उन्होंने 'चमार' के बदले 'जाटव' शब्द का प्रयोग किया? ऐसी गलती तो महात्मा गाँधी जी ने भी की थी। वरना 'दलितों' को 'हरिजन' कहने मात्र से आज मायावती से प्रताड़ित नहीं होना पड़ता। समाज कैसे चुप्पी साध लेता है? कही हल्ला-गुल्ला नहीं........कोई जुबिंश तक नहीं. ......कौन नहीं जानता है कि गाँधी जी ने दलितों की अस्पृश्ता से मुक्ति दिलाने के लिए क्या कुछ नहीं किया था? इसके बावजूद उनकी समाधि, जूती की मार सहती रही और उनके शिष्य सत्ता की गलबहियों में खोए रहे। समय ने तो हरिजन शब्द को भी असंसदीय करार कर दिया है।

अब क्या लिखूं?........क्या न लिखूं. ....? घोर असमंजश की घड़ी........पता नहीं कौन शब्द कब अप्रासंगिक और असंसदीय हो जाएगा........जब गाँधी जी और प्रेमचंद नहीं भांप सके, तो भला मेरी क्या औकात?

अब कैसे लिखूं अपने गाँव से बाहर बसी उस "डोम-बस्ती" के बारे में? आज भी डोम-बस्ती मेरे गाँव के दक्षिण में है, जो वर्षों से है। शायद गाँव के दक्षिण दिशा में ही उनको बसने की अनुमति मिलती थी। आज भी वह बस्ती उसी तरह है। हां, थोड़ा-बहुत परिवर्तन अवश्य हुआ है। पहले छोटी-छोटी गलीज भरी झोपड़ियों में मानव और सुअर एक साथ सांस लेते थे.......आज इंदिरा आवास के नाम पर खाना पूर्ति हो गयी है। अब पक्के मकानों में सुअर के साथ मानव हैं। उसी बस्ती में रहता है-सरला डोम।

अब सरला डोम की बातें मैं कैसे लिखूं? फिर प्रश्न उठ जाएगा-स्वानुभूति और

सहानुभूति का। सरला डोम साहित्यकार नहीं हैं. ....साहित्यकार क्या पढ़ा-लिखा भी नहीं..... ..पढ़ा-लिखा क्या साक्षर भी नहीं। तो वह कैसे लिख पाएगा अपनी व्यथा? तो फिर उसकी स्वानुभूति तो यूं ही गल-पच कर रह जाएगी। मर जाएगा सरला और बह-बिला जाएगा सब कुछ। फिर कैसे बात सामने आएगी कि राम विलास पासवान की बुलंदी की नींव में, सरला की आह के लिए कोई जगह रह गयी है या नहीं? या फिर सामाजिक समरसता की ढोंग में आजादी के संतावन वर्षों बाद भी क्या स्थिति है गाँवों के दक्षिण में बसे भंगियों की उस जमात की, जहाँ वे आज भी अपना पुश्तैनी धंधा करने में मशगूल हैं? मसलन, मरने पर आग देना... ....मरे का कफन बटोरना.......अर्थी के बांस लाना.......जूठे फेंके पतलों से जूठन बटोरकर पेट पालना.......दया की भीख के लिए बाबू लोगों के दरवाजे पर घंटों बैठकर उनकी जय-जयकार करते रहना आदि।

सरला के दैनिक कार्यक्रम में कुछ भी बदलाव नहीं हुआ है। उसकी मान्यता और परंपरा यथावत् है। आज भी सरला........गाँव के बाबू लोगों के मरने पर श्मशान घाट पर आग देने के लिए जाता है........उस आग के लिए वह जितना मांगता है, अगर मिल जाय तो राजा ही हो जाय........मगर मिलता कहां है... ......? वही दस-बीस रुपये........बहुत रिरिया तो पचास रुपये और मरे की धोती, चादर, गमछा. ....अर्थी के बांस.....कफन....और क्या? ..... फिर आग देने के बाद सरला गंगा में स्नान भी तो नहीं कर पाता....आखिर कैसे कर पाता स्नान......मुंह में आग देने के बाद बाबू लोग जहां नहाएंगे......वहां भला सरला कैसे नहाएगा? कहीं वह नहा लेता होगा....चुप्पे चोरी....अलोता में। सबको दिखाकर उसको नहाने की हिम्मत कहां? लालू प्रसाद के चिल्लाने से क्या होता है? पंद्रह वर्षों से राजा हैं। इतने में उनका फुलवरिया गाँव, दिल्ली का गुंबज जरूर छूने लगा है, परंतु सरला?....सरला को तो उसी तरह बचपन से लेकर आज तक। आरक्षण का भी लाभ कहां मिल पाया है? जिस प्रकार स्वतंत्रता की प्रस्फुटित रश्मियां आज तक गाँवों की झोपड़ियों में नहीं पहुँच सकी हैं, उसी प्रकार क्रीमी लेयर वालों के उपभोग से हटकर आरक्षण का लाभ अन्य को नहीं मिल सका है। सरला जैसों के बेटों के लिए तो अभी भी दिल्ली बहुत दूर है.....बहुत दूर। आरक्षण को गोली मारिए......, वोट भी कहां देने जाता है सरला और उसका परिवार? सरला कितनी मासूमियत से कहता है-"बाप कीरिए......... आज तक भोट नहीं दिया......कईसे भोट होता है?"

"मगर तू आज तक वोट क्यों नहीं दिया?"

"का बोलते हैं सरकार.......भला जहां बाबू लोग जाता है, ऊहां सरला कईसे जाएगा?"

सर्व शिक्षा अभियान और गैर सरकारी संगठनों के साक्षरता-अभियान पर करारा थप्पड़ तब लगता है, जब सरला के लड़के पंद्रह से बाईस वर्षों के होते हुए भी, किसी स्कूल का मुंह नहीं देख सके हैं। "अपने बच्चों को स्कूल क्यों नहीं भेजते हो?" इसकूल-फिस्कूल भेज के का होगा? सुअरिया चरावेगा तो बखत पर

दू पईसा अमदनी होगा......इसकूलवा में का मिलेगा? आ....हमरो दारू, तमाखू का पईसा पढ़ईए में लग जाएगा।......हमरो लईकवा ओही में नुँ पढ़ने जावेगा, जवना में मालिक लोगन के लईका पढ़ता है? ना मालिक! अईसन नहीं होगा। कबहूं बापे-दादे अईसन हुआ है?" वह हर किसी को मालिक ही कहता है....गाँव में रहनेवाला हर कोई उसके लिए मालिक ही है।

आज सरला के घर खुशहाली है। घर का चूल्हा भी ठंढा है। आज उसे चूल्हा जलाने की क्या जरूरत है? आज तो गाँव के बड़े मालिक चौधरी साहब की माँ का श्राद्ध है।

"उस दिन समसान घाट पर आग खातिर मालिक ने अपना मने डेढ़ सई रुपिया दे दिया था। मांगा भी नहीं। थोड़ा सा आऊर जोर लगाता तो आऊर मिल जाता। आज अफसोस होता है। खैर ओकर कोर-कसर आज श्राद्ध में निकाल लूंगा।

आज तो जो भी माँगूगा, मालिक दे ही देंगे। काहे नहीं आज एक बीगहा खेते मांग लूं? मन अकुता गया है ससुरा एके काम करते-करते। हमरो मन करता है खेती कर के अपने हिसाब से जीने का।

बाकीर का करें हम ससुरा डोम जो ठहरे, कबनो बिसवासे नहीं करता है कि हम खेतीयों कर सकते हैं। बाकीर अब की मालिक से मांगेगे, मालिक जरूर देंगे।"....सोचता हुआ सरला अपने दोनों बेटों और पत्नी को लेकर चला जा रहा था।

तभी उसके सामने याददास्त की आलमारी से कोई दस्तावेज सामने आ गया। सरला हँसने लगा-"अब उस दिन चौधरी साहब चलकर मेरे घर आए थे, जब हम पूरे गाँव को सई रुपिया में पास वाला गाँव के डोम को बेच दिया था। बेचता क्यों नहीं? बिटिया के बियाह में खरचा जो करना था। मेरे पास जो पईसा था, उससे इंतजाम नहीं हो पाता था।

एक ड्राम शराब.....पांच सुअरिया का मांस.....पूड़ी-कचौरी....इसमें खरचा तो लगता ही था....सो सई रुपिया में बेच दिया था। कितना ठाट से बियाह हुआ था.....इलाका का डोम सब जुटा था.....रात भर पीना-खाना चलता रहा.... सभी मस्ती में....नाचते-गाते और मार-काट करते..... डाम कच्च होता रहा....तब कहीं भिनुसारा में शादी हुआ था।

बिटिया का दुलहा बांका जवान है। देखकर मन खुश हो जाता है। शहरिया में दऊरी-सुप का दोकान लगा लिया है....बिटिया राज कर रही है....हमरे जईसा ऊ सब केहू के दरवाजा पर खाने नहीं जाता है.....न समसाने घाट जाता है।

उस दिन गाँव बेचना सुनकर मालिक अचरज में पड़ गए थे....आ.....सई के बदले सवा सई रुपिया देके उस डोम को गाँव से खेदकर फिर मुझे बुला लिए थे। मालिक बड़े दयालु हैं। सैकड़ों बीगहा खेत है....ओह में से

एक बीगहा दे ही देंगे तो....का फरक पड़ता है?"-अपने मन ही मन सरला बतियाते हुए जा रहा था।

अब मेरी धृष्टता तो देखिए, बार-बार उसे 'सरला' कहे जो रहा हूँ। उसे सरल भी तो कह सकता हूँ। मैंने सोचा भी कि सरल ही लिखूं, परंतु पता नहीं 'सरला' की मौलिकता में 'सरल' खप नहीं पा रहा है। इसीलिए चाहे जो हो सरला ही चलेगा। आदत सी हो गयी है। गाँव के बच्चों से लेकर बूढ़ों तक सभी तो सरला ही कहते हैं। बहुत बेकार लगता है। सरला मेरे बाबा की उम्र का है। फिर भी सरला ही कहे जा रहा हूँ। लेकिन मजबूरी यह है कि अगर सरला साहित्यकार होता तो मैं इस पूरे प्रसंग को ही अपनी विस्मृति की खोह में डाल देता। कुछ नहीं लिखता। क्योंकि लिखता रहता वह अपनी स्वानुभूति। परंतु दिक्कत यह है कि सरला को छोड़कर सरल लिखने लगूं तो लोग समझेंगे किसी और की बात हो रही है। सरला पर भूलकर भी ध्यान नहीं जाएगा, क्योंकि वह सरला तो सरला नाम से ही जनमानस पर छा गया है। अब इसके लिए कालांतर में इसके समाज के पढ़े-लिखे लोग चाहे जो मुझे कहें, लेकिन मैं तो मौलिकता नहीं छोड़ सकूंगा।

अब समझ में आया कि इसी मौलिकता को लेकर प्रेमचंद आज कठघरे में है। समय के साथ मुझे भी दोषी ठहराया जाएगा.....ठहराना है तो ठहराएं.....मैं क्या करूं?. ...हो सकता है तब तक प्रेमचंद की तरह मैं भी नहीं रहूं?.....मगर कृति तो रहेगी....हां रहेगी तो. ..अगर कृत्ति रहेगी तो मेरे पक्षधर भी तो होंगे. ....फिर होंगी चर्चाएं पक्ष-विपक्ष की.....कहीं जीतूंगा....कहीं हारूंगा.....क्या फर्क पड़ता है?. ....मेरे बाद क्या हो रहा है.....मुझे उससे क्या लेना-देना है?....मगर आज तो मैं सरला ही लिखूंगा।

अब देखिए न, उसके परिवार में मैं सरला को ही जानता हूँ.....उसके दो पुत्र हैं... ..एक पुत्री, जिसकी शादी हो गयी है....एक पत्नी है....इनमें से किसी का नाम नहीं जानता. ....जानता हूँ तो सिर्फ सरला को।

अगर इसका नेहरू परिवार से ताल्लुक होता तो सरला ही क्यों, उसकी पीढ़ी-दर-पीढ़ी की एक फेहरिस्त होती.....जिसे रोज ही हनुमान चालीसा की तरह बांचता रहता, परंतु सरला के परिवार को जानने की जहमत कौन उठाए? कहानी के लिए सरला की ही आवश्यकता है तो शेष के बारे में क्या पता करना?

राह चलते सरला के मगज से कुछ निकलकर सामने गिर पड़ा-उस दिन भोला चौधरी के बाप के मरनी में जब खेत मांगा था तो कईसे चौधरी ने ताना मारा था-"जो-जो सरला सुप आ बेना बीन के बेच....खेती करना तुम्हारे वश की बात नहीं है.....अब ससुरा....सब कुकुर कासीए जईहें त हांडी कौन ढंढेगा?" तब चुप हो जाना पड़ा था। बाकीर तब के बात में आ आज के बात में बहुत फरक है। आज त मंगबे करेंगे। नहीं तऽ खईबे नहीं करेंगे। तितका का हांडी कवन फेंकेगा? झक्ख मार के जवन मांगूंगा, देना पड़ेगा। आ जब तक भर पेट खाना खाके आ चिक्कर के "ज ऽऽऽ गी.... पू ऽऽऽ रा ऽऽऽ पू ऽऽ रा ऽऽऽ पूरा" नहीं कहूंगा त उनुकी महतारी की अतमा को शांति

कईसे मिलेगा? हार मानकर देना ही पड़ेगा। भोला चौधरी जईसा बड़े मालिक नहीं है। यह तो राजा हैं राजा। बड़े दयालु भी हैं।

यही सोचते-विचारते आज की संभावित जंग से जूझते हुए सरला सपरिवार पहुंच ही गया चौधरी साहब के घर। सभी ने वहां पर अपना डेरा जमाया, जहां पहले से फेंके जूठे पत्तलों पर जूठन के लिए मंडराने वाले कुत्ते बैठे हुए थे। प्रथम परिचय में तो गुरगुराहट और लाठी का सामना हुआ। फिर थोड़ी देर में मामला शांत हो गया। आखिर होता क्यों नहीं......पता नहीं इस गाँव में कितने श्राद्ध-कर्म हुए और सभी में सरला और कुत्तों से भिड़ंत तो हो ही जाती होगी। बैठने वाली जगह को लेकर बच्चों तथा सरला में कुछ तना-तनी भी हुई, परंतु सरला ने डांटा-"कहां बईठोगे? बड़े मालिक के कपरा पर बईठोगे का? चुपचाप बईठो।" और उसके बाद बैठने के लिए कोई बात नहीं उठी।

शनैः शनैः अस्ताचल की ओट में भाष्कर अपनी रश्मियों को समेटने लगा। थोड़ी देर पूर्व लोहित गगन निशा की काली चुनरी से आच्छादित होने लगा। रात गहराने लगी। जगनुओं की जमात जगमगाने लगी। कुत्तों के भौंकने की आवाज तीव्र होने लगी। अंधेरे में आसपास डंडा से ठक्-ठक् करता, अपने अस्तित्व का आभास कराता रहता था सरला कि कहीं कुत्ते काट ने दें। जहां सरला बैठा है, वहां रोशनी की व्यवस्था नहीं है, क्योंकि यह तो पत्तल फेंकने वाली जगह है, यहां फिर रोशनी की क्या आवश्यकता है?

उसके बड़े बेटे ने पुनः भनभनाकर कहा-"कहां ई गंदगी में लाकर बैठा दिए हो बाबू। अरे, बैठने के लिए साफ जगह भी है, तो यहां बैठना क्या जरूरी है? चलो वहां साफ-सुथरी जगह है, वहीं पर बैठेंगे।

उहां कईसे बईठोगे? मालिक हो गए हो का? पहिले त हमलोग हऊ गड्हा के कछार पर बईठते थे। अब धीरे-धीरे समय बदला है तो इहां आकर बईठे हैं। आरे बहुत जमाना बदला है बचवा, नाहीं त गांव में घुसला पर हल्ला हो जाता था। डोमवा आया है.... डोमवा आया है.....लोग अपने-अपने दरवाजा पर बाल्टी में पानी आ झाड़ू लेकर तईयार रहते थे। जहां-जहां, जिस-जिस गली में हम गुजरते. ...बाबू लोगों का आदमी पानी छींटता और झाड़ू से बहारता। अब ई कहां होता है?-सरला ने समझाते हुए कहा।

"मगर बाबू रात बीत रहल है। एको बार कोई पूछने वाला नहीं आया। मुझे तो जोर की भूख लगी है। सबेरे से कुछ खाये भी नहीं है। भला, गोलमीर्च के चार-पाच दाना केतना काम करेगा?"......सरला के छोटे बेटे ने कहा।

"अभी देख नहीं रहा....बाबू लोग खा रहा है। ऊ लोगन का खाना पीना हो जावेगा त एके ललकार लगाएंगे, बस मालिक जान जाएंगे कि सरला आ गया है, बस का पूछना? छक् कर खाना। पूड़ी, जिलेबी, तरह-तरह के मिठाई, बुनिया, कई तरह के तरकारी, दही,

चीनी....अरे का-का नहीं बना होगा मालिक के यहां? पहले का जमाना रहता तो फेंकल पत्तल से जूठन बटोर लाता, आऊर तब तक बईठ के खाता रहता। बाकीर तू सब त इहो मनाही कर दिया है। हमहू सोचे कि चलो जमाना बदला है त लईकन के बात मान लें।

ई देखो....अब लगता है लोगों का आवाजाही कम गया है....खाना-पीना हो गया है.....अभी पुकारता हूँ-सरला ऽऽऽ....डोमवा ऽऽऽ. ....बईठल ऽऽ.....है मालिक ऽऽऽ....एकरो पर. ...कुछ धेयान देहू.....।"

सरला को बोलते ही सामने पत्तल आ गया। साथ ही पेट्रोमैक्स भी आ गया, जिससे अंधकार पर विजय पा लिया गया। पत्तल पर तैयार समस्त खाद्य सामग्रियां परोस दी गयीं। चौधरी साहब के आदमियों ने खाना खाने के लिए कहा। सरला ने कहा-"अईसे कईसे खाएं मालिक, जरा बड़का मालिक आ जाते तो कुछ बिनती करता, तब नुं खाएंगे मालिक।"

"खाओ-खाओ, मालिक से जो मांगोगे मिल जाएगा। आज मालिक थके हैं। कल आ जाना।"

"ई कईसे होगा मालिक? ई सब त आजे का चीज है। भला, इहो उधार रहता है?"

अभी बतकही चल ही रही थी कि चौधरी साहब का लड़का आ गया-"का, हल्ला हो रहा है?"

"सरला खाना नहीं खा रहा है। बड्क्का मालिक को खोज रहा है।"-उसके आदमी ने कहा।

"क्या बात है सरला? मुझसे कहो। पिताजी तो इस समय नहीं आ सकेंगे। मैं तो हूँ ही। बोलो क्या बात है?"

"मालिक! आज के दिन अईसे कईसे खाएं? माता जी सरग में गयी। हमरो मुराद पूरा होय मालिक।"

"हाँ-हाँ मिल जाएगा। खाना खाओ, तुम्हारे लिए एक सौ रुपये भेजवा दे रहा हूँ।"

"आज रुपिया से काम नाहीं चलेगा मालिक। आज त एगो बरियार चिन्हा चाही।"

"का चाहिए? बोलते काहे नहीं हो?"

"हमें एक बीगहा खेत चाहिए मालिक।"

एक बीघा जमीन सुनते ही चौधरी साहब का बेटा वैसे ही भड़क उठा जैसे लाल कपड़ा देखने के बाद सांड भड़कता है।

"अरे! एक बीगहा खेत क्या करेगा? तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है सरला। खाना खाओ और घर जाओ। स्साला चिन्हा मांगता है। ऐसा चिन्हा देंगे कि जिनिगी भर ईयाद रहेगा।"

"स्साला" कहने पर सरला के लड़के विद्रोही तेवर में आ गए।

"तूने मेरे बाबू को स्साला क्यों कहा?"-सरला के बड़े बेटे ने कहा।

बदलते जमाने के बदलते तेवर से सरला के दोनों लड़के पूरी तरह वाकिफ थे। सरला को यह जानकारी नहीं थी। सरला अपने बेटे के इस तेवर से आवाक् रह गया। अभी स्थिति को समझता तबतक उसके बेटों और चौधरी साहब के बेटे में काफी कुछ हो चुका था, जो अप्रत्याशित था। पानी सर के ऊपर बहता देख क्रोध से तमतमाये चौधरी साहब के बेटे ने सरला के बड़े बेटे के सर पर एक लाठी जड़ दी। उसका सर फट गया। रक्त प्लावन

होने लगा। तब एक दूसरी लाठी भी उसने मार दी।

"अरे! यह क्या.......अब तो तीसरी लाठी भी चलने ही वाली है.....चौधरी साहब का लड़का पागल हो गया है क्या?.....मर जाएगा सरला का बेटा....तो लेना का देना पड़ जाएगा...।" पास खड़ा लेखक सोच रहा था और इससे पहले कि चौधरी साहब के बेटे की तीसरी लाठी सरला के बेटे के सर पर पड़ती, लेखक ने लाठी अपने हाथ पर रोक ली। हालांकि तीसरी लाठी की चोट से लेखक को चोट तो लगी, लेकिन चोट सहते अपने हरकिशन काका को देखकर चौधरी साहब का बेटा सहम गया और स्थिति संभल गयी। वह चला गया और लेखक हरकिशन ने सरला के बेटे के सर से हो रहे खून के रिसाव को रोकने के लिए, अपने गमछे से उसका सर बांध दिया।

फिर लाद-पाथ कर चल दिये अस्पताल। पत्तल में परोसी गयी सामग्रियों को कुत्ते चट करने लगे और इधर दिन भर भूख से बिलखते सरला के परिवार की आँखों में खून उतर आया था। सरला के बेटे का इलाज हुआ....खून का रिसाव बंद हुआ....तब तक रात्रि के बारह बज गए थे। सरला सपरिवार अपने घर आ गया।

अब आप जानना चाहेंगे कि वहां लेखक क्या कर रहे थे? असल में लेखक के जेहन में जब से सरला उनकी कहानी का एक पात्र नजर आने लगा था, तभी से उसकी हर गतिविधि के साथ जुड़ गए थे। वह सरला की सहानुभूति को हू-ब-हू उकेर देना चाहते थे। वह नहीं चाहते थे कि उनकी कहानी साहनुभूति का लेबल पाकर दलित साहित्य से महरूम हो जाय। क्योंकि वह काफी उधेड़बुन में थे कि आखिर दलित साहित्य क्या है? उनके अनुसार, साहित्य कभी दलित नहीं हो सकता। साहित्य तो साहित्य है। चाहे उसे दलित साहित्यकार लिखें या फिर अन्य। हां, साहित्यकार दलित हो सकता है। वह अपनी अनुभूतियों को सामने ला सकता है। लेकिन यह समझ से परे है कि दलित जो लिखेगा वह दलित साहित्य होगा और सामान्य जाति का जो लिखेगा, वह सामान्य साहित्य यानी ब्राह्मण साहित्य, क्षत्रिय सहित्य, वैश्य साहित्य कहलाएगा। मसलन, दलित साहित्यकारों के अलावे किसी और को दलितों की व्यथा लिखने से दलित साहित्य का लेबल नहीं मिल सकता। इसी भ्रम को तोड़ने के लिए वे सरला के साथ-साथ रहते थे। उसकी हर गतिविधि से अपने आपको ऐसे जोड़ लिए थे, जिससे उनकी कहानी को स्वानुभूति का दर्जा मिले। मगर यह तो समय बताएगा कि इस कहानी को स्वानुभूति का दर्जा मिला या सहानुभूति का।

अब चलिए सरला के घर। पल-पल गहरी होती रात। झिंगुरों की झनझनाहट। रह-रहकर दादुर की कर्कश आवाज। ढिबरी की मद्धिम रोशनी। घायल बेटा खाट पर आराम कर रहा है। उसकी पत्नी और दूसरा बेटा भी सो गया है। जगा है तो मात्र सरला और उसके पिछवाड़े दीवाल की दरार से झांकता लेखक हरकिशन

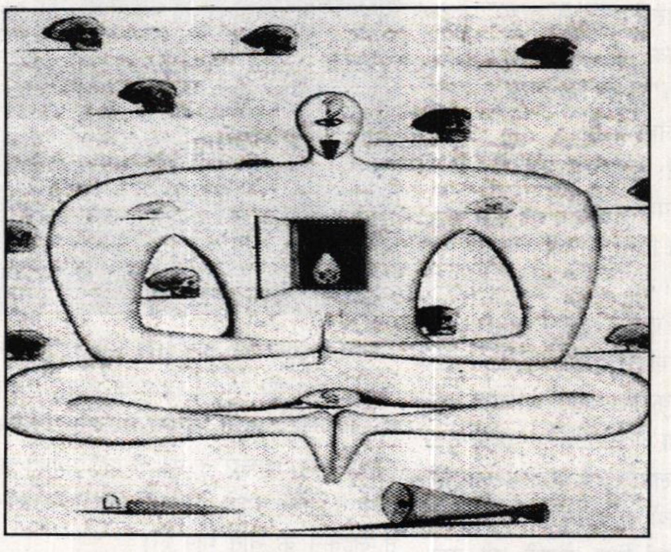

पटनायक। घायल बेटे की खाट के पास सरला चहल-कदमी कर रहा है। उसके अंदर में उठ रहे उबाल से वह उबल रहा है। उसके सामने उसके बेटे के सर से खून बहा है। खून की लाली उसकी आँखों में चढ़ गयी है। वह पूरा का पूरा लाल हो गया है....बिल्कुल आग के गोले की तरह। उसकी एक फूंक से जलकर राख हो जाएगा चौधरी साहब का महल।

विचारों की गुत्थियां उसके मानस में आलोड़ित होने लगी। क्या करे....क्या न करे.. ...तोड़ देगा वह मर्यादाओं को....तोड़ देगा परंपराओं को...कैसी मर्यादा....कैसी परंपरा....जब प्रतिष्ठा पाना हो तो दूसरे को भी प्रतिष्ठा देनी होगी... .जो दोगे वह पाओगे....चौधरी साहब होते तो शायद यह घटना नहीं घटती....मगर चौधरी साहब के होने या न होने से क्या फर्क पड़ता है? चौधरी साहब की बिगड़ैल औलाद....कैसी बेरहमी से मारा है मेरे लाल को....नहीं-नहीं मैं उस छोकरे को नहीं छोड़ सकता....उसे जेल की सलाखों के अंदर करके ही दम लूंगा.... अरे, अब चौधरी साहब या मेरा जमाना नहीं रहा....अब तो इन्हीं का जमाना है और मेरे बेटे आज मगर हार गए तो इनका जीवन भार बन जाएगा और गुलाम बनाकर रख लेगा चौधरी का बेटा।

तभी सरला ने देखा कि गोरैया जहां घोंसला लगायी थी, वहां विषैला सांप प्रवेश करना चाह रहा है। मादा और नर दोनों गोरैया, रात्रि में भी बाहर निकल कर चीं-चीं करते हुए सर्प को अपनी चोंच से मारने लगे, जिससे तंग आकर सर्प भाग गया और गोरैया के बच्चे बच गए। यह देखकर सरला की आँखें चमकने लगीं। शायद उसके विचार-मंथन में रहा-सहा संशय भी समाप्त हो चुका था। वह पूरी तरह निर्णय ले चुका था।

सुबह उषा की लालिमा प्राची में फैलने लगी और इधर सरला अपने बेटे के खून से लाल हुए कुर्त्ता और धोती को साथ लिए, बेटे की खाट को अपने छोटे बेटे के सहारे कंधे पर उठाए, हरिजन थाना में पहुंच गया। उसकी पत्नी भी उसके साथ थी।

जीवन मे पहली बार सरला ने अपने अधिकार का प्रयोग किया और थाने में दारोगा के सामने, कुर्सी पर बैठकर, चौधरी साहब के बेटे के खिलाफ उसने प्राथमिकी दर्ज करायी और गवाह में अपने छोटे बेटे, पत्नी सहित लेखक हरकिशन पटनायक का भी नाम डाल दिया।

संपर्क : जगदंबा भवन, सिविल लाइन्स बक्सर-802101

दूरभाष: 06183-225023

काव्य-कुंज

वो बेजान आँखें

❑ –दिवाकर गोयल

आज उस बूढे शरीर की
बेजान आँखों को देखा है
बर्फ की सरहदों से ढका यह शरीर
निर्जीव शांत अंग
वही सौम्य मुस्कान
चेहरे की चमक
मुझको रोने भी नहीं दे रही

अभी कल तक
मैं इस जीवात्मा से कितना लड़ा था।
कितना प्यार किया था।
पल-पल के अविस्मरणीय अनुभव कँपा जाते हैं
सुंदर गुलाब और गेंदों की अनगिनत मालाओं से
मरे जीवनदाता का शरीर ढक गया है।
अब कंधो पर इस नश्वर शरीर को सम्भाले
राम नाम सत्य है
सत्य बोलो मुक्ति है का गुंजार
मेरे मन को दहला रहा है
ऐसा नहीं कि यह बोल पहले न सुने हों
पर मेरे लिए वास्तविक अर्थ
ये आज ही दे रहे हैं।

गंगा का यह सुनसान किनारा
और मेरे पिता का निर्जीव कराया
जिससे लिपटकर कितनी बार रो चुका हूँ
पर अब जीवन का शरीर में वास कहाँ
एक एक लकड़ी का टुकड़ा
शरीर को आखिरी स्पर्श दे रहा है।
अब अग्नि की लपटें कुछ ही क्षणों में
राख कर देगी इस मानव शरीर को
जिसके लिए हम क्या कुछ नहीं करते
शायद क्षणभंगूर इसे ही कहते हैं

मेरे आँसू न जाने कहाँ खो गये।
जबान बंद हो गयी
मन करता है
फिर उसी अतीत में लौट जाऊँ
जहाँ मैने जीवन की हर समस्या का हल
अपने पिता के साथ खोजा था
पर अग्नि की तेज लपटें
मुझे दूर कर देती है।।

आज शरीर की यह राख भी
गंगा का एक भाग बन गयी
और कभी यह कण सागर में भी मिल जायेंगे

अब यादों के इस घेरे में
सोचता रहूँगा उम्र भर,
कभी सपनों में भी दहला जायेगी
वो बेजान आँखें

संपर्क : उपमहाप्रबंधक (कार्मिक एवं प्रशा०), भारतीय विमान पत्तम प्राधिकरण, नेशनल इंस्टीच्यूट ऑफ एवीमेशन मैनेजमेंट एण्ड रिसर्च, गुड़गाँव रोड, नई दिल्ली-11003।

भ्रष्टाचार

❑ पुनिधा सेंगोले

एक दिन स्कूटर पर सवार
मिल गया भ्रष्टाचार
मैंने कहा 'नमस्कार'
वह बोला 'फरमाइये',
मेरे लायक, कोई सेवा हो तो बताइये.....
मैंने कहा अरे ओ भ्रष्टाचार, पिछले
पचास सालों से देश को चर रहे हो,
भगवान से बिल्कुल नहीं डर रहे हो,
बताओ कब प्रस्थान करोगे,
यह सुनकर भ्रष्टाचार नोचने लगा अपने बाल
उसने कुछ सोचा
फिर धीरे से बोला....
'मैं तो सर्वव्यापी हूँ, भगवान की कार्बन कॉपी हूँ,
अगर मैं चला गया तो सारे नेता अभावों की
नाली में पड़े मिलेंगे.... '
यह सुनकर मैंने कहा
'अरे ओ भ्रष्टाचार वापस कर मेरा नमस्कार
जिस दिन इस देश का आजाद भगत
सुभाष जाग जायेगा उस दिन तू इस
दुनिया से भाग जायेगा।'

संपर्क: **II (Zoology/)**
Womens Christion College
Chennai-6

हमें पुकारा है

❑ डॉ० सतीश चंद्र भगत

समय ने
युग ने हमें ललकारा है
विवेक ने
कर्त्तव्य उत्तरदायित्व ने
पौरुष ने हमें पुकारा है।
यह पुकार
न की जा सकेगी अनसुनी
नव निर्माण के लिए
आत्म निर्माण के लिए
हम कांटो से भरे रास्तों का भी
करेंगे स्वागत
और बढ़ेंगे आगे साइंस ने हमें पुकारा है।
क्या कहते हैं लोग
क्या करते हैं लोग
इसकी चिंता कौन करे
पर्याप्त है
मार्ग दर्शन के लिए
अपनी आत्मा ही
आत्म विवेक ने हमें पुकारा है।
भटकते हैं लोग
अँधेरे में
हम अपने विवेक के प्रकाश में
करें अवलोकन
स्वतः आगे बढ़ेंगे
करता है कौन विरोध
कौन समर्थन
इसकी गणना कौन करे
अपनी अंतरात्मा ने हमें पुकारा है।
उचित क्या है
अनुचित क्या है
उपयुक्त क्या है सजग व्यक्तियों के लिए
अपना साहस जब अपने पास है
अंतरात्मा की आवाज साहस ने हमें पुकारा है।

संपर्क:-गणित विभाग, चौरसिया
राजकिशोर महाविद्यालय,
हाजीपुर, वैशाली-844101।

काव्य-कुंज

शांति और क्रोध

❑ रामगोपाल राही

मिले शांति ना बाजारों में
न झूठे व्यवहारों में।
यह मिलती है पारदर्शिता
जीवनसद् व्यवहारों में।।
क्रोध की अग्नि आक्रोश में
जब जब आग उगलती।
जल जाती है हृदय शांति तब,
मन से भाग निकलती।।
संवेग, आवेग क्रोध में
आमंत्रण-जड़ता का।
जड़ता है अविवेक साधना
कुफल ज्यों दृढ़ता का।।
शांति खोज जग परिष्कार मन
हृदय साधना होगा।
संकल्प साधना होगा।।
कंठा, कुत्सित विष घृणा का।
क्रोध ताप बढ़ आता।
द्वेष, तनाव, मति अंधता
ज्ञाता हो अज्ञाता।।
गर्म तवे पे ज्यों पानी की
बूँदें पड़ जल जाती।
क्रोध की अग्नि अैसी अग्नि,
रहती हृदय जलाती।।
स्वार्थक्षति से शांति भंग
अनुताप मिला करता है।
चोट स्वार्थ तिलमिला-हृदय
संताप मिला करता है।।
हृदय क्रोध में भट्टी बनता,
सच अंगारे उगलता।
कहां शांति तब कुतर्कों के,
ईधन से उर जलता।।
शत्रु गैर तो दूर मगर
क्रोध-शत्रु बन जाता।
खुद का खुद पे अस्त्र काटता,
हृदय चैन दिन जाता।।
जीना है तो शांति हृदय में
रख के जीना सीखो।
क्रोध-भुला के शिव शंकर ज्यों
विष भी पीना सीखो।।

क्रोध किया तो आखिर एक दिन,
क्षति उठानी होगी।
अहं, क्रोध दो शत्रु वार से,
देह गवानी होगी।।
क्रोध पाप पाखंड झूठ का
होता कपट मुखौटा।
स्नेह, शांति, सुख चैन छीनता
बड़ा भयातुर खोटा।।
हिंसा का प्रतिरूप क्रोध है
हिंसा पाप विकट है।
छल बल क्रोधी अपवादों में,
होता पाप निकट है।।
शांति बहे हिय सुरसरि धारा,
जग समाज में सारे।
मानव-मानव बने हितैषी
होन न क्रोध के मारे।।

संपर्क: गणेशपुरा-लाखेरी 323615
जि.बूंदी (राज.)

बेदर्द दुनियाँ

❑ जुम्मना एम०

कौन जानता है, कि जब इस दुनियाँ को खुदा ने बनाया
तो क्या ख्याल मन में बसाया?
और जो ख्याल मन में बसा,
उसे एक कतराह भी हासिल कर पाया?
क्यों, इस दुनिया के लोग जानकर भी अनजान बनते हैं,
आन्दोलन कई लगवाने हैं, पर गरीबी नहीं मिटा पाता है,
क्या खुदा इस बात को जानता था
कि उसी का बनाया हुआ करिश्मा
उसकी दुनियाँ ने विनाश का कारण बन जाएगा?
शायद खुदा ने भी इस अनहोनी की कल्पना न की हो?
आज की दृष्टि से देखा जाए तो, एक ही ख्याल मन में आये
कल की पीढ़ी यह न कह पाये,
''खुदा खत्म, पैसा प्रथम।''
जागो दुनियावालो, न होने देना यह अनहोनी
क्योंकि खुदा, जब लेगा इन्तकाम,
तो मिंट जाएगी सबों की आन, बान और शान।

-द्वितीय वर्ष-एन 4डी
Women's Christion College, Chennai-6

ग़ज़ल

1 ❑ दिनेश पंकज

हकीकत इतनी कठोर है सह नहीं पाता
कल्पनाएँ इतनी हसीन हैं देख नहीं पाता

झूल रहा रहा हूँ बीच में त्रिशंकू की माफिक
जमीं पर पांव नहीं आकाश छू नहीं पाता

दिये की लौ की तरह टिमटिमा कर जलता हूँ
रोशनी फैला नहीं सकता अँधेरा कर नहीं पाता

ढूँढ़ रहा हूँ अपने को बहुत कोशिश करके
पर रोशनी और अँधेरे के बीच देख नहीं पाता

इधर हूँ पर उधर जाना चाहता हूँ
इस खींचतान में अपने को कहीं नहीं पाता

संपर्क : ए-19, न्यू आर्य समाज रोड,
उत्तमनगर, नई दिल्ली-59,
फोन : 55746462

"कातिल लहरें"

❑ डॉ० मंजुला गुप्ता

क्यों गरज रहा है रत्नाकर
थर-थर भूतल हैं कांप रही
सुनामी की लहरें देखो
कैसी है फुत्कार रही

घायल नागिन सी भीषण लहरें
किया आज क्यों इतना कोप
धरा के तटवासी को लील लील
मचा कहर, करता पल-पल लोप
जिसकी शांत झिल-मिल लहरों से

नित सूर्य देव है पल-पल उगता
फिर थके पांव सा किरन समेट
अंक में उसके जा सो रहता
देने वाला वह उदार
क्यों हो गया आज इतना अनुदार
अंतहीन विनाश की कहर मचा

दौड़ा आया ज्यों दैत्य समान
किया है मानव ने कलुषित जब-जब
अपर्णा सी पवित्र धरा को
स्फूलिंग नेत्र में गरल घोल
तांडव किया है शिव ने तब-तब

संपर्क :- 9, बी०एस० रोड, बाईस
गोदाम सर्किल, जयपुर, राजस्थान

वीर माधोसिंह भंडारी

❑ राजेश्वर उनियाल

रण का वो वीर था
मन से वो नीर था
संकल्प का अधीर था
ममता का चीर था।
अलकनंदा के तीर था
मलेथा का पीर था
गढ़वाल का सेनापति
बहुत महावीर था।
प्रिय था वो राज का
राज का तकदीर था
भुजाएं थी मीन सी
बहुत बलवीर था।
मस्तक पर तेज था
बढ़ा हुआ केश था
फौलादी सी छाती उसकी
खेती भी अपार थी
पर कहीं नहीं नीर था
पानी को तरसते रहते
ऐसी तकदीर था।
कहां ब्याही गई हूँ मैं
भाभी मारे जब ताना
हृदय में चुभते उसके
ताना नहीं तीर था
पानी अब मैं लाऊंगा
कूल एक बनाऊंगा
पहाड़ को भेद के
जग को दिखाऊंगा।
हाथ में कुदाल था
वह स्वयं फौलाद था
माथे पर था पसीना
गांव का था नगीना
कूल अब बन गया
पानी नहीं बह रहा
पहाड़ के भीतर
चट्टान एक आ रहा।
जतन सारे कर दिए
चट्टान नहीं हटता
हिलाए नहीं हिलता
ना सुरंग वेधता।
बलि मांगे देवी मां
पुत्र बलि चाहिए
स्वप्न में देखा उसने
द्वंद एक छा गया।
दूंगा पुत्र की बलि
रोते मन से कह दिया
सृष्टि का कल्याण करने
वीर छटपटा गया।
पुत्र बलि घोर अनर्थ
मत करो माधोसिंह
सूखे रह लेंगे खेत
यूं ही दिन काट लेंगे
पुत्र प्राणों से प्यारा
सारे जग से न्यारा
मत करो दान उसका
यह पाप छाएगा।

पुत्र नहीं वह तुम्हारा
वह तो भाई है हमारा
गांव भर का दुलारा
आंखों का है वो तारा।
पर माना नहीं माधोसिंह
यह संकल्प है हमारा
देवी का दिया है दान
देवी को करूँगा दान।
रोते आंसुओं के बीच
पुत्र का किया बलिदान
माना नहीं माधोसिंह
देख रहा जग सारा।
कूल अब फूट पड़ा
जल विहगम हो गया
धरा हरी भरी हुई
पर गोद एक सूनी हुई।
देश है ये वीरों का
त्यागी और तपस्वियों का
निस्वार्थ राष्ट्र सेवा में
पुत्र भी तज दिया।
मलेथा की कूल आज
याद करती माधोसिंह को
इतिहास करवट ने कहा
बलिदान को तज रहा

संपर्क: 401, गौरव यमुना
गौरव गार्डन,
कांदिवलि (पश्चिम)
मुंबई-400067

वह तेज-पुत्र था भारत माँ का

❑ ई०आर०के०वर्मा

दासता में जकड़ी,
भारत माँ का करुणा-क्रंदन
जब हुआ घनीभूत,
तो,
धरती काँपी, बिजली कौंधी
सागर में उठा उबाल,
दिशा-दिशा में चली आँधियाँ,
इन सबों के संघात से,
उपजा एक प्रकाश,
वह था सुभाष, वह था सुभाष।

छोड़कर अपनी सारी सुख-सुविधा,
तन-मन-धन न्योछावर कर
भारत-माँ को गले लगाया,
आस दिलाया, धीरज बँधाया।
फिर, रणभेरी बजी,
भारत माँ को मुक्त कराने
चल पड़ा सुभाष,
तीर चला वह वीर चला।
वह था सुभाष, वह था सुभाष।

बाधाओं को तोड़-फोड़,
संघर्षों को रौंद-रौंद
विपदाओं को काट-काट
झंझावातों से खेल-खेल
गहन तिमिर में कांटों पर चलकर
विजय-भाल को उसने चूमा,
वन्दे-मातरम् से गूँजा आकाश,
वह था सुभाष, वह था सुभाष।

जीवन के अंतिम क्षण तक
वंदे मातरम् गाते-गाते,
दे दी जिसने अपनी कुर्बानी,
वह शक्ति-पुत्र था भारत माँ का,
वह तेज-पुत्र था भारत माँ का।

संपर्क : मुख्तारटोली, नाला रोड,
कदमकुआँ, पटना-800003,
दूरभाष : 2670035

बँधकर रह जाते हैं और नेता इसी का नजायज फायदा उठाते हुए एकछत्र राज करते हैं तथा सामाजिक प्रतिष्ठा एवं आर्थिक संपन्नता की मृगमरीचिका दिखाकर दलितों, शोषितों और वंचितों को ठगते हैं।

दरअसल वयस्क मताधिकार के प्रयोग ने जाति के राजनीतिकंरण की प्रक्रिया को आश्चर्यजनक रूप से प्रभावित किया है। अंततः इसके दुरुपयोग से जाति का राजनीतिकरण हो गया है। यही कारण है कि सभी राजनीतिक पार्टियाँ जाति संगठनों का चुनाव में दुरुपयोग करती हैं और उनके नेतागण उन्हीं जातीय संगठनों के आधार पर एक-दूसरे को लड़ाने का काम करते हैं। जहाँ एक ओर जातीय व्यवस्था के परिणामस्वरूप राजनीतिक शक्ति उन वर्गों व समूहों में पहुँची है, जो अभी तक सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक दृष्टि से उपेक्षित एवं वंचित रहे हैं, वहीं दूसरी ओर राजनीति में जाति की भूमिका को गलत रूप में ग्रहण करने की वजह से इसकी सकारात्मक एवं रचनात्मक भूमिका की अवहेलना भी की गयी है। फलतः जातीयता आज समाज के समक्ष कोढ़ के रूप में देखी जा रही है।

जाति और वर्ग के अंतरराष्ट्रीय संबंध ों के बारे में समाजवादी आंदोलन के प्रणेता डॉ. राममनोहर लोहिया की निम्न पंक्तियाँ कितनी सटीक हैं: 'अब तक मानव इतिहास जातियों और वर्गों के बीच आंतरिक गति का इतिहास रहा है। कभी वर्ग घनीभूत होकर जातियों में बदलते रहे हैं तो कभी जातियाँ ढीली होकर वर्गों में बदलती रही हैं। यानी वर्ग गतिशील जाति है। जबकि जाति ठहरा हुआ वर्ग है।' भारत में जाति और वर्ग की समस्या को लेकर करीब छह हजार पुस्तकें लिखी गई हैं। उनमें सबसे प्रमुख सिद्धांत आर्यों के आक्रमण का ही है। फिर व्यवसाय संबंधी सिद्धांत है। अंबेडकर इसे वर्चस्व के संघर्ष से जोड़ कर देखते हैं, जबकि सच्चिदानंद सिन्हा ने अपनी किताब 'कास्ट, मिथ, लिलिटी एण्ड चैलेंज' में जनजातीय स्तरीकरण से जोड़कर देखा है।

जाति व्यवस्था के बारे में किसी भी सरलीकृत व्याख्या से बचना चाहिये, क्योंकि उसका सीधा प्रभाव आज की राजनीति पर पड़ता है, जो हमें जाति-युद्ध और जातिवादी हिंसा की ओर ले जाता है। पर आज की जाति विरोधी राजनीति से भयभीत होकर प्राचीन भारतीय समाज का मनोहारी चित्र खींचना भी उचित नहीं है। प्राचीन भारत में जाति व्यवस्था कर्म के आधार पर थी और बहुत लचीली थी।

लोहिया के विचारों एवं सिद्धांतों के मद्देनजर हमें इतिहास को एक नयी दृष्टि से देखना होगा, ताकि ये उभरे हुये मूल्य, जो सामाजिक विषमता पर सीधे प्रहार करते हैं, कहीं एक बार फिर अभिजात्य वर्ग के कुचक्र का शिकार न बन जाये। इसलिये जातीयता पर प्रहार करने के लिये सदियों से उपेक्षित जातियों और वर्गों को विशेष अवसर के सिद्धांत के आधार पर शासनतंत्र संचालन में भागीदारी की सुरक्षा का प्रबंध करे, क्योंकि आज भारत वस्तुतः अस्मिता के संकट से गुजर रहा है। न दशा निश्चित है और न ही दिशा। कोई भविष्य वाणी संभव नहीं दिखती। आज स्थिति यह है कि समाज का प्रत्येक तबका, प्रत्येक व्यक्ति संविधान के मौलिक अधिकारों की माँग कर रहा है। आज तक ये मूल अधिकार अधि कांशतः संविधान के पन्नों तक सीमित रहे और कुछ ही लोगों को, एक वर्ग विशेष को, ये अधि कार वास्तव में मिले। समाज का वर्तमान ढाँचा इस माँग को पूरा करने में सक्षम नहीं है। सारा ढाँचा चरमराता दिखायी दे रहा है। प्रत्येक नागरिक के मन में स्वतंत्रता की भूख जगी है। केवल वोट देने की स्वतंत्रता नहीं, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्वतंत्रता चाहिये। उसे बराबरी का हक भी चाहिये। कोरा आश्वासन नहीं, ठोस बराबरी, जिसे वह महसूस कर सके। इसके अतिरिक्त वह बंधुत्व के साथ-साथ अंशत्व का बोध भी चाहता है। इसी अंशत्व के बोध का नाम अस्मिता है। जातीयता के कोढ़ से तभी मुक्ति मिल सकती है।

समाज में आज जो संकुचित जातीयता है वह मानवता से कोसों दूर है। ऐसी संकुचितता इसे विपरीत युग में अत्यंत निंदनीय और त्याज्य है। इस तथ्य के मद्देनजर सामाजिक जड़ता अर्थात जातिवाद की बढ़ती प्रवृतियों पर प्रभावी अंकुश की जरूरत है। सच तो यह है कि लोहिया के अवतरित होते ही समाज में नये-परिवर्तन के सूत्र बने-वोट, फावड़ा और जेल। देशवासियों में एक नयी ललक जगी। उनका पहला प्रहार जन्मना यानी समान अवसर का सिद्धांत सामने आया, जिससे सदियों से उपेक्षित और समाज का अछूत बना हिस्सा समाज की मुख्यधारा से पुनः जुड़ने लगा। लोहिया का यह जीवन-दर्शन समाज में समानता लाने का मौलिक मार्ग था, जिसने देश के चिंतन की धारा को एक नया मोड़ दिया। मगर भारतीय राजनीति इसे सही दिशा नहीं दे सकी। वह समाज व राष्ट्र को सही दिशा देने के अपने दायित्व का निर्वहन तभी कर सकती है जब वह स्वयं सही राह पर रही हो।

आज स्थिति यहाँ तक आ पहुँची है कि राजनेताओं के कारनामों की वजह से ही प्रशासनिक सेवा भी पूरी तरह से जातिवाद की चपेट में आ चुकी है। जिस जाति का मंत्री होता है उस जाति के अधिकारियों को महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्ति या तबादला हो जाता है। यह समस्या बिहार, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु में ही नहीं, बल्कि केंद्र में भी देखने को मिल रही है।

अच्छे प्रशासन की पहली शर्त यह है कि वह निष्पक्ष हो तभी जनता का हित हो सकता है, लेकिन जातिवाद में बँटा प्रशासन कभी निष्पक्ष नहीं हो सकता। इसके लिये हमारा राजनीतिक तंत्र जिम्मेदार है। कहना नहीं होगा कि आज सिविल सेवा के अधि कारियों की नियुक्ति उनकी काबिलियत के बल पर नहीं, अपितु जाति के आधार पर होने लगी है। यह किसी से छिपा नहीं है कि जाति में ये अधिकारी मंत्रियों के लिये धन उगाही का कार्य करते हैं। पिछले दिनों केंद्र के एक मंत्री का आप्त सचिव रिश्वत लेते हुए पकड़ा गया, लेकिन मंत्री का क्या बिगड़ा? कुछ ही दिनों में फिर वह उसी पद पर बैठे नजर आय। इससे समाज का भला होने से रहा। इसलिये जबतक नौकरशाही में राजनीतिक हस्तक्षेप को रोका नहीं जाएगा, तबतक इसमें कोई सुधार की आशा नहीं की जा सकती है।

वर्तमान भारतीय राजनीति की सबसे बड़ी विडंबना और दुर्भाग्य यह है कि जनतंत्र के आवरण में राजतंत्र एवं राजभोग की ही मानसिकता पल रही है जिसमें जनसामान्य एवं इन्हीं सब अजनतांत्रिक और असामाजिक दुष्प्रवृतियों से भरपूर मानसिकता के लोग अपने तुच्छ स्वार्थों की सिद्धि एवं सत्ता का स्वाद पाने के लिये आतुरता से अग्रसर हैं। आज के तथाकथित राजनीतिक क्षेत्र में अनेक रक्त बीज बढ़ते जा रहे हैं जो जनतंत्र ही नहीं,

शेष पृष्ठ 27 पर......

डॉ० रामविलास शर्मा : व्यक्ति और कार्य

समीक्षक : डॉ० ऋषभदेव शर्मा

वरिष्ठ समीक्षक और भाषा चिंतक डॉ० राजमल बोरा ने प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ० रामविलास शर्मा (1912-2000) के व्यक्तित्व और कृतित्व के विविध पक्षों को प्रासंगिक उद्धरणों और पत्रांशों के साक्ष्य के आधार पर मूल्यांकित करते हुए ''रामविलास शर्मा : व्यक्ति और कार्य'' (2004) शीर्षक जो ग्रंथ प्रस्तुत किया है, वह संस्मरण, व्यक्ति चित्र, शोध, समीक्षा और जीवन परिचय तथा संकलन-सभी का मिलाजुला अनुभव प्रदान करता है। इस ग्रंथ से चरितनायक के कई जाने-अनजाने पहलुओं पर प्रकाश पड़ता है।

लेखक अपने चरितनायक की ओर मुख्यत: उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'भाषा और समाज' के कारण आकर्षित हुए। 'भाषा और समाज' तथा 'भारत के प्राचीन भाषा परिवार तथा हिंदी भाषा' (तीन भाग)-ऐतिहासिक भाषा विज्ञान को आगे बढ़ाने वाली कृतियाँ हैं और लेखक ने इन पर विस्तृत लेखमाला भी 'प्राक्कथन में लिखी थी। उन्होंने 'ऐतिहासिक भाषा विज्ञान और हिंदी भाषा' का संपादन भी किया था। वे मानते हैं कि भाषा विज्ञान के क्षेत्र में डॉ० रामविलास शर्मा का नाम डॉ०सुनीति कुमार के चाटुर्ज्या के समान अखिल भारतीय स्तर पर परिगणित करने योग्य है। लेकिन अफसोस यह है कि डॉ० शर्मा का खाश लेखन हिंदी में होने तथा उसका अनुवाद अंग्रेजी में उपलब्ध न होने के कारण अन्य भाषाओं के विद्वान उनके कार्य को ठीक से नहीं जानते। हमारी मानसिकता का यह हाल है कि देशी विद्वान उन पुस्तकों को पढ़ना तब ठीक समझते जबकि उनके अंग्रेजी में अनुवाद उपलब्ध होते और विदेशों में नाम होता। इसके बावजूद यह सच है कि विषयपरकता और विषयबहुलता-दोनों ही की दृष्टि से महापण्डित राहुल सांकृत्यायन के बाद हिंदी में दूसरा नाम डॉ० रामविलास शर्मा का ही है। लेखन को 'खेल' समझनेवालों को यह याद रहना चाहिए कि चाहे रामचचनद्र शुक्ल हो या रामविलास शर्मा, सब बड़े साहित्यकार शोध दृष्टि और निरंतर साधना के उदाहरण हैं और वे अपने आपका परिमार्जन सदैव करते रहे हैं।

'साक्षात्कार' में लगभग 85 वर्ष की आयु में डॉ० रामविलास शर्मा की दिनचर्या की जानकारी रोचक और प्रेरक है। वे सुबह 4:30 बजे जग जाते थे। प्रतिदिन बीस मिनट व्यायाम और चालीस मिनट भ्रमण करते थे। हल्के नाश्ते के बाद सात बजे पढ़ने बैठ जाते थे। तीन चार घंटे बाद दो रोटी का नाश्ता। फिर अखबार। ग्यारह बजे से फिर काम। 12:30 बजे एक गिलास दूध। डेढ़-दो बजे तक काम। दोपहर में स्नान, भोजन और पाँच बजे तक विश्राम। पाँच से दस बजे तक छोटे-मोटे काम। शाम छह-सात बजे के बीच भ्रमण। 7 से 9 तक समाचार सुनना। फिर हल्का भोजन। थोड़ा टहलने के बाद बच्चों से बातचीत। टी०वी०। सोने से पूर्व नियमित रूप से कर्नाटक और उत्तर भारतीय संगीत सुनना। ग्यारह बजे के आस-पास सो जाना।

पुस्तक	: रामविलास शर्मा : व्यक्ति और कार्य
लेखक	: प्रो० राजमल बोरा
समीक्षक	: डॉ० ऋषभदेव शर्मा
प्रकाशक	: मिलिंद प्रकाशन, हैदराबाद
वर्ष	: 2004 ई०
मूल्य	: रु० 125/-

इसी प्रकार उनकी लेखन पद्धति के बारे में यह जानना रोचक है कि इन अंतिम वर्षों में वे बोलते जाते थे और वह सब टेप हो जाता था जिसके आधार पर टंकित प्रतियाँ तैयार की जातीं और वे उसे देखकर अपने लेखन को अंतिम रूप प्रदान करते थे।

अब कुछ चर्चा डॉ० रामविलास शर्मा को मान्याताओं के संबंध में।

डॉ० रामविलास शर्मा आचार्य किशोरी दास वाजपेयी के इस मत के समर्थक हैं कि हिंदी संस्कृत की पुत्री नहीं है। वे आर्य और द्रविड परिवारों के वर्गीकरण को भी दोष मुक्त नहीं मानते। उनकी यह स्थापना है कि सघोष महाप्राण ध्वनियाँ (घ, ध, श आदि0 भारत की (और विशेष यप से आर्य परिवार की) विशेष ध्वनियाँ हैं जिनका अस्तित्व इस बात को प्रमाणित करने के लिए काफी है कि आर्य बाहर से नहीं आए थे। आर्य और द्रविड के नाम पर भारतीय भाषाओं को अलगाने के लिए कालडवेल ने संस्कृत भाषा को आधार बनाया जो छद्म और दोषपूर्ण है। इसलिए ऐतिहासिक भाषा विज्ञान का अध्ययन नये सिरे से किया जाना जरूरी है।

डॉ० राम विलास शर्मा की मान्यता है कि जातीयता की सबसे बड़ी पहचान भाषा है। वे भी अनेक भाषा वैज्ञानिकों की भाँति भारत को भाषा गत इकाई (लिंगुइस्टिक एरिया) मानते हैं, जिसका अर्थ है कि एक ही भूखंड में बहुत दिनों तक साथ रहने के कारण मित्र भाषा परिवारों ने ऐसी सामान्य विशेषताएँ विकसित की हैं जो भारत के बाहर इन परिवारों की अन्य भाषाओं में नहीं मिलती। भारत में पाए जाने वाले चार प्रधान भाषा परिवारों आर्य, द्रविड़, नाग और कोल में शताब्दियों तक परस्पर आदान-प्रदान होता रहा है। भाषा की राजनीति करके घृणा की व्यवसाय करनेवालों को मालूम होना चाहिए कि इन शताब्दियों में परस्पर संयुक्त परिवारों में से कोई भाषा परिवार नष्ट नहीं हुआ। अर्थात इन भाषा परिवारों में कोई मूलभूत शत्रुता नहीं है।

भाषा और साहित्य के इतिहास के संबंध में डॉ० रामविलास शर्मा की यह मान्यता विचारणीय है कि काल विभाजन का आधार समाज व्यवस्था को बनाया जाना चाहिए ताकि इतिहास का समाज वैज्ञानिक विवेचन संभव हो। उन्होंने ऐसा ही किया। निस्संदेह 'वे हमें हमारे युग की सभ्यता की पहचान कराते हैं और भारत के इतिहास को विश्व के इतिहास से सम्बद्ध कराने के प्रयत्न करते हैं, इसीलिए समीक्षक के रूप में उनका विवेचन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से युक्त होता है।''

डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने 1930 में लिखा था कि हिंदी में 'हिंदी राष्ट्र' के विशाल इतिहास की अपनी कल्पना भी नहीं हो पायी है। डॉ० रामविलास शर्मा ने इस कल्पना को साकार करने का प्रयास किया और जातीय चेतना को प्रादेशिक भाषा से जोड़ा। उनके अनुसार रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सुब्रहमण्यम 'भाखी' और निराला के साहित्य में अपनी भाषाओं के प्रति उत्कट प्रेम दिखाई देता है। ''ये भाषाएँ ही उनके राष्ट्रवाद और मानवतावाद की अभिवयक्ति का माध्यम हैं। जातीय चेतना वह उत्स है, जिससे देश प्रेम और मानवप्रेम की धाराएँ फुटती हैं। बंगभंग के विरोध ने जातीय चेतना को, उसके साथ राष्ट्रीय चेतना को समृद्ध किया। जातीय चेतना केवल भाषागत, प्रदेशगत चेतना नहीं है। उसमें साम्राज्य विरोध, सामंती रूढ़ियों का विरोध तथा समाज को पुनर्गठित करने की धारणाएँ शामिल हैं।''

डॉ० रामविलास शर्मा की यह धारणा भी विचारणीय है कि जाति से संबंधित अभ्युदय के लिए लोकभाषा को उजागर करना आवश्यक है। वे भारत को ब्रिटेन, बस और चीन की तरह ही बहुजातीय राष्ट्र मानते हैं। जातियों के परस्पर संबंध के बारे में उनकी राय है कि ब्रिटेन और अमेरिका में एक बड़ी जाति छोटी और पिछड़ी हुई जातियों को दबाती है जबकि स्विटजरलैंड और भारत में विविध जातियाँ बहुत कुछ समानता के आधार पर साथ-साथ रहती हैं। इस भाषायी चेतना के अभाव में कोई भी भाषा समाज पिछड़ा रह सकता है तथा हिंदी प्रदेशों के पिछड़ेपन का कारण भी यही है। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि हिंदी की भौगोलिक सीमाओं को राजनैतिक पहचान भी प्रदान की और इस तथ्य को उजागर किया जाए कि हिंदी जाति के साथ हिंदी संस्कृति जुड़ी हुई है और तदनुसार भारतीय संस्कृति भी। तभी यह स्थापित किया जा सकता है कि हिंदी साहित्य का इतिहास अखिल भारतीय स्वरूप का है।

डॉ० रामविलास शर्मा का पत्र साहित्य भी विपुल है और दो खंडों में प्रकाशित आत्मकथा भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने अनेक संस्मरण भी लिखे हैं और कविताएँ भी। संस्मरणों में बतकही और किस्सा गोई का अंदाज है जो कविताओं में लोक प्रकृति और मनुष्य से आत्मीय रिश्ते का उद्घाटन।

हमारे चरितनायक की अंतिम कृति है ''भारतीय सौंदर्य विधि और तुलसीदास।'' डॉ० रामविलास शर्मा की यह इच्छा थी कि वे तुलसी पर केद्रिंत एक और ग्रंथ लिख जाते। वे मानते थे तुलसीदास को अपने जीवन में राय से भी बड़ी लड़ाई लड़नी पड़ी थी इसलिए वे कभी-कभी राम से भी बड़े प्रतीत होते हैं। इस कृति का अध्याय तुलसी के सौंदर्य बोध पर केंद्रित है। साथ ही परिशिष्ट के रूप में 'तुलसी की शक्ति', 'भक्ति आन्दोलन और तुलसीदास' तथा 'तुलसी साहित्य के सामंत विरोधी मूल्य' शीर्षक तीन अन्य अध्याय समाहित किए गए हैं।

''डॉ० रामविलास शर्मा तुलसी की शक्ति को अन्ध शक्ति नहीं मानते। वे उसके आधार को जानत हैं। वह आधार ज्ञान है। तुलसी भक्त होने के साथ दार्शनिक कवि भी हैं। वे मानते हैं कि तुलसी ने उच्चकोटि के मानवतावाद की प्रतिष्ठा की है।''

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि डॉ० रामविलास शर्मा भक्ति आंदोलन को राष्ट्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण और भारतीय जनता की एकता को दृढ़ करनेवाला मानते हैं। वे शक्ति साहित्य को निराशाजन्य साहित्य न मानकर उसका यह सामाजिक महत्व बताते हैं कि उसमें देश की कोटि-कोटि जनता की व्यथा, प्रतिरोध की भावना और सुखी जीवन की आकांक्षा व्यक्त हुई है। वे तुलसी पर गर्व करने की प्रेरणा देते हुए लिखते हैं कि-

''तुलसी की ऐतिहासिक सीमाओं की बात करके माफी माँगने की जरूरत नहीं है। जरूरत है तुलसी पर गर्व करने की, इस बात पर दृढ़ विश्वास करने की कि जिस जाति ने तुलसी को जन्म दिया, वह अजेय है, इस बात पर शेष करने की कि तुलसी की संतान आज संसार की सबसे पिछड़ी हुई, बिखरी हुई, निर्धन और दलित जातियों में से है। जिस सामंती व्यवस्था ने तुलसी जैसे सह्यदय कवि को कष्ट दिये थे, उसकी तरफ भी तटस्थ न रहना चाहिए। जनता की एकता हमारा अस्त्र हो, संघर्ष हमारा मार्ग और ऐसा समाज हमारा लक्ष्य हो जिसमें पीड़ित और अपमानित मनुष्य को हताश होकर रहस्यमय दैव की तरफ फिर हाथ न उठाना पड़े। इस कार्य में एक चिरतन प्रेरणा की तरह तुलसीदास साथ रहेंगे।''

भारतीय भाषा चिंतन और साहित्य, समाज तथा संस्कृति के अंत: संबंधों के समझने के लिए रामविलास शर्मा भी एक चिरंतन प्रेरणा की तरह हमारे साथ रहेंगे-डॉ० राजमल बोरा की इस कृति में यह विश्वास अंतर्निहित है। अंतत: इतना ही कि ''राम विलास शर्मा व्यक्ति और कार्य'' समय-समय पर लिखी गयी समीक्षात्मक टिप्पणियों तथा प्रतिक्रियाओं का ऐसा संदर्भ संबलित संकलन है जिसमें व्यक्तिगत संस्पर्श के कारण संस्मरण जैसी आत्मीयता और रोचकता का समावेश हो गया है। यदि इसमें चरितनायक की जीवनी भी संक्षेप में सम्मिलित कर ली जाती तो और भी अच्छा रहता।

संपर्क: रीडर, शिक्षा शोध,
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,
नामपल्ली, स्टेशन रोड,
हैदराबाद, आंध्र प्रदेश

बँटते समाज की अखंडता की कथा: कोई वजह तो होगी

❑ समीक्षक: मनमोहन भारद्वाज

जनवादी पक्षधरता के समर्थक डॉ. राकेश कुमार सिंह का पहला उपन्यास प्रकाशित हुआ-'कोई वजह तो होगी।' यह अन्य तमाम उपन्यासों से अलग इसलिए है क्योंकि इसमें आज देश के लिए सबसे बड़े खतरे के रूप में प्रकट हो रहे जाति या नस्ल की उच्चता के आधार पर आदमी-आदमी को बाँटने वाले पैमाने को बार-बार तोड़ा गया है, क्योंकि इसमें नये समाज की संरचना का सपना देखने वाले विचारकों कबीर, प्रेमचंद व हजारी प्रसाद द्विवेदी की तरह ही एक और प्रयास किया गया है, क्योंकि इसमें औपन्यासिक सौष्ठव के भीतर एक ऐसा वैचारिक सौष्ठव भी है जो पाठक को मानवता के उस मन्तव्य की ओर ले जाता है जिसका लक्ष्य इंसानियत के सिवा और कुछ नहीं है। उपन्यासकार ने आचार्य पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी की मानवतावादी सोच को इस उपन्यास के जरिए और आगे बढ़ाया है।

आचार्य पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है-"विचित्र देश है यह! असुर आये, आर्य आये, शक आये हूण आये, नाग आये, यक्ष आये, गंधर्व आये...,न जाने कितनी मानव जातियाँ यहाँ आयीं और आज के भारतवर्ष को बनाने में अपना हाथ लगा गई जिसे हम हिंदू रीति-नीति कहते हैं, वह अनेक आर्य और आर्येतर उपादानों का अद्‌भुत मिश्रण है।" दरअसल यह विचार बीज अनुकूल रचनात्मक परिवेश पाकर वटवृक्ष की तरह विसा और रूपातंरित होकर बन गया एक उपन्यास-'कोई वजह तो होगी'। इस उपन्यास में स्थापित किया गया है कि कौमें इंसानियत से बड़ी नहीं हैं। जाति या नस्ल की शुद्धता और उच्चता और उसके कारण उपजते अहम् के इंद्रधनुष को भिन्न-भिन्न दिशाओं से इसमें कई बार तोड़ा गया है जिसका मकसद सिर्फ इतना है कि आज स्वस्थ मानसिकता वाले समाज की संरचना हो सके।

देश की सामाजिक संरचना अत्यंत जटिल है। इसमें विजेता रहते हैं और विजित भी। विजेताओं में स्वयं को महान समझने की स्वाभाविक प्रवृति होती है। देश के पौराणिक और ऐतिहासिक महापुरुषों से अपने को जोड़ कर स्वयं को शुद्ध और उच्च समझने की प्रवृति इस उपन्यास में कई बार एक्सपोज हुई है। उपन्यास के प्रारंभ में जब कूर्म क्षत्रिय जाति को कई इतिहास पुरुषों से जोड़ते हुए यह कहा गया कि 'भगवान राम के वंशज राजा सुमित्र के अनुज का नाम कूर्म था और उनके वंशधर हैं यह कूर्मक्षत्रिय।' तब यहाँ पर जो व्यंग्यात्मक अभिव्यंजना हुई, वह ही इस उपन्यास के संप्रेष्य का एक हिस्सा है। देखिये वह कथन और महसूस कीजिए व्यंग्य की गहराई-"सबके सब भगवान राम के ही वंशज बनते हैं।" इसके समर्थन में पंडित जवाहर लाल नेहरू की पुस्तक 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' के कथन को भी उद्‌धृत किया गया है-"बहुत राजपूत क्षत्रिय वंश उस वक्त शुरू होते हैं जब शकों या

> **समीक्ष्य पुस्तक: कोई वजह तो होगी**
> **समीक्षक: मनमोहन भारद्वाज**
> **उपन्यासकार: डॉ. राकेश कुमार सिंह, आगरा**

सिथियनों के हमले ईसा से पहले की दूसरी सदी में होने लगे थे या जब बाद में सफेद हूणों के हमले हुए। इन सभी ने मुल्क में प्रचलित धर्म को, संस्थाओं को कुबूल कर लिया और बाद में इन्होंने महाकाव्यों के वीर पुरुषों से रिश्ता जोड़ना शुरू किया। जितने कामयाब हमलावर होते, सब क्षत्रिय बन जाते।" इस कथन को उपन्यास के इसी परिच्छेद में दूसरे ढंग से, और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है-"आमद के लिए नई-नई वंशावलियाँ गढ़ी गयीं, पौराणिक महापुरुषों के नाम उसमें घुसाये, झूठे शौर्य के गीत गाये।" लेकिन वंश की उच्चता के फूले गुब्बारे की हवा एकदम निकल जाती है जब कहा जाता है-"पृथ्वीराज चौहान के वंशजों को देखो, बहुत से तो ऐसे हैं कि जिनकी लंबाई पृथ्वीराज चौहान के सीने की चौड़ाई से भी कम है।"

उपन्यासकार ने अपने मंतव्य को प्रकट करने में व्यंग्य का पूरा प्रयोग किया है। वह उपन्यास के एक पात्र के मुंह से कहलवाता है-"लेकिन समाज में तो रहते हैं राम के वंशज, कृष्ण के वंशज, ऋषियों-मुनियों के वंशज। समाज में रहती हैं ज्ञानियों-ध्यानियों की संतानें, त्यागी तपस्वियों की संतानें।....., तो फिर इन सभी की रगों में कदाचार का यह गंदला खून कैसे हिलोरें लेने लगा। ये लोग भ्रष्ट लुच्चे-लफंगे कैसे हो गये। सब साले दोगले हैं दोगले।" उपन्यासकार अल्पज्ञ नहीं है। वह विद्याव्यसनी है, अध्ययनशील है। इस व्यंग्य के समर्थन के लिए उसे याद आते है आचार्य पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी। वह कहते हैं-"इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्रारंभ से लेकर बाद तक इस देश में आने वाली, बसने वाली और घुमक्कड़ जातियों के बीच आर्य और अनार्य के बीच रक्त संबंध स्थापित होते रहे हैं और ये परस्पर घुलती मिलती रही हैं। ऐसी स्थिति में रक्त, नस्ल या जाति की शुद्धता का दावा कितना उपहासास्पद हो सकता है, यह कहने की बात नहीं।"

जातीय उच्चता के अहं को बड़ा करने में रक्त की शुद्धता का भ्रम भी कम महत्वपूर्ण स्थान नहीं रखता। उपन्यासकार ने 'कोई वजह तो होगी' उपन्यास के द्वितीय परिच्छेद में एक भारी भरकम व्यक्तित्व के विचार को उपयुक्त स्थान देकर इस भ्रम को तोड़ने का प्रयास किया है। आगे कहा गया है-"मानव सदा घूमन्तू रहा है। कृषि युग से पहले वह घूमन्तू छोड़कर और कुछ था ही नहीं।.....ग्रीक लोग आक्रमण करके भूमध्य सागर के तट पर बस गये। वल्कान छुद्र एशिया में चले गये। केल्ट इताली तक फैलते चले गये। रोमन यूरोप के बहुत से भागों में जा बसे। जर्मन लोग यूरोप और अफ्रीका तक में जा बसे। स्लाबों ने फिरों को हटा कर रूस में उनका स्थान ले लिया। वुल्गार काला सागर का तट छोड़ कर वल्कान में चले गये। हूण कबीले मंगोलिया से चलकर हंगरी में मगियार के रूप में जा बसे। यूरोप निवासी तब तक बराबर चलते-फिरते ही दिखाये देते हैं जब तक कि खेती में वैयक्तिक संपत्ति का अधिकार स्थापित नहीं हुआ। भारत में शक आये, हूण आये, कुषाण आये, मंगोल आये और वे यहीं बस गये। यहाँ की जातियों में अपने आपको खपा दिया। अब किस व्यक्ति के खून में हूण का खून है और किसमें कुषाण का, किसके बाप मंगोल थे और किसकी माँ शक थी यह ढूँढना बालू में से तेल निकालना है।" यह कथन है महापंडित राहुल सांकृत्यायन का, बौद्ध होने से पहले जिनका नाम केदार पांडेय था।

प्रकारांतर से ही सही लेकिन बिल्कुल साफ-साफ व्यंग्यात्मक लहजे में यही बात इस

उपन्यास के छठवें परिच्छेद में फिर कही गई है-"इस देश में हूण आये, शक आये, कुषाण और मंगोल आये तो कहीं चले गये क्या! नवीन समझाने लगा, वे सब के सब यहीं हैं। हम लोगों के बीच में। हम लोगों में ही घुलमिल गये। अब कौन सा ईमानदार और सच्चा है जो कहे कि हम मंगोलों के वंशज हैं, हम हूणों के वंशज है, हम कुषाणों और शकों के वंशज है। सब के सब अपने आपको ब्रह्माजी की मूंछ के नीचे से निकला हुआ साबित करने में लगे हैं।"

आर्थिक और राजनीतिक प्रगति के कारण आज कुछ जातियों का स्तर ऊपर उठा है। उनकी जातीय चेतना जागी, उन्होंने अपने जातीय सम्मेलन किये और अपने आपको पहचानने का प्रयास किया। इस पहचान को असंदिग्ध बनाने के लिए वे वैदिक साहित्य को खंगालने लगे। लेकिन आचार्य पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार-"सभी जातियों का संगठन या उद्‌भव एक ही मूल से नहीं हुआ है। यद्यपि भारतीय विषयों के अध्ययन के लिए यह प्रथा चल पड़ी है कि अध्येतव्य विषय का संबंध वेदों से स्थापित किया जाये अर्थात् प्रत्येक का मूल पुरानी संहिताओं में खोजा जाये और इसीलिए एक श्रेणी के पंडित जातियों के इस स्तर भेद का मूल भी उसमें खोज निकालते हैं। परंतु सही बात तो यह है कि वर्तमान जटिल अवस्था का मूल केवल वैदिक पूर्ण व्यवस्था नहीं है। और इसीलिए **'कोई वजह तो होगी'** उपन्यास के नायक द्वारा कूर्मक्षत्रियों का संबंध वेदों में खोज निकालने पर नायिका जो प्रतिक्रिया व्यक्त करती है, वह आधुनिक समाज की संरचना के लिए आदर्श है। वह कहती है-"वर्तमान में अपने आपको पहचानो। वर्तमान में उसके आधार पर अपना कर्त्तव्य निश्चित करो। वर्तमान के आइने में अतीत को निहारोगे तो दु:खे ही होगा।" इसी प्रकार एक जगह जाति को वेदों से जोड़ने की बात तो अलग, संपूर्ण जातीय इतिहास को ही खारिज कर दिया गया है-" आपका अपना जातीय इतिहास है तो स्वाभिमान पूर्वक सिर ऊँचा करके अपने अहं का प्रसार कर रहे हो लेकिन यदि आपके पास अपना गौरवशाली इतिहास न होता तो... ...,जिनके पास अपना जातीय इतिहास नहीं है क्या उनको स्वाभिमानपूर्वक जीने का हक नहीं है। क्या उनके साथ एक आदमी को एक आदमी की तरह व्यवहार नहीं करना चाहिए।"

'कोई वजह तो होगी' उपन्यास में उस खतरे से खासतौर से सावधान रहने की हिदायत दी गई है जिससे जरा सी चूक होने पर पाठक को संप्रेष्य से दूर हो जाने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता। उपन्यासकार ने किसी जाति के बारे में यदि कोई विवरण प्रस्तुत किया तो वह सूचना उपन्यास की संप्रेष्य नहीं है। यहाँ संप्रेष्य है वह जातीय प्रवृत्तियाँ जिनका संबंध उपन्यास में उद्‌धृत किसी भी जाति से है। जाति विशेष से संबंधित सूचनाएं तो उपन्यास की कथात्मकता का दबाव है। उपन्यास में दिये गये तथ्यों को पहचानें। लेकिन उन तथ्यों को ही संप्रेष्य न मान लें। दरअसल ऐसे नाजुक मसलों में उपन्यासकार सदैव सतर्क रहा है, उसने अपने कथन की विश्वसनीयता के खड़े होने के लिए पहले से ही जमीन अवश्य तलाश ली है और ऐसी जमीन उसे प्राय: आचार्य पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी से मिलती रही है। एक जगह पंडित जी कहते है।-"इतिहास में इस बात के अनेक सबूत हैं कि आर्थिक स्थिति अच्छी होते ही कई जातियाँ क्षत्रिय, वैश्य और ब्राह्मण बन गई। आर्थिक विषमता के कारण कभी-कभी एक ही जाति दो भागों में बँट गई है, संपन्न श्रेणी ऊँची जाति में मान ली गई और असंपन्न श्रेणी निचली जाति में।" पंडित जी द्वारा प्रस्तुत किये गये इस तथ्य को इस उपन्यास में उपन्यासकार ने बड़े ही मनोरंजक और विस्तार से रखा है। प्रसंग आने पर एक जगह कहा गया है-"अखिल भारतीय क्षत्रिय सभा ने हाईकोर्ट उत्तरप्रदेश में एक मुकदमा कायम किया था कि सैंथवार और मल्ल उपजातियाँ क्षत्रिय जाति के अंतर्गत आती हैं अत: इन्हें आरक्षण नहीं मिलना चाहिए जबकि यह दोनों ही उपजातियाँ अपने आपको कूर्मवंशी स्वीकार करते हुए आरक्षण का लाभ ले रही हैं।" इससे आगे इस तथ्य पर और गहराई से सोचने को विवश होना पड़ता है, जब कहा जाता है-"कुछ भी हो इन कुर्मियों और ठाकुरों में कोई न कोई संबंध तो अवश्य है" जगत सिंह ने गंभीर होकर कहा-"वर्ना ठाकुर लोग किसी अन्य जाति वालों को मल्लों और सैथावरों की तरह पकड़ कर जबरदस्ती ठाकुर क्यों नहीं सिद्ध करने लगते!" स्पष्ट है कि यह तथ्य एक प्रवृति है। यहाँ इसे स्पष्ट और सुगम्य बनाने के लिए कुर्मी जाति का उल्लेख किया गया व उसके बारे में कुछ सूचनाएं दी गई हैं। लेकिन ये सूचनाएं संप्रेष्य नहीं हैं बल्कि ये सूचनाएं तो सिर्फ कथा को बल देने के लिए हैं। उपन्यास का संप्रेष्य तो जातीय प्रवृतियाँ हैं जो कि सभी जातियों में प्राय: एक सी ही हैं।

उपन्यास में चौदह परिच्छदों में दो को छोड़ कर सभी में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के इस कथन की ही कथात्मक व्याख्या की गई है-'अनेक जातियों की सामाजिक मर्यादाओं व उतार चढ़ाव के इतने प्रमाण मौजूद हैं कि यह कह सकना साहस मात्र रह गया है कि दीर्घकाल से यह मर्यादा ज्यों की त्यों चली आ रही हैं। एक उदाहरण से पंडित जी की यह बात बिल्कुल साफ हो जायेगी-"उत्तरी भारत के वे तमाम विजेता लोग क्षत्रियों के नये नाम राजपूत के अंतर्गत समाहित हो गये। जिन्होंने वैदिक धर्म के पुनर्उत्थान में मदद की वे वैदिक धर्म के संरक्षक बन गये। उत्तरी भारत में इन राजपूतों की तूती बोलने लगी तो प्राचीन क्षत्रिय, मल्ल, सैंथवार, सिंगरौर, चंदेल, अवधिया आदि ने प्राचीन काल में अपनी संपन्नता के बल पर राजपूतों में प्रवेश करने प्रयास किया। काफी हद तक सफल भी हुए। कहीं-कहीं इनकी गणना राजपूतों की तरह आज भी ठाकुर कह कर की जाती है। लेकिन बहुत से लोग ऐसे भी हैं जो पुन: अपने समाज में लौट आये हैं। मल्ल और सैंथवार ऐसे ही लोगों के उदाहरण कहे जा सकते हैं।

अन्य उपन्यासों की तरह इस उपन्यास में भी मुख्य कथा के साथ कई उप कथायें भी हैं। लेकिन इन उपकथाओं भी उपन्यासकार का इरादा मात्र मानवीय संदेश, एक नई सामाजिक संरचना की संचेतना का विकास ही रहा है। एक उपकथा में एक जगह आया है-"दुष्यंत हैहयवंशी क्षत्रिय है। शिवहरे गुप्ता वैश्य हैं और कलार या कलवार भी। व्यक्ति एक उसके तीन वर्ण।" लोगों को बड़ा उपहास्पद और बनावटी लगता है लेकिन ऐसे लोग वास्तव में अपनी अज्ञानता और धर्म की स्थितशीलता में विश्वास के कारण सत्य से काफी दूर हैं। ऐसे में फिर याद आते है पंडित हजारी प्रसाद जी द्विवेदी, वे लिखते हैं-"राजपूती सेना का वह अंग जो कलेवा की रक्षा करता था, आगे चलकर कलवार के रूप में बदल गया..., न जाने किस जमाने में इन लोगों ने तराजू पकड़ी और अब पूरे बनिया हो गये।...राजपूतों के कलेवा में मादक द्रव्य भी होता था और आगे चलकर इसी मादक द्रव्य ने कलवार की सामाजिक मर्यादा घटा दी।......रसेल साहब को मध्य प्रान्त में एक भी बनिया जाति नहीं मिली जिसकी प्राचीन परंपरा किसी न किसी राजपूत कुल से न हो। अब देखिये उपन्यासकार की दृष्टि, पंडित जी के विचारों के कितना नजदीक है-"आज कहा जा रहा है कि कोई बाह्मण बन रहा है कोई क्षत्रिय बन रहा है तो कोई वैश्य बन कर ही सब्र कर रहा है।" वैसे इस कथन की उपन्यासकार ने स्पष्ट व्याख्या की है-"कोई कौम अपने को ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य मानती है तो उसके आचरण में उस वर्ण विशेष का

आचरण कहीं न कहीं अवश्य विद्यमान है। इस सबकी वास्तविकता से अवगत होने के लिए हमें दुराग्रह से मुक्त होकर सत्य को गहराई में जाकर जाँचना होगा। सबकी वास्तविकता से अवगत होने के लिए इनके समाज की बनावट-बुनावट को सहृदयता के साथ परखना होगा। आज समाज को टुकडे-टुकडे में बाँटने की नहीं वरन् एक ऐसे परिवार की तरह स्नेह से, सद्भाव से, अपनत्व से इंसानियत से बाँध ने की आवश्यकता है जिसके सदस्य भले ही भिन्न-भिन्न पदों पर हों, भिन्न-भिन्न आर्थिक स्तर वाले हों, भिन्न-भिन्न रंगवाले, भिन्न-भिन्न कद काठी वाले ही क्यों न हों।"

साम्यवादी विचारधारा के लोग मानते हैं कि दुनिया में केवल दो वर्ग हैं-'शोषक और शोषित'। लेकिन 'कोई वजह तो होगी' उपन्यास में जब प्रश्न उठाया जाता है-"केवल पुरुष और स्त्री होना ही सच नहीं है क्या!" प्रश्न अपनी जगह पर बिल्कुल सही है। वर्ण की, जाति की वास्तविकता से ऊपर उठ कर उपन्यासकार ने यह स्थापित किया है-"साधु संतों की कोई जाति नहीं होती, महापुरुषों को जातीय आधार पर सम्मान देना गलत है, वे किसी एक जाति एक सीमित नहीं रहते, शासक-प्रशासक को किसी एक जाति के रूप में देखना गलत है, यदि जाति इतनी ही अनावश्यक और गलत है तो फिर लोग क्यों लिखते हैं ठाकुर सुरेन्द्र प्रताप सिंह, तो फिर लोग क्यों लिखते हैं पंडित देव नारायण त्रिपाठी! चुनाव में प्रत्याशी की जाति के आधार पर टिकट क्यों दिया जाता है! क्यों लिखवायी जाती है विद्यालयों में जाति!" इस उपन्यास में जब नायक अपनी जाति के महापुरुषों के बारे में बताये जा रहा है, तब बीच में ही नायिका उसे रोक देती है-"बस, बस रहने भी दो। अब तुम गिनाओगे इस जाति के शिंदे की ग्वालियर स्टेट, भोंसले की कोल्हापुर, नागपुर, सतारा स्टेट। पवारों की देवास, मालवा स्टेट, सैंथवारों की पडरौना स्टेट आदि आदि, फिर गिनाओगे इस जाति के राजा, महाराजा, इस जाति के राज्यपाल इस जाति के मुख्यमंत्री और........"

"हाँ-हाँ सब गिनाऊँगा, हैं, हुए हैं तभी तो.... .....!"

"लेकिन इससे क्या फर्क पड़ता है। किसी भी वंश या जाति के हों, विशिष्टजनों की विशिष्ट आवश्यकतायें, विशिष्ट समस्यायें। सामान्यजनों की सामान्य आवश्यकतायें और सामान्य समस्यायें।" नये समाज की संरचना के लिए आज ऐसे ही सोच की आवश्यकता है।"

हिंदू संस्कृति के विश्वास की जमीन पर उपन्यास ने खडे होकर इंसानियत के सोच को फिर एक आवाज दी है। समाज में जब जातीय आधार पर कोई किसी के साथ भेदभाव कर रहा होता, है ऊँच नीच का दुर्व्यवहार कर रहा होता है अथवा किसी का मानसिक आर्थिक उत्पीड़न कर रहा होता है तो उसे क्या मालूम कि यह व्यक्ति पूर्व जन्म में उसका पिता था, भाई था, बेट था, या बहिन थी या माँ थी। अथवा वह ब्राह्मण था क्षत्रिय था वैश्य था या शूद्र था। इसी प्रकार की स्थिति इस उपन्यास में तैयार की गई है। जब उपन्यास के एक पात्र ठाकुर जगत सिंह अपने पिता ठाकुर रक्षपाल सिंह को अगले जन्म में एक मेहतर की संतान के रूप में पहचानते हैं। इस बच्चे को अपने पिता के रूप में पहचान कर जब ठाकुर जगत सिंह इसके प्रति संबंध प्रदर्शित करते हैं तो बच्चे की माँ के प्रश्न हर समझदार आदमी को सोचने पर विवश कर देते हैं। वह कहती है-"इससे पहले भी क्या कभी सोचा है कि कलुआ मेहतर की औलाद ठाकुर भी हो सकती है। ठाकुर रक्षपाल सिंह हो सकती है। इससे पहले भी क्या कभी सोचा है कि हमारी तरह के तिवारी, शुक्ला, गौतम, भारद्वाज, वाजपेई, चौहान, चंदेल, सिसौदिया, तोमर आदि कितने ही लोग अपनी अछूत माताओं का दूध पी-पी कर बड़े हो सकते हैं, हो रहे हैं! हम माताओं की गोद में किलकते, हमारी जूठी थालियों में मुँह देते बच्चे क्या इससे पहले भी पहचाने हैं कि ये ठाकुर कृष्णपाल सिंह हैं कि ये ठाकुर राजवीर सिंह हैं कि ये पंडित ज्ञान प्रकाश तिवारी हैं कि मनोज वाजपेई हैं। क्या इससे पहले भी किसी बच्चे को देखकर आपको लगा है कि कहीं यह मेरे पिताजी न हों।" यदि ऐसा सोचने लगे तो....., सारा संसार एक परिवार की तरह दिखायी देने लगेगा। और ऐसा सोचने के लिए प्रेरित करना केवल सच्चे साहित्य का ही उद्देश्य है। सद्साहित्य ही लोगों के हृदयों का परिष्कार करता है और चरित्र का उन्नयन करता है। मानवतावादी आचार्य पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी मानते हैं कि 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है और साहित्य ही मनुष्य में यह समझ पैदा करेगा कि-सारा देश आपका है। भेद और विरोध ऊपरी हैं। भीतरी मनुष्य एक हैं। इस एक को दृढ़ता के साथ पहचानने का यत्न कीजिए। जो लोग भेदभाव को पकड़ कर ही अपना रास्ता निकालना चाहते हैं, वे गलती करते हैं। विरोधी रहे हैं तो उन्हें आगे भी बने ही रहना चाहि। यह कोई काम की बात नहीं हुई। हमें नये सिरे से सब कुछ गढ़ना है। तोड़ना नहीं है, टूटे को जोड़ना है।' ऐसे ही दृष्टिकोण को न्यायिक फलक पर रखकर उसकी कथात्मक व्याख्या करने वाला यह उपन्यास है-**'कोई वजह तो होगी'**। देश को, समाज को जब तक आचार्य पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी की इस मानवतावादी दृष्टिकोण की आवश्यकता है, इस उपन्यास की आवश्यकता, प्रासंगिकता, उपयोगिता खत्म न होगी।

संपर्कः संपादक-'अनुभूति सृजन'
22/111, नाम दरवाजा,
आगरा-282003

......पृष्ठ 22 का शेषांश

अखंड राष्ट्रीयता, स्वस्थ सामाजिकता एवं मानवता के लिये भी घातक सिद्ध हो रहे हैं। अपने जातिवादी अहंकार, स्वार्थी विचार एवं तुच्छ मानसिकता का शिकार हुई न तो जनता ही किसी स्वस्थ एवं सकारात्मक विचार का सत्कार करती है और न जनता के तथाकथित सेवक बने हुए जनप्रतिनिधि ही। ऐसे विषम, विकट एवं विषमय वातावरण तथा परिस्थिति से जनता, जनतंत्र तथा देश व समाज को उबारने-उद्धारने के लिए सच्चे साहित्यकार एवं प्रबुद्धजन ही कुछ कर सकते हैं, किंतु उनमें भी अनेक लोग स्वयं अपने-अपने अहमभाव, साहित्यिक दंभ एवं लौकिक स्वार्थ-भोग की मरुमरीचिका में भूले-भटके तथा सम्मान पुरस्कार की प्यास के मारे बेचारे बने हुये हैं। उनकी अपनी-अपनी जातियाँ हैं जिनसे बाहर निकलकर सामाजिकता, राष्ट्रीयता एवं मानवता के मार्ग पर चलने में स्वयं के मिट जाने का भय इनको उबरने नहीं देता। यदि इनमें सच्चे साहित्यकार की सच्ची ज्योति जाग्रत हो जाती, तो इनसे भारतीय समाज पतन के गर्क में जाने से रुक सकता था, क्योंकि साहित्यकार सचमुच ही समाज व देश का भाग्यविधाता होता है। वह अपने उज्ज्वल विवेक-विज्ञान और भाव-विधान से जिस उज्ज्वल अमृत काव्य एवं साहित्य का अवदान प्रदान करता है, उससे समग्र मानव समाज के कल्याण का अरुणोदय उल्लसित होता है। इसलिये भौतिक विज्ञान के अवदान नहीं, सच्चे संत साहित्यकार ही लोक एवं समाज का मंगलविधान एवं उज्ज्वल विहान ला सकते हैं जिसमें समग्र समाज का कल्याण और परित्राण निहित है।

भाव प्रवण रचना 'बूंद फूल और मैं'

❑ समीक्षक : युगल किशोर प्रसाद

समीक्ष्य कविता-संग्रह, 'बूंद फूल और मैं आकर्षक साज-सज्जा के कारण सहज ही किसी को आकर्षित करने में सक्षम है। आवरण कलात्मक कलेवर सहृदय को अपनी ओर खींचता है। शुभम प्रकाशन, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित यह पुस्तक 'लिफाफा देखकर मजमून भांप लेने की उक्ति को चरितार्थ करती है। आवरण पृष्ठ के वाम अध-पार्श्व में हरे पत्तों के साथ चार श्वेत-वर्णी पंखुड़ियों वाले तीन फूल-केन्द्र में पीतवर्णी तन्तु और दाहिने पार्श्व में अच्छे नाक-नक्श वाली तरुणी, जिसकी बांयी आँख से दलका अश्रु की बूंद और दक्षिण कोने में लाल-श्वेत लिखावट में कवयित्री का नाम-सचमुच मनमोहक है।

कविता-संग्रह का शीर्षक, 'बूंद, फूल और मैं, भी भाव-व्यंजक है। पुस्तक के पृष्ठों का मजमून क्या है, इसका स्पष्ट संकेत शीर्षक देता है। कवयित्री का वाह्य प्रकृति से लगाव स्पष्ट परिलक्षित हो जाता है। तरुणी की आँख से टपका अश्रु-बूंद वेदना सूचक है। ये खुशी के आँसू नहीं हैं, चेहरे की भाव-भंगिमा से स्पष्ट है।

कविता वस्तुतः कवि व कवयित्री के अंतर्वेदना की ही शाब्दिक अभिव्यक्ति है। अश्रु-बूंद जहाँ जीवन के अवसाद का द्योतन करता है, फूल जीवन की रमणीयता, कमनीयता का। समाज या समष्टि की प्रतिनिधि कवयित्री की निजता-व्यष्टि रूप में-एकवर्णी शब्द से व्यंजित होता है। जीवन अपने व्यष्टि या समष्टि रूप में सचमुच अवसाद और रमणीयता-दु:ख और सुख के समन्वित रूप का नाम है। शीर्षक की भाव-प्रवणता, अर्थ-वैभव सहज ही सुधी पाठक का ध्यान आकृष्ट करने में सक्षम है।

कवयित्री ने आत्म-कथ्य में 'किन्हीं नीख क्षणों' की बात कही है। वे नीर व क्षण निश्चय ही संवेदना की तीव्रता, अनुभूतियों की सघनता के क्षण हैं। तीव्र अनुभूतियाँ प्रकटीकरण के लिए छटपटाती हैं और अभिव्यक्ति के प्रयास में अनुभूतियाँ शब्दों का आकार ले पाती हैं। अमूर्त्त भाव मूर्त्त हो जाते हैं और निराकार साकार। कविता रचना भी एक साधना है। साधक भी नीर व क्षणों में अपना ध्यान आराध्य की ओर केद्रिंत करता है और ध्यान के केंद्रित होने पर उसके हृदयाकाश में चरम सत्य की प्रतीति या आराध्य की प्रत्यक्ष अनुभूति हो पाती है। सरस्वती की साधना प्रक्रिया भी साधक-आराधक की प्रक्रिया से भिन्न नहीं। निश्चय ही कवयित्री वाग्देवी की सफल साधिका-आराधिका है।

यहाँ यह भी गौरतलब है कि मीरा जैसी महीयसी साधिका ने भी कर्म कोलाहल से अपने को अलग कर एकान्तिक क्षणों में कृष्ण-भक्ति के गीत गाए थे। कवयित्री वीणा जैन उस बिरल साधना-परंपरा की आधुनिक कड़ी है। इनकी रचनाओं में आधुनिक कविता के तत्व अनुस्यूत हैं। कवयित्री ने अपनी ईमानदार अनुभूतियों की विवेकपूर्ण अभिव्यक्ति यथार्थ की भाव-भूमि पर अपने पांव जमाए रखकर दी है। भले ही उनकी आँखें आस्मां को भी निहारती हों, किंतु मिट्टी से उनका विशेष लगाव है। उनकी कविताओं में आशा-निराशा, आस्था-अनास्था के मिश्रित स्वर हैं। उनकी कविताएँ मुक्त छंद में रचित हैं, इस प्रकार उन्होंने छंद की शास्त्रीय वर्जनयों से अपने को मुक्त रखा है। मेरा भी मानना है कि रचनाकार को शिल्प से अधिक कथ्य पर ही ध्यान देना चाहिए। रूप और वस्तु में वस्तु की श्रेष्ठता निर्विवाद है। शिल्प के प्रति विशेष आग्रह से रचना प्रक्रिया के स्वच्छंद प्रवाह में बाधा पहुँचती है।

समीक्ष्य काव्य संग्रह : 'बूंद, फूल और मैं
कवयित्री : वीणा जैन
समीक्षक : युगल किशोर प्रसाद
प्रकाशक : शुभम प्रकाशन, इलाहाबाद।

यथार्थ के धरातल पर चित्रित रचनाएँ जीवन के करीब होती हैं। रचनाकार का प्रयास कलात्मकता से अधिक भाव पक्ष पर होना रचना को स्वाभाविकता प्रदान करता है। तर्क-बुद्धि पर आधृत रचनाएँ विश्वसनीय होती हैं। कवयित्री वीणा जैन की कविताओं में हमें मानवीय प्रेम भावना के भी दर्शन होते हैं। कवयित्री की आधुनिक सोच-हार में जीत, निराशा में आशा का उद्घोष करती प्रतीत होती है। लघु कलेवर में प्रस्तुत ये कविताएँ 'सतसैया के दोहरे अरुनावक के तीर, देखने में छोटन लगै घाव करै गंभीर, की तरह मर्म को छूने वाली हैं। ये विचार संपन्न और हृदयग्राही हैं।

संग्रह की अंतिम कविता, 'शब्दों का आभार कहो', इसलिए महत्वपूर्ण है चूंकि इस कविता में कवयित्री की रचना-प्रक्रिया का संकेत सन्निहित है। प्रत्येक रचना वैसे भी, भावों-विचारों की शाब्दिक अभिव्यक्ति है। कवयित्री ने शब्दों की महत्ता को प्रकृति की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत किया है। प्रकृति इनकी रचनाओं का कैनवास है। प्रकृति का फलक चूंकि अति विस्तीर्ण है इसलिए भावों-विचारों को भी अपेक्षित विस्तार मिल जाता है। अनुभूतियों को विशेष विस्तीर्ण जगह भी मिल जाती है, प्रकृति को कैनवास बनाने से।

जीवन में पतझड़ का आगमन और पतझड़ के बाद बसंतागम, यानी दु:ख के बाद सुख का आना और जिंदगी के प्रति इसी कारण पयार का उदित होना तार्किक और जिंदगी का यथार्थ है। जीवन आंसुओं की करुण गाथा है। यदि 'शब्द' न हों तो जिंदगी आंसू के पारावार में डूब जाएगी। इस रचना में 'कवि-शब्द' और शब्द रचित कविता के महत्व को कवयित्री ने रेखांकित किया है। कविता के प्रति बढ़ रही अरुचि और पाठकों का अभाव चिन्ता का विषय है। कवयित्री ने हमें अगाह किया है कि सपनों के टूटने-बिखरने, और अवसाद से उबरने का एकमात्र उपाय कविता रचना और उसका पठन-पाठन है। कवयित्री की रचना प्रक्रिया और शब्द की महत्ता को रेखांकित करती संग्रह की अंतिम कविता 'शब्दों का आभार कहो 'संग्रह में संकलित प्रत्येक रचना का सर्जक और अन्तस-प्राण है।

छोटी किन्तु अर्थपूर्ण कविता 'चिड़िया' मानवेतर प्राणियों से कवयित्री के साथ-साथ हम पाठकों को भी जोड़ती है। चिड़िया की

सोच, उसकी प्रकृति हम मानवों से भिन्न नहीं। हमारी-आपकी तरह वह भी घर बसाने का सपना देखती है। चिड़िया हमारी तरह चौकन्नी है, वह 'दरख्तों की/भीड़ में/भी 'ढूँढ लेती है, नीड़ अपना।' उसी तरह छोटी किन्तु अर्थ-भाव संकुल शीर्षक 'एक पहेली उसकी सी' खुदा की पड़ताल करती प्रतीत होती है। ईश्वर या खुदा 'उलझी पहेली' के अतिरिक्त है भी क्या यह अनास्था भाव इस रचना को आधुनिक कविता से जोड़ती है। कवयित्री की दृष्टि में वक्त के ठहर जाने पर अनास्था और वक्त के गतिशील होने पर मन में आस्था उदित होती है। एक ही साथ मन में अनास्था और आस्था का द्वैत बना रहता है।

चांद का मानवीकरण 'चांद' शीर्षक कविता में हमारा ध्यान खींचता है। पूनम की रात अपने पूरे तेज से चमकता हुए चांद का पोखर के ठहरे हुए पानी में अपना चेहरा देखना और बेदाग होने की खुशफहमी में सुबह होने तक मुस्कुराता रहना हम मानवों की भाव-दशा की ओर इंगित करता है। अमावस आते-आते चांद का पूर्णत: चूक जाना मानवीय जीवन की दशा- उत्थान के बाद पुन: पतन की गाथा कहता है। चांद का 'कभी मायूस और कभी मासूम नजर आना, मानवों की भाव-दशा है।

'सपनों की बातें' शीर्षक कविता भी अर्थपूर्ण और भाव-व्यंजक बन पड़ी है। देखते ही देखते दिन बीत जाता है, रात बीत जाती है। 'प्रेमास्पद आता है तो प्रिया चल देती है।' यही जीवन की बिडंबना है। 'फिर कौन जलाता-'मेरे सपनों की बाती?' कवयित्री उस दिन का इंतजार करेगी, जब 'लेगी कोई कविता उजालों की, जब/ मेरे पन्नों पर अंगड़ाई .....। उजाले का इंतजार हम-आप सभी करते हैं। प्रकृति की पृष्ठभूमि में मानवीय भावों का ऐसा सजीव चित्रण विरल है। एक पृष्ठ में सिमटी कविता की परिधि में हर सुबह की स्वर्ण किरण, पिया आगमन का आश्वासन देती 'ढलती सांझ' और रात का चित्र समाया हुआ है। जीवन की प्रकृति से अलग अस्तित्व नहीं। समय जीवन का नियामक है। अलग-अलग समय में अलग-अलग भावोद्रेक; सुबह शाम-रात समय की सूचक इकाइयाँ हैं।

'तुम आये नहीं घनश्याम' शीर्षक से उपालंभ कविता मालूम पड़ती है। मीरा की तरह कवयित्री वीणा जी कृष्ण की अनुरक्ता हैं। 'सूखे थे कंठ/पायल थे पैर/ गुजरे जो, मरूथलों से/हर कदम पर/ नाम था तेरा लब पर'-कर से कर्म करौ विधि नाना, मन राखो जँह कृपानिधाना-यह सीख है, किन्तु कवयित्री ने उस सीख को व्यवहार में उतार लिया है। भक्त हृदय आराध्य की लीला भूमि में, उनकी वाणियों में, अन्तस में भी आराध्य को ढूंढ़ता है। कवयित्री की भक्ति-भावना का परिचय यह कविता हमें देती है।

'बापिस अपनी बस्ती में' एक प्रतीकात्मक कविता है। दुनिया कभी 'दिल वालों की बस्ती थी, किंतु अब यह 'भेडियों और शृगालों की ..... बस्ती में' तब्दील हो गयी है। इस दुनिया में 'भोला-भाला हिरण' की गुजर नहीं, जिसमें 'बरकरार है अभी/उसकी आँखों का भोलापन/उसका सीधा, सरल मन।' भेडिए, शृंगाल दुष्टता के पर्याय हैं, और हिरण सजन्नता का। दुष्टओं की दुनिया में सज्जनों का जीना दूभर है। बिल्कुल 'जहाँ सौ कसाई, वहाँ एक कबीर की क्या बसाई' जैसी विषम स्थिति। आज की छल-छद्म भरी दुनिया का सही चित्रण इस कविता में हुआ है।

'यादों में'......प्राकृतिक परिवेश की चित्रमयी रचना है। कवयित्री का मन आह्लादित है-'आ मन, कुछ बातें करें। बीते ना रैना। वह मन से बात करना चाहती है। कविता आत्मालाप ही तो है। सोए शहर, सुरमई अंधेरा, फूलों से लदी डाल पर बैठी मैना, पत्तों की भोली बातें, खुश रात सधी तुलिका से सधे चित्रकार की नाईं इतना सारा चित्र कवयित्री एक साथ ही खीच पायी हैं, और वह भी एक ही रचना में।

'मत बोल री कोयलिया' रचना में कवयित्री कोयलिया को टूटने से मना करती है। यह परंपरा से हटकर है। यह आधुनिक कविता का विशिष्ट लक्षण है। वह अभी सोना चाहती है, सुनहले सपनों में खोयी रहना चाहती है, चूंकि 'सपने ही तो हैं अपने।' कवयित्री के जीवन से बसंत बीत चुका। कोयलिया की कूक मन में हूक जगाती है। कवयित्री को अपनी जीवन-संध्या में स्वर्णिम सुबह की प्रतीक्षा है। प्रकृति कोकिला की कूक के रूप में मुखर है। कवयित्री नीरवता चाहती है।

'कैक्टस' का कांटा जीवन का कंटक और उसका फूल---'अबोध बाल मन/पिघलते पयार सा कोमल, नाजुक है। कैक्टस कवयित्री की दृष्टि में संवेदनहीनता का प्रतिरूप है।

'इन्सानियत' कविता आज की तल्ख सच्चाई को उजागर करती है। इन्सानियत बिक चुकी। कवयित्री के शब्दों में 'पत्थर की मूरत हो गई है इन्सानियत।' एक पथरीली चट्टान बन कर रह गई है इन्सानियत/पछाड़ खाती लहरों के दर्द से/बिलकुलपेपर चाह'-बड़ा भावपूर्ण चित्रण है। वह 'अहिल्या को जीवन-दान देने वाले....राम' से प्रार्थना करती है---'फिर जन्म लो मेरे देश में---कि तुम्हें जीवित करना है, संवेदना के तन्तुओं को, मरती हुयी इन्सानियत को'---अहिल्या-प्रसंग को नया संदर्भ प्रदान किया है, कवयित्री ने। इस अर्थ में भी कवयित्री आधुनिक हैं।

इस परिप्रेक्ष्य में मैं कहना चाहूँगा कि भक्तिकाल से अद्यतन युवा तक हिन्दी साहित्य में कवयित्रियों की गौरवशाली परंपरा रही है। महीयसी मीरा एवं महादेवी की गीतात्कता, संवेगता का संपूर्ण हिन्दी जगत लोहा मानता है। उनकी मर्मस्पर्शिनी पंक्तियाँ पाठकों को भाव-विभोर करती हैं। सुभद्राकुमारी चौहान का ओज हृदय में वीरता का संचार करता है। तात्पर्य यह कि अपनी मर्म-मधुर रचनाओं से कवयित्रियों ने मर्म को छुआ। उस गौरवशाली परंपरा में वीणा जैन एक सशक्त हस्ताक्षर हैं।

अपने पिता का शब्द-चित्र प्रस्तुत कर कवयित्री ने पितृऋण चुका दिया। 'बोल मेरे गीत के' प्राकृतिक पृष्ठभूमि में रचित छोटी किन्तु भाव प्रवण कविता है।

प्रस्तुत संग्रह अपने प्रकाशन स्थल की तरह भाव-विचार कल्पना का अदभुत संगम है। उस दृष्टि से यह रचना इच्छा ज्ञान और क्रिया का पावन तीर्थराज है। प्रत्येक कविता भावों-विचारों की स्वर्णिम मंजूषा है। कविताओं का परिवेश प्रकृति और कवयित्री की भावभूमि छायावादी कवियों के समान है। भिन्नता है तो यथार्थपरक दृष्टिकोण में। लालच से कविताओं में चार चांद लग गया है।

ऐसी भाव-प्रवण रचना प्रस्तुत करने के लिए कवयित्री को सौ बार बधाई। उनकी लेखनी सतत गतिमान रहे, और रस के निर्झर फूटते रहें, इसी मंगल-कामना के साथ।

संपर्क: बिहारी पथ,
न्यू विग्रह पुर, पटना-1

हिंदी-पत्रकारिता में अभिनव आयाम

❑ समीक्षक: डॉ० श्रीरंजन सूरिदेव

समीक्ष्य पुस्तक: 'हिंदी पत्रकारिता: सिद्धांत से प्रयोग तक'
लेखक: अरुण कुमार भगत

सूचना-क्रांति और समाचार- माध्यमों की साख की व्यापकता के इस युग में पत्रकारिता के क्षेत्र में अनेक नए आयाम उद्भावित हुए हैं। आज पत्रकारिता-विषयक वैचारिकी ने भूमंडलीय स्तरीयता आयत्त की है और उसकी प्रविधि और प्रतिमान में अनुमानातीत बदलाव आया है, जो युगोचित है और समकालीन भी। अधुना, हम समाचारों को केवल देखते या सुनते ही नहीं हैं, अपितु उनके वैचारिक सिद्धांत और व्यावहारिक प्रयोगों को जीते भी हैं।

निश्चय ही समाचार आज समग्र जन-जीवन का अनिवार्य अंग बन गया है। हमारा सोना-जागना समाचारों में ही होता है और हमारी दैनिक कार्य-प्रक्रिया समाचारों से ही संपुटित रहती है। हमारे जीवन के उत्कर्ष और अपकर्ष में भी समाचारों की मुख्य भूमिका होती है। 'उदन्त मार्त्तण्ड' से 'हिन्दुस्तान' तक की हिंदी-पत्रकारिता ने जाने कितनी करवटें ली हैं। इन सबका आकल ही पत्रकारिता से जुड़े ग्रंथ-लेखकों का लक्ष्य रहता है। हिंदी के प्रबुद्ध पत्रकार श्री अरुण कुमार भगत द्वारा प्रस्तुत 'हिंदी-पत्रकारिता: सिद्धांत से प्रयोग तक' नामक कृति का मूल्यांकन इसी परिप्रेक्ष्य में अपेक्षित है। सच पूछिए तो यह कृति आधुनिक पत्रकारिता के शिक्षण, प्रशिक्षण और समीक्षण की त्रयी पर आधृत है। पत्रकारिता में प्रवेशोत्सुकों के लिए तो यह सोपान-सदृश है।

युगचेता पत्रकार श्री भगत विश्वविद्यालयीय उच्च शिक्षा और सहज नैतिक संस्कार से संपन्न मनस्वी एवं कर्मठ युवा हैं। इन्होंने पत्रकारिता का भी विधिवत् विश्वविद्यालयीय प्रशिक्षण प्राप्त किया है। इसलिए वार्ता-लेखन में भाषागत प्रौढ़ता और विषयगत यथार्थोन्मुख तथ्यता की दृष्टि से इन्होंने हिंदी की युवापीढ़ी के पत्रकारों में अपना वरेण्य स्थान आयत्त किया है। इनका मंतव्य है कि प्रत्येक पत्रकार के लिए उसका शिक्षित और प्रशिक्षित होना आवश्यक है। यह पत्रकारिता को शिक्षा, श्रम और अभ्यास से उपलभ्य कला के रूप में स्वीकार करते हैं।

श्री भगत ने प्रस्तुत कृति में पत्रकारिता से जुड़े संदर्भों को कुल ग्यारह प्रकरणों में पल्लवित किया है, जिनमें पत्रकारिता की परिभाषा और उसके उद्देश्य एवं सामाजिक दायित्व के विवेचन के साथ ही समाचार-संकलन की पद्धति और उसके लेखन के सिद्धांत पर विशद विश्लेषण उपन्यस्त हुआ है। पुनः संवाददाताओं की अर्हता, उत्तरदायित्व और उनके कार्यों का निर्देश किया गया है। उसके बाद समाचार-संपादन और संपादन के सिद्धांतों पर प्रकाश-निक्षेप हुआ है। इसी क्रम में संपादक का कार्य और उसके राष्ट्र, समाज, सरकार, पाठक तथा समाचार-पत्र के स्वामी और संचालकों के प्रति उत्तरदायित्व की पुंखानुपंख चर्चा सूक्ष्मता और व्यापकता के साथ की गई है। और फिर, संपादकों के श्रेणी-विभाजन में संपादक से प्रशिक्षु संपादक और प्रूफ-संशोधक तक को सम्मिलित किया गया है और काफी बारीकी से सबके कार्यों और अंत:संबंधों का उल्लेख हुआ है। उसी प्रसंग में समाचार-पत्रों की पृष्ठ-सज्जा जैसे नितांत प्रविधिक पक्ष पर भी दृक्पात किया गया है। प्रूफ-संशोधन की पद्धति पर कई आचार्यों के मत को उद्धृत करते हुए लेखक ने उसका श्लाघनीय मूल्यांकन किया है, जिससे यह स्पष्ट हुआ है कि संपादन-कला का प्रूफ-संशोधन के साथ अविच्छेद्य संबंध है।

पत्रकारिता-प्रविधि के अनुभवी एवं प्रज्ञावान् लेखक ने अपनी इस कृति के अंत में 'पत्रकारिता-प्रशिक्षण: समस्याएँ, संभावनाएँ और संस्थान' शीर्षक सातिशय उपादेय प्रकरण का विनियोग किया है, जिसमें प्रशिक्षण का इतिहास, प्रशिक्षण के बाद रोजगार की संभावनाएँ जैसे आकांक्षित विषयों का आकलन किया है और अंत में भारत के विभिन्न पत्रकारिता-प्रशिक्षण- संस्थानों की तालिका भी सुलभ कर दी है। इस प्रकार, यह कृति पत्रकारिता-शास्त्र की सैद्धांतिक विवेचना की उपन्यासिक तो है ही, प्रायोगिक निदर्शन और व्यावहारिक सूचना की भी संवाहिका है। संक्षेप में कहें तो यह कृति 'पत्रकारिता-परिचायिका' या पत्रकारिता-निर्देशिका' का महत्व रखती है।

शोध-सूक्ष्मेक्षिका से संपन्न लेखक श्री भगत ने इस कृति में संपादन के संदर्भ में कतिपय श्रेष्ठ संपादकों के सिद्धांतों का भी आकलन किया है। जैसे-:आचार्य शिवपूजन सहाय का-मधुकरी वृत्ति का सिद्धांत, डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव का-मौलिकता के विसर्जन का सिद्धांत, डॉ. ओम नागपाल का-प्रक्षालन का त्रिस्तरीय सिद्धांत तथा राधेश्याम शर्मा का-तथ्यों के विश्लेषण का सिद्धांत। अवश्य ही, इस प्रकार का सिद्धांत-विश्लेषण पत्रकारिता-विज्ञान के अधीतियों के लिए नए परिवेश का प्रस्तावक होगा।

कुल मिलाकर, श्री भगत की यह कृति पत्रकारिता के तत्त्व-जिज्ञासुओं के लिए अतिशय महत्त्वपूर्ण तथ्यों की निर्देशका सिद्ध होगी। आज की युवापीढ़ी की पत्रकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय भागीदारी है। उसके लिए यह कृति सच्ची दिङ्निर्देशिका का काम करेगी; क्योंकि इसमें पत्रकारिता-विज्ञान की जैसी तथ्यात्मक व्याख्या की गई है, वैसी व्याख्या इत:पूर्व नहीं हुई है। पत्रकारिता के नव्यालोचन का यह प्रयास स्तुत्य है।

श्री भगत द्वारा वैज्ञानिक दृष्टि से उपस्थापित पत्रकारिता का सामाजिक दायित्व, समाचार के तत्त्व, समाचार के स्रोत, संपादक का निरीक्षणात्मक कार्य, समाचार-लेखक की तकनीक, लेखन के प्रकार आदि तात्त्विक प्रसंग पत्रकारिता के प्रशिक्षुओं के लिए ही नहीं, अपितु संपादकों के लिए पठनीय और माननीय हैं। इनसे पुस्तक का 'हिंदी-पत्रकारिता: सिद्धांत से प्रयोग तक' नाम अक्षरश: अन्वर्थित हुआ है। यद्यपि इसमें एक ऐसे प्रकरण का विन्यास अपेक्षित रह गया है, जिसमें आज की 'गाड़ी-वाड़ी-फैन-फोन' वाली पत्रकारिता की यथार्थोन्मुख उपभोक्तावादी समृद्धतर स्थिति के मूल में पूर्व-पत्रकारिता की आदर्शोन्मुख यथार्थवादी तपोमूलक अकिंचन स्थिति की सत्ता का समानांतर आकलन होता; क्योंकि अतीत और वर्तमान की स्थितियों के बीच कार्य-कारण संबंध निरूपित करने का प्रयास आधुनिक विवेचना की मुख्य प्रवृति है।

संपर्क: पूर्व निदेशक,
बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना

मेरे संशोधन की दिशाः भील "लोक"

❑ डॉ. भगवानदास पटेल

मेरे संशोधनयात्रा गुजरात के खेड़ब्रह्मा एवं दांता तहसील के भूस्तर के हिसाब से दुनिया के एक प्राचीन पर्वत अरावली की गिरिमाला में बसी भील प्रजाति के कंठस्थ साहित्य तक ही सीमित है। लोकसाहित्य के संशोधन में, "लोक" को उसके समवेत् सामाजिक तथा धार्मिक संदर्भ में उपासित करना होता है। बीस साल से इस प्रदेश तथा यहाँ के जनसमुदाय के साथ रहते, उनसे हिलमिल जाते तथा उनके साथ संवादिता हो पाने के फलस्वरूप "लोक" के विविध स्वरूपों में से जो एक-दो रूप के दर्शन हुए और उसी दर्शन की उपलब्धि रूप आनंद को मैं यहाँ आप सबके बीच बाँटने आया हूँ।

आदिवासी "लोक" की इस शोध-अनुसंधान प्रवृत्ति के अंतर्गत, सर्वप्रथम 1983 में "लीला मोरिया" प्रसिद्ध हुआ। किंतु इस प्रथम प्रकाशन के पाँच वर्ष पूर्व, आषाढ़ की एक मेघ मेदुर शाम की बेला, खेड़ब्रह्मा शहर के हृदय समान हरणाव नदी के पुल के ऊपर से गुजर रहा था। प्रकृति के हरे भरे समुद्र के बीच चित्त छलक रहा था। मेरे पीछे भील तरुण-तरुणियों का एक छोटा-सा समूह लोकनृत्य की मुद्रा में फुर्ती से चलता और गाता हुआ आ रहा था। मैं उनके गीत की बोली समझ नहीं पा रहा था, तथापि वर्षा से भींगे लोकगीत के स्वर, हृदय में अकथ्य अनुभूति पैदा करते थे। तरुण सर्वप्रथम गीत का आरंभ करते थे, और बाद में देह की एक लाक्षणिक लय-लोच के साथ श्यामवर्ण तरुणयों गीत का अनुमान करती थीं। उस समय कुछ युवक मुख के उपर हाथ रखकर आवाज को बार-बार अवरोध कर आनंद की किलकारियाँ करते थे। कौतुक से प्रेरित मैं भी उस वनवासी वृंद के साथ हो लिया। मन में बार-बार यह हुआ करता था कि नहीं समझे जानेवाले इन गीतों में ऐसा कौन सा अंतः सत्त्व है कि आर्थिक और यंत्रयुग की विषमताओं के विपरीत इतना बड़ा लोकसमुदाय आनंद में रसलीन होता है!

पाँव की विशिष्ट ठेस-थाप के साथ तरुण ने गीत गाने का आरंभ किया। गीत के आवर्तित होते कुछ शब्दों को मैंने चित्त में अंकित कर लिये। गीत की पंक्तियाँ इस प्रकार थीं:

माँय परणावी दूरा देस,
झलुको मिली देझे ला!
अेंण झलुके न झलुके पासी आवुं ला!

मैंने इन पंक्तियों का अर्थ मेरे एक भील आदिवासी छात्र जुमाभाई पारघी को पूछा। उसने गीत का अर्थ बताया, "हे गोठिया (प्रेमी)! मेरा विवाह दूर देश करवा दिया गया है; किंतु तेरे बिना वहाँ मन लगता नहीं। अतः तुम एक आईना रख देना कि जिसके उपर परावर्तित होते सूर्यप्रकाश के साथ मैं वापिस आऊं! और तुमसे मिलूं! तेरे में समा जाऊं!" सूर्य प्रकाश की तीव्र गति के साथ वापिस आकर प्रमी में समा जाने की यह कल्पना चिरनूतन! वाह! मन बड़ा ही प्रसन्न हो उठा! मन बार-बार कहने लगा कि नृत्य के प्रबल लय के साथ लोकसामूहिक हृदय से निश्रृत ये सहज पंक्तियों के सामने वैयक्तिक शिष्ट साहित्य की अनेक पंक्याँ निरर्थक है! अतः कॉलेज के अध्ययन काल के दरम्यान शिष्ट साहित्य के पठन-अध्ययन के प्रभाव तले मेरे चित के सातवें पाताल में दबे पड़े लोकसंस्कार पुनः संचार करने लगे। किंतु मैं आदिवासी भीली बोली से अनभिज्ञ था। अतः अधिकांश आदिजाति जनसमुदाय के बीच रहने लगा। आदिजाति छात्रों के द्वारा भीली बोली सीखना प्रारंभ किया। ऐसे में बारिश के दिनों में मुझे मेरे एक छात्र के द्वारा भीलों के विवाह-प्रसंग में उपस्थित रहने का निमंत्रण मिला। इस प्रसंग के निमित्त हमें खेड़ब्रह्मा से उत्तर-पश्चिम में 23 कि.मी. दूर सांटूसी गाँव में जाना था; जो साबरमती नदी के सामनेवाले पश्चिम किनारे पर स्थित है। यहाँ जाने के लिए नदी के पूर्व तट पर पहुँचते ही चिंतित-आश्चर्य में पड़ गये। नदी में बढ़ता जाता मटमैला जल प्रवाह बाढ़ का संकेत दे रहा था। क्या किया जाये ऐसे में?

ऐसी विषम परिस्थिति में मैं जिस छात्र के साथ गया था, वह डाह्या खोखेरिया, पास के पाथेरा गाँव से उसके फुफरेभाई बुधा बुबडिया को बुलाकर ले आया। बुधाभाई के कंधेपर चौडे मुँहवाला मिट्टी का बड़ा मटका और हाथ में बाँस का डंडा था। इस मटके के सहारे सबको नदी के जल प्रवाह को तैरकर उस ओर जाना था। मैंने अपने कपड़े, कॉपीबूक और केसेट रिकोर्डर आदि मिट्टी के उस बड़े मटके में रखे। हमारे साथ पाँच महुडा गाँव के धनाभाई भी थे। नदी के बढ़ते जाते जल प्रवाह में उस बड़े मटके को बहता कर दिया। हम तीनों उसका मुहाना पकड़े हुए थे। बुधाभाई हमारी जीवन नौका को प्रवाह में खींच रहा था। नदी के प्रवाह में तैरने का ऐसा यह मेरा पहला अनुभव था। मिट्टी के उस मटके के सहारे जल प्रवाह में हम आगे बढ़ रहे थे। नदी के बीचों-बीच रहे होंगे कि खुले बदन पर कुछ छू जाने से भयभीत होकर डाह्या एकदम उछलकर हमारी जीवन नौका समान उस मटके के ऊपर कूद पड़ा; और मटका यकायक बिल्कुल अस्थिर होने लगा; उन क्षणों हमारे ऊपर मौत मँडराने लगी। साथी धनाकाका ने शीघ्र बुद्धिपूर्वक बाँस का डंडा फटकारकर डाह्या को मटके से अलग कर दिया; और बड़ी मुश्किल से मटकेनुमा हमारी जीवन नौका को बुधाभाई ने सँभाल लिया। नदी के प्रवाह में हमें भयभीत देखकर सामने किनारे पर खड़ा एक भील युवक लुकाभाई डाभी हमें बचाने के हेतु साहसपूर्वक नदी के जल प्रवाह में कूद पड़ा और हमें घेरता हुआ हम तक आ पहुँचा। आखिर हम सब किनारे पर पहुँचे। हम सब मौत के कराल मुँह से बचकर निकल आये हों, ऐसी अनुभूति मुझे हो रही थी।

मैं मन ही मन सोच रहा था कि आखिर ये दो भील युवकों ने नदी की बढ़ती हुई बाढ़ में अपने प्राणों का जोखिम क्यों उठाया!? मैं वास्तव में आश्चर्य बड़ा उपकृत हुआ था। जीवन में आज मुझे पहली बार "लोक" के अंतःसत्त्व के दर्शन हुए थे।

बरसते मेघाच्छन्न अंधकार में गाँव में पहुँचे। जिनके यहाँ जाना था, वहाँ विवाहविधि संपन्न हो रहा था, और भील कन्याओं के द्वारा भीली बोली में गीत और नृत्य की बौछार-सी उड़ रही थी। मैं उस पूरी रात पहली बार उस

समुदाय के बीच रहा। मुझे लगा, ये लोग शिष्ट समुदसय से एक मुष्ट ही नहीं, एक हाथ ऊंचे हैं! जीवन में पहली बार "लोक" के अपेक्षाहीन स्नेह तथा निरी ममता और मानवता का अनुभव हुआ। अब मेरे चित्त में व्याप्त उस अंत: प्रकाश में, पिछली संध्या का नदी के जलप्रवाह का अविस्मरणीय प्रसंग स्पष्टत: उभर रहा था। लोक साहित्य के संशोधन हेतु जानेवाले मुझे "लोक" ने ही साबरमती के धंसते-उफनते जलप्रवाह से उबार लिया! अब, धीरे-धीरे मन में एक बात दृढ़ होने लगी कि मेरे शेष जीवन के ऊपर इस आदिवासी 'लोक' का ही सच्चा अधिकार है। संशोधन में जैसे-जैसे बाधाएं आने लगी, वहाँ चित्त में यह बात दृढ़तर होने लगी। प्रकारांतर में यह कहना सर्वथा उचित होगा कि मुझे साबरमती के तट पर शेष जीवन के कार्यक्षेत्र की उपलब्धि हुई और इस प्रकार "लोक" में मेरा पुनर्जन्म हुआ।

आदिवासी "लोक" में प्रवेश करने से पूर्व, जीवन में घटित आत्मलक्षी प्रसंगों को निरूपित करने का उद्येश्य आत्म आत्मश्लाघा का नहीं है, किंतु संभ्रान्त या शिष्ट समुदाय, आदिवासी "लोक" के लिए जो लक्षण निर्धारित करता है वह और विदेश से आये "Folk" का लोकसाहित्य की विभावना करने हेतु जो आलोचना की गई है वैसा, भारतीय संस्कृति का आदिमूल यह "लोक" नहीं है। भारतीय लोक साहित्य में "Folk-lore" और उसकी एक उपशाखा के रूप में "Folk Literature" ये दोनों शब्द पश्चिम से आये हुए हैं। प्रारंभ में पश्चिमी विद्वानों ने जिस "Folk" को "Literature" का स्त्रोत माना है वह है आदिम, असभ्य, जंगली लोग-कि जो अंधविश्वास से मौखिक साहित्य का पोषण प्राप्त करते हैं। बीसवीं शती के प्रारंभिक दशके में रोबर्ट ग्रव्स, फ्रेंक सिजविक और फ्रांसिस गुमर जैसे पश्चिम के विद्वानों ने "Folk-lore" की शाखा-प्रशाखाओं की आलोचना करते हुए यहाँ तक कहा है कि "Folk-lore", मनुष्य की आदिम अवस्था की अभिव्यक्ति है, वह असंस्कृत समाज का विषय है तथा उसकी विशेषताएँ अब विगत अवशेषों में ही दर्शनीय हैं। "लोक" और उसके "भाषा साहित्य" संबंधी पश्चिम के ये ख्याल, "लोक" संबंधी भारतीय चिंतन के साथ सुसंगत नहीं हैं।

"लोक" शब्द लिखित रूप में भले ही ऋग्वेद के पुरुषसूक्त से प्राप्त हुआ हो किंतु उसकी जड़े तो वेदों से भी पूर्व पृथ्वी के साथ जुड़ी हुई है। और उसकी शाखा-प्रशाखाएँ आज दिन तक वन-उपवन, ग्राम तथा नगर-दूरदूर तक फैली हुई हैं। 'वेद' को शिष्ट साहित्य भले ही माना गया हो, किंतु उसमें आते यम-यमी, पुरूरवा-उर्वशी जैसे संवादसूक्त और धार्मिक अनुष्ठान "लोक" में से ही प्रविष्ट हुए हैं और उसकी शाखा प्रशाखाओं के दर्शन आज भी इस संशोधक के द्वारा संपादित "भील लोक महाकाव्य: राठोर वारता" में होते हैं। इस प्रकार "लोक" और "शिष्ट" में विरोध या विसंगाद नहीं है, संवाद ही है। गीताकार ने ठीक ही कहा है: "अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रचित: पुरुषोत्तम": और इस जनता जनार्दन का गौरव करते हुए महाभारत में व्यास कहते हैं, "प्रत्यक्षदर्शी लोकानां सर्वदर्शी भवेन्तर: समग्र विश्व को प्रयत्क्षदर्शी लोक ही हर तरफ से देखनेवाला है।

"लोक" का पर्यायवाची शब्द "जन" प्रियदर्शी अशोक के सातवें एवं आठवें शिलालेख में प्रयुक्त हुआ है, जहाँ सम्राट स्वयं जनपदवासियों के संपर्क हेतु चलते हैं। इस तरह अभिजात कहलाते राजा-महाराजा "लोक" के बीच गये हैं तो "लोक" भी राज प्रासाद-राज दरबारों में प्रविष्ट हुआ है और शिष्ट राजकवि उसमें से पोषण प्राप्त करके पुष्ट हुए हैं। यहाँ पर "लोक" शब्द के इतिहास का जिक्र करने का उद्येश्य केवल इतना ही है कि हमारे लिखित शिष्ट साहित्य को समृद्ध और चिरंजीव बनाना है, तो "लोक" की उपेक्षा करना कतई ठीक न होगा, उसे उसके सवाँग रूप में स्वीकार करना होगा।

यह भारतीय "लोक" तो विराट है। अलग-अलग क्षेत्रों में उसके अनेक निराले रूप हैं। उसके स्वरूपों को वर्गीकृत करते समय हम उसे "बेलेड", "मिथ", "फोकलिरिक" जैसे विदेशी साहित्य के बने बनाये तैयार ढाँचें में ढाल देते हैं। ऐसा न करके संबंधित प्रदेश के परंपरित प्रचलित नामाभिधानों को ध्यान में रखकर वर्गीकरण करना चाहिए। जैसे कि उदाहरण के रूप में उत्तरी गुजरात के खेड़ब्रह्म तहसील में निवास करती भील जनजाति में ऋतुचक्र के मुताबिक गान और कथन शैली के लोकस्वरूप "अरेला" "भजनवार्ता" "वतांभगाणांनां गीतां" तथा "हगनां गीतां" आदि परंपरित नामाभिधान हैं। वर्गीकरण करते समय इन नामों को यथावत रखने चाहिए।

लोकसाहित्य का वाहक होता है, उसका वैयक्तिक सर्जक नहीं होता है; और अगर होता भी है तो वह "व्यक्ति" न रह करके "समाज" बनकर रह जाता है। वह संबंधित समाज की सामाजिक तथा धार्मिक परंपरा को मानस में लेकर जीता है। इस परंपरा के साथ उसकी प्रगाढ़ धार्मिक आस्था का अनुबंध होता है। ऋतुचक्र के साथ जुड़े हुए उचित सामाजिक प्रसंग पर लोकसमूह के बीच उसके मानस में स्थित परंपरा से निश्रृत होकर कंठस्थ साहित्य कलामय रूप धारण करता है।

अनेक वर्षों से विरासत के रूप में संचित धार्मिक एवं सामाजिक परंपरा के साथ जुड़े लोकमानस की प्रकृति निराली होती है और उसके साथ जुड़े वाहक का मिज़ाज और खुमार भी निराला होता है। उसके पीछे-पीछे एक सप्ताह के पहाड़ी मार्ग के परिणाम शून्य सफर के बाद मेरे एक 'अरेला गायक' ने मुझे टके की सुना दी थी, "वातना तो अमे तणी हैयें। केंवी वॉय तोस कंइए; न ये कंइए" अर्थात् "कथा के तो हम मालिक हैं; कहना न कहना हमारी मरजी! कहें भी और ना भी कहें"। आखिरकार उसकी सेवा-सुश्रुषा के फलस्वरूप एक माह पश्चात् उसके निज-अंतर का पिटारा खुला और मैं निहाल हो गया था।

इस परंपरा में जीते "लोक" की बोली का स्वरूप भी उनका अपना होता है। उसे संबंधित समाज के जन समुदाय के संदर्भ में ही समझना पड़ता है। संशोधन के अपने समाज की बोली का लगाव एवं प्रभाव कई-बार बाधक सिद्ध होता है। एक प्रसंग दृष्टव्य है: एक बार खेड़ब्रह्मा में जलाऊ लकड़ी का गट्ठर बेचने को आयी, प्रोढ़ावस्था पार कर चुकी एक भील स्त्री को "डोही" (बुढ़िया) कहते बराबर ही उसके चेहरे पर आवेश उभर आया था, और गुस्सा होकर बोली थी; हुँ 'ला उं थार डोही हुँ?" अर्थात् "क्यों रे! मैं तुम्हारी पत्नी हूँ क्या? इस अंचल की भीली बोली के संदर्भ में "बावा" का पर्याय श्वसुर, "दादा" का अर्थ देवर तथा "सीसो" शब्द, स्त्री के जननांग विषयक अश्लील गाली के लिए प्रयुक्त होता है।

4

योग-संयोग हृदय में जागे तो ही लोकसाहित्य का संशोधक "लोक" की और जा सकता है, और उसके जाने के बाद भी "लोक" उसका स्वीकार करे तो ही "लोक" की उपासना हो सके तथा लोक मान सके ख्याल और उसके रुख को पचा सके तब ही संशोधक के सम्मुख "लोक" दिल खोल कर के बरस सकता है।

1980 से आजतक कितने सारे वाहक-माहितीदाता मेरे सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखकर दिल खोलकर बरसे हैं:

(1) अरवल्ली पहाडनी आस्था-1984 (2) डुंगरीभीलोना देवियावाव्वाना अरेला: नवलाख देवियो अने करमीरो-1987 (3) अरवल्लीकोकनी वही-वातो-1992 (4) डुंगरी भील आदिवासीओ-1992-(5) भील लोक महा काव्य: राठोर वारता-1992 (6) डुंगरी भीलोनो गुजरांनो अरेलो-1993 (7) तोव्वीरॉणीनी वारता-1993 (8) खूतांनो राजवी: देवोल गुजराण-1994 (9) रॉम सीतामानी वारता-1995 और (10) भीलोनुं भारथ-1997 के लिए क्रमश: माहितीदाता रूपाभाई गमार और अन्य, नानजीभाई परमार और अन्य, नाथाभाई गमारने अपने हृदय के कपाट खोल दिये हैं। (11) लीला मोरिया-1983 (12) फूलरांनी लाडी-1983 (13) भील लोकोत्सव: गोर-1994 और (14) भीलोना हग अने वतांमणां-1994 जैसे उत्सव-प्रसंग के गीतों के संपादन के लिए तो कोटडा, जोटासण, मचकोडा, धामणवास, पंथाल, सांढुसी, बहेडिया, खेड़वा, झाझंवा, दिग्थली आदि जैसे अनेक सारे गाँव दिल खोलकर बरसे हैं।

मेघभरी रातें, ठंडी-गरमाहट भरी रातें और उमसभरी रातों में उनकी नाथ्म में से प्रकट हुए ये दिव्य स्वर ऋतुचक्र और जीवनचक्र के अनुसार 1200 श्राव्य (ओडियो) तथा 15 दृश्य श्राव्य (विडियो) केसेट में और पैतीस ग्रंथों में व्याप्त है।

मेरी महायात्रा के यह सारे श्याम घन हैं। मैं उनके सांनिध्य में गया हूँ और वे सारे दिल खोलकर बरसे हैं। उनकी लोकवाणी से भींगे मुझे घनश्याम मिले बराबर आनंद हुआ है।

अनेक युगों का इतिहास सँजोकर बैठी हुई और संगीत के विविध रूप धारण करके शत्-शत् धाराओं में बहती इस "कंठवेद" के समान लोकगंगा के लोकानुरूप अनेकविध स्वरूप पाये जाते हैं। साथी-प्रेमी विषयक प्रणयगीत, लोकमंत्रें के संदेभ में से उद्भूत पूर्वकालीन कथाएँ (मिथ), अरेला, भजन वारता, हग तथा वतांमणांनां गीतां, भीली रामकथा-पांडवगाथा का दीर्ध भजनरूप, लोकमहाकाव्य तथा लोकारव्यान जैसे लोक स्वरूप पहलीबार ही लोक साहित्य के श्रेत्र में प्रविष्ट हुए हैं।

देश और दुनिया को दिखा सकें ऐसे "राठोर वारता", "गुजरांनो अरेलो", "तोव्वीरॉणीनी वारता", "रॉमसीतमानी वारता" और "भीलोनुं भारथ" का हिन्दी भाषी प्रदेश के "लोरिकी-चैनानी, राजस्थान के "पाबूजी", "बगड़ावत देवनारायण", तेलुगु का "पन्नाडु तथा तमिल के "अण्णमार" जैसे आंतरभारतीय लोकमहाकाव्यों के साथ तुलनात्मक अध्ययन हो सकता है। इसकी पहल के रूप में कु. जिज्ञासा पटेल ने "गुजरांनो अरेलो और बगड़ावत देवनारायण का तुलनात्मक अध्ययन "नाम से हिन्दी में शोध में शोध निबंध लिखा फलस्वरूप गुजरात के लोकमहाकाव्यों के लक्षणों को तारांकित करना सुलभ हुआ है।

आदिवासी लोकसाहित्य के ऐसे अलभ्य और साथ ही साथ बड़े कठिन संशोधन एवं संपादन कार्य से मुझे क्या प्राप्त हुआ? ऐसा प्रश्न सहज ही उठे! ऐसे समय मेरे एक महामना गायक माहितीदाता की स्मृति चित्त में उभरती है। 1987 के जनवरी मास की आह्लादक "दूपहर बोला", डुंगरीभीलोना देवियावाव्वाना अरेला, नवलाख देवीओ अने करमीरो' नामक पुस्तक प्रसिद्ध होने के बाद, मेरे माहितीदाता राजा काका को वह पुस्तक देने और उनका ऋण स्वीकार करने पाँचमहुड़ा गाँव जा रहा था। शिशिर के रम्य वातावरण में पैदल चलने के आनंद से चित्त मानो छलक रहा था। पहाड़ी पगदडी के बीच आता 'बिल्या' वाला नाला पार करके आगे चला तो एक पैर से लंगड़ाता श्याम देहधारी एक वृद्ध आदिवासी सामने से आ रहा था। मेरे माहितीदाता घर पर हैं या नहीं? - यह जानने हेतु प्रश्न किया, "काको राझो केंर हें? (राजाकाका घर पर है"?) फिर उसकी ओर देखा। हम दोनों एक दूजे से ठगे गये हों, वैसे एक-दूसरे को तकते अवाक् होकर खड़े रह गये। कुछ क्षण तक तो क्या बोलना यह भी सूझा नहीं! आखिर राजा काका बोले, 'पाई पगा थुं?' (भगाभाई तुम?) पगदंडी के बीच ही दोनों बैठ गये। दो साल के बाद आज 'बिल्या' वाले नाले के किनारे खेड़ब्रह्मा से 15 कि.मी. दूर अचानक ही हमारी भेंट हो गई। आनंदातिरेकसे दोनों की आँखे भर आयीं। अत्यंत वात्सल्यपूर्वक मेरी पीठ पर हाथ फेरते हुए उन्होंने पूछा, "कें झातो"? (कहाँ जा रहे थे?) 'तनं मिव्वावा!' (तुमसे मिलने!) मैंने उत्तर दिया।" अवण उं तो अरेला नहीं गाइ हकतो!" (अब तो मैं अरेला गा नेहीं सकता!) इसके बाद, उन्होंने चार मास पूर्व उन पर आये पक्षघात के हमले की बात की। मटोड़ा गाँव के डॉक्टर की देखभाल और दवाई से वे ठीक हो गये थे, किंतु पैर थोड़ा लंगड़ाता था। उनके द्वारा गाये गये 'अरेला' की सद्य-प्रकाशित पुस्तक थैले में से निकालकर मैंने उनके हाथों में दिया। उनके मुँह से उदगार निकल पड़े। "आई आ! हा! हा! सॉपरी पर तो नक्खा उंस हुं ने! अर्थात्" ओई माँ........किताब के ऊपर तो बिल्कुल मैं ही हूँ न! "पुस्तक के मुख पृष्ठ को आनंद एवं आश्चर्यपूवर्क घुमाते-फेरते राजा काका देखने लगे और कहने लगे", मारस खोलरूं हें ने! उंस हुं ने! पेलो बेठो हें अंणो हें ने! अर्थात् मेरा ही घर है न मैं ही हूँ न! वह जो बैठा है, लखा (सहायक रागिया) है न!' वे पुस्तकके आवरण के ऊपरके चित्रों- आकृतियोंका नामांकन करने लगे। उनके चेहरे पर व्याप्त अति विलक्षण आनंद को मेरी आँखें पीने लगी। पुस्तक खोलकर राजाकाका अक्षर देखने लगे, किंतु निरक्षरता बाधक हुई। थैले में से दूसरी पुस्तक निकालकर, उनके द्वारा गायी गयी कुछ पंक्तियाँ मैंने सुनायी:

नवी नवरातनो दन आवो............."
बाईओ............
नवी नवरातनों दन ए.........न आवो हें!.......

उन्हीं के द्वारा गायी गयीं पंक्तियाँ पुस्तक में से सुनकर उनके वृद्ध चेहरे पर चैतन्य प्रकट हुआ। उत्साहित होकर राजाकाका आगेकी पंक्तियाँ गाने लगे:

सूंड न सरावटी वात सोळ हें.....
बाईओ.........
होनाना पारणे स्मणा ए.....न लागी हें!....

उनके चेहरे के ऊपर व्याप्त आनंदका मैं मजा ले रहा था और मेरा चित्त अत्यंत

संतोष से भर-सा रहा था। मुझे लगा कि अब किस चंद्रक की मुझे अपेक्षा थी!! अनेक पीढ़ियों से संचित जिसकी अमानत थी, वह उसे आज सूद समेत वापिस मिल रही थी और मेरी मेहनत भी आज फलदायी सिद्ध हुई थी।

थोड़े समय के विराम के बाद हम दोनो बातें करते हुए धीरे-धीरे पैदल ही मटोड़ा गाँव आये। डॉक्टर के पास से दवाई ली और अलग होते समय अन्य महत्वपूर्ण सहायक रागियाओं के लिए उस पुस्तक की अन्य सात प्रतियाँ उन्हें दी।

कुछ दिनों के बाद उन्हें फिर पक्षाघात का हमला आया और वे 'वैकुंठपुरी' के निवासी हो गये। उनकी लौकिक क्रियाओं के समय मैं उनके गाँव गया। परिवार वालों ने उनके कई मीठे संस्मरण कह सुनाये और हम शोक मग्न हो गये। आखिर में राजा काका के एक बेटेने मुझसे कहा,-'पाई पगा, थारी सॉपरी तो बा होरिये राखी हदा हूतो। मार सैयो आँणी सॉपरी पासतो त्यॆंर तो बा मांदमाही पॉण ऊभो थातो न कंतो सोपरी हॉपळीन आहुय आवेंन नासुंय आवें!' अर्थात् 'भगाभाई, तुम्हारी पुस्तकको तो पिताजी हमेशा तकिये के नीचे रखकर सोते थे। मेरा बेटा जब जब उस पुस्तकको पढ़ता, तो पिताजी बीमारी में से भी उठ खड़े होते और कहते कि पुस्तकमें लिखा सुनकर तो हँसी भी आती है और नाचने का भी हमन करता है!' इस प्रसंग बेला में मुझे प्रतीत हुआ कि वन प्रान्तरके इस समृद्ध साहित्य का संकलन करने में खर्च किये गये इस जीवन के कुछ वर्ष वस्तुतः सार्थक हुए हैं।

'मुणाढ़य' की दंतकथाको आज भी इसलिये याद किया जाता है कि आज के परिवर्तनशील युग संदर्भ में संशोधनकर्ताको कंठस्थ साहित्य का संकलन करना होगा तो गुणढ़य की भांति अपने ही रक्त से लिखे समान मुश्किल होगा।

6

'लोकविद्या' तो 'लोक' के उद्भव के साथ पुष्ट होती चलती है और अनेक शाखा-प्रशाखाओं के साथ बहती मुख्य महाधारा है वही 'लोक' तथा 'शिष्ट' का जीवनामृत या जीवनरसायन है। 'गर हमें 'रामचरित मानस' या 'पद्मावत्' जैसे चिरंजीव साहित्य का निर्माण करना है, तो 'लोक' तथा उसकी 'वद्या' के साा अभिन्न रूप से जड़े 'दंतवेद' समान 'लोकसाहित्य' के साथ सायुज्य स्थापित कये बिना काम नहीं चलेगा।

संपर्क: 304, मिथिला, सविता एन्केलेव के सामने, जजीस बंगला पार रस्ता, बोड़कदेव अहमदाबाद- 380015
फोन: 079-26871602

शुभकामनाओं सहित :

मे. श्री राम आयरन

लफार्ज सीमेंट और छड़ के थोक एवं खुदरा विक्रेता

मीठापुर, खगौल रोड,
पटना-800001 (बिहार)
मोबाईल : 3337365

प्रोपराइटर : नरेश कुमार सिंह

शुभकामनाओं सहित :

मे. सुपर सिमेंट ट्रेडिंग

लफार्ज सीमेंट के ए.सी.सी., के.सी. थोक एवं खुदरा विक्रेता

सिद्धेश्वर कॉम्प्लेक्स
मीठापुर, खगौल रोड,
पटना-800001 (बिहार)

प्रोपराइटर : सिद्धेश्वर प्रसाद सिंह

अल्प जन हिताय, अल्प जन सुखाय

डा० कलानाथ मिश्र

वे दिन लद गए जब बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय की बातें होती थीं और उसे शासन के लिए भी आदर्श रूप से अपनाया जाता था। अधिक से अधिक लोगों का कल्याण हो, अधिक से अधिक लोगों को सुविधा मिले, अधिक से अधिक लोग समृद्ध हो सकें, पर यह सब अब पुरानी बातें हैं। आज के दौड़ में यह भावना भी अन्य पारम्परिक सांस्कृतिक मूल्यों की तरह 'आउट डेटेड' हो गया है। आज के समाज के कर्त्ता-धर्त्ता राजनितिज्ञ अब चौबीसों घंटे निर्लज्जता की सीमा पार कर अल्पजन हिताय अल्पजन सुखाय की बकलतं करते नहीं थकते। अल्पजन याने अल्पसंख्यक वह भी समग्र रूप से नहीं मात्र मुसलमान। अब तो अल्पसंख्यक कहने से भी नेताओं को संतुष्टि नहीं मिलती, बल्कि साफ-साफ मुसलमान कहना इन्हें अच्छा लगता है।

पक्के तौर पर यह नहीं कहा जा सकता कि ये लुभावनी बातें मुसलमानों को भी पसंद आता है अथवा नहीं? पर इतना जो जरूर है कि वे इस मायाजाल में स्वत: फँसते चले जाते हैं। जितने दिनों से तथाकथित धर्मनिर्पेक्ष पार्टियाँ अथवा नेता गण अल्पसंख्यकों के उद्धार की वकालत करते आ रहे हैं अगर वास्तव में वे इनके हितैषी होते तो इतने वर्षों में अल्पसंख्यकों की सारी समस्याओं का निदान हो गया रहता और उससे आम जनों को भी कुछ सुविधाएँ तो अवश्य ही मिलती। और तब नेताओं को आजतक अल्पसंख्यकों के कल्याण के लिए नारा नहीं बुलंद करते रहना पड़ता।

बिहार में 'माई' कम्बिनेसन के बदौलत सत्तासीन लालू सरकार को अल्पसंख्यकों का कल्याण करते पंद्रह वर्ष बीत गए पर मुसलमानों का कल्याण क्या हो सका? आज भी कमोबेश मुसलमानों की स्थिति वही है जो आज से 15 साल पहले थी। बल्कि स्थिति विपरीत होती जा रही है। अल्पसंख्यकों को कोई फायदा हो न हो पर अल्पसख्यकवाद के नारे इतने अधिक बुलंद किए जा रहे हैं कि समाज के अन्य समुदायों के मन में उनके प्रति भीतर ही भीतर आक्रोश उत्पन्न हो रहा है।

हमें यह पता नहीं चलता कि अल्पसंख्यक समुदाय के भाई लोग इस राजनीतिक दाँव-पेंच को कैसे नहीं समझ पाते। क्या वे यह नहीं समझते कि तथाकथित धर्मनिर्पेक्ष राजनितिज्ञों ने उन्हें उपयोग की वस्तु बना रखा है। चुनावों में मात्र वोट के लिए उनका उपयोग किया जाता रहा है और आज के 'यूज एण्ड थ्रो' संस्कृति की तरह ही काम निकाल कर फेक दिया जाता है। बार-बार रात-दिन चौबीसो घंटे उनके पक्ष में अनाम-शनाप झूठे लुभावने

बयानबाजी कर वे मुसलमानों को अपने जाल में फाँसते रहते हैं और दूसरी ओर भारत के बहुसंख्यक हिंदू समाज भीतर ही भीतर अपनी उपेक्षा से दु:खी होते रहते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि इसका परिणाम अच्छा तो नहीं ही हो रहा है। भारत के मुसलमान अपने ही देश में अलग थलग पड़ते जाएँगे तथा मुख्य धारा से कटते जा रहे हैं। मुसलमान बुद्धिजीवी इन सच्चाइयों को समझते भी हैं। कुछ जागरूक नेताओं ने भी अपने उपयोग किए जाने पर समय-समय पर घोर आपत्ति भी जताई है। पर वे भी उस तोंते की तरह जो-शिकारी आएगा, जाल बिछाएगा, दाना डालेगा, लाभ से उसमें फंसना नहीं का रट लगाते हुए जाल में फस गया था'-वे भी नेताओं के वाक्जाल, झूठे आश्वासनों के भ्रम में पड़े हैं।

प्रश्न यह उठता है कि भारत के मुसलमानों को सामान्य नागरिक की तरह जीने में क्या आपत्ति है? क्यों वे विशेषाधिकार पाना चाहते हैं? आखिर राज्य में विकास होगा, सड़क बनेगा, बिजली पानी, शिक्षा, चिकित्सा, की सुविधाएँ उपलब्ध होंगी तो क्या उन्हें इसका लाभ नहीं मिलेगा? क्या उन सड़कों पर केवल हिन्दू चलेंगे? उन अस्पतालों में केवल बहुसंख्यकों का इलाज होगा? क्या कानून व्यवस्था सुदृढ़ होने का लाभ उन्हें नहीं मिलेगा? अगर हाँ तो वे समग्र विकास के नाम पर वोट क्यों नहीं करते? मुख्य धारा से जुड़कर आम समस्याओं पर उनका ध्यान क्यों नही जाता? उनमें एकता की शक्ति है तो फिर वे इसका इस्तेमाल विकासोन्मुख सरकार की स्थापना में क्यों नहीं करते? यदि समग्र विकास होगा तो स्वत: वे भी विकसित होंगे। 'बाँटो और राज करो' नीति को हम क्यों प्रश्रय देते हैं। केवल मुसलमान ही नहीं हिन्दुओं ने तो अपनी पहचान भी भुला रखी है। हजारों जातियों में बँटकर वे इस तथ्य को भूल बैठे हैं कि अपनी पहचान खोकर कभी सुखी नहीं रहा जा सकता और न प्रगति ही की जा सकती है। जिस प्रकार अल्पसंख्यकों को कोई फायदा नहीं हो पा रहा है, बल्कि राजनीति में पार्टियाँ अपने फायदे के लिए उनका नाजायज इस्तेमाल कर अंतत: फायदा तो इसी में दिखता है कि सब मिलकर इन मायावी मक्कार नेताओं को पुन: बहुजन हिताय बहुजन सुखाय के नारे बुलंद करने को मजबूर करें जिससे सबको फायदा हो सके। मुसलमान भाइयों को भी तभी लाभ होगा जब समग्र विकास होगा। रहना उन्हें भी इसी समाज में है। खुले मन से सोचें, अपने विवेक का उपयोग करें और अपना इस्तेमाल वे दूसरे के स्वार्थ के लिए न होने दें।

संपर्क- अभ्युदय, ई-112,
दक्षिणी श्री कृष्णपूरी, पटना-800001

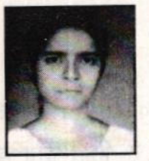

असफलता सफलता का आधार-स्तंभ है

❑ अंजलि

कहना नहीं होगा कि जो आदमी असफलता से घबरा जाता है या असफलता से अधीर हो अपने हाथ-पांव मोड़ कर बैठ जाता है उसे सफलता कभी नहीं मिलती। ठीक इसके विपरीत यदि आदमी यह सोचकर कि असफलता मिलने पर सब कुछ समाप्त नहीं हो जाता, अपने हौसले बुलंद रखते हुये पुनः प्रयास करता है तो सफलता उसके हाथ अवश्य चूमती है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो इस बात की संपुष्टि करते हैं। जीवन के हर मोड़ पर असफलता का मुँह देखना पड़ा, पर उनकी अनवरत निष्ठा व लगन ने उन्हें अंतिम सफलता तक पहुँचा दिया।

एक आदमी अपनी उम्र के 21 वर्ष ही पूरे किये थे कि उसे अपने व्यापार में नाकामयाबी मिली। 22 की उम्र में वह चुनाव के मैदान में कूद पड़ा पर वहाँ भी उसे पराजित होना पड़ा। 24 साल की उम्र में उसने पुनः व्यापार में अपना भाग्य अजमाया, किंतु फिर उसे असफलता हाथ लगी। जब 26 साल का था, उसकी पत्नी उसे छोड़कर चल बसी। 27 साल की उम्र में उसका मानसिक संतुलन बिगड़ गया। 34 साल की उम्र में पुनः वह संसद में हार गया। इसी प्रकार जब 45 साल की उम्र में सिनेट के चुनाव में खड़ा हुआ, तो उसमें भी उसे हार खानी पड़ी। फिर 49 साल की उम्र में दुबारा सिनेट के चुनाव में उसे पराजय का मुँह देखना पड़ा। वही आदमी 52 साल की उम्र में अमेरिका का राष्ट्रपति चुना गया। वह आदमी कोई और नहीं, बल्कि और अब्राह्म लिंकन था जिसने यह सिद्ध कर दिया कि असफलता को स्थायी नहीं समझा जाना चाहिये। आखिर तभी तो कहा जाता है कि असफलता ही सफलता की कुँजी है (Failures are the pillars of Success.)

उल्लेखनीय है कि अब्राहम बचपन से ही काफी प्रतिभाशाली थे पर आर्थिक स्थिति दयनीय रहने के कारण अधिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके। फलतः उन्हें एक भंडार लिपिक के पद पर काम करना पड़ा। फिर गाँव में पोस्टमास्टर भी बने और धीरे-धीरे उन्होंने कानून की शिक्षा प्राप्त कर वकालत पास कर ली। इसके बाद युद्ध और राजनीति दोनों में समान उत्साह से भाग लेकर एक दिन अमेरिका के सर्वोच्च पद तक जा पहुँचे और दासों के मुक्ति दाता राष्ट्रपति के रूप में उन्होंने अपनी एक अलग पहचान बनाई।

कहने का अर्थ यह है कि एक बार किसी प्रयास में कामयाबी नहीं मिलने पर निराश हो जाना या स्वयं को नाकाबिल समझ लेना समझदारी नहीं है। आप अपने घर में रोज-ब-रोज मकड़ी को दीवार पर चढ़ने के प्रयास में कई बार गिरते और पुनः चढ़ते हुये देखते होंगे, लेकिन बार-बार प्रयास के बाद अंततः वह अपने मकसद में कामयाब हो ही जाती है। खुद पर विश्वास रखते हुये ईमानदारी से प्रयास जारी रखा जाये तो कोई कारण नहीं कि सफलता न मिल सके। दूसरी बात यह है कि परिश्रम का कोई दूसरा विकल्प भी नहीं है। इच्छाशक्ति, दृढ़ विश्वास और अर्जुन की भाँति सिर्फ लक्ष्य सामने रखकर कोई भी व्यक्ति मँजिल आसानी से प्राप्त कर सकता है। एक पुरानी कहावत है कि हजार मील का सफर भी एक कदम से ही प्रारंभ होता है। जीवन में भी यही बात लागू होती है। किसी भी कार्य की शुरूआत उसकी कल्पना या सपने से होती है। सपनों को हकीकत में बदलने के लिये यह जरूरी है कि आप उन्हें व्यावहारिक लक्ष्यों में ढालना सीखें।

आज लड़के-लड़कियाँ सपने तो देखते हैं लेकिन मूर्त रूप देने के लिये विशेष प्रयास नहीं करना चाहते इसलिये आज के युवाओं के लिये जरूरत इस बात की है कि स्वयं को परिस्थितियों के साथ जुझने के लिये मानसिक रूप से अपने को तैयार करें। संघर्ष और पीड़ा के दौर में भी सोच बड़ी रखना जरूरी है ताकि आप अपने लख्य की प्राप्ति कर सकें। बाधाएँ हर कार्य में आती हैं, लेकिन बड़ी और सकारात्मक सोच एवं क्षमता प्रत्येक बाधा को पार कर मंजिल तक पहुँचने में महत्व पूर्ण भूमिका निभाती है। इसलिए हर आदमी को सदैव सपने बड़े रखने की कोशिश करनी चाहिए और केवल स्वप्नदर्शी ही नहीं, बल्कि दूरदर्शी भी बनने का प्रयास करना चाहिए।

यदि सपने बड़े हों और इच्छाशक्ति दृढ़ हो तो शारीरिक विकलांगता भी सफलता के आड़े नहीं आती है। आखिर तभी तो उत्तर प्रदेश के कानपुर शहर के निवासी महेन्द्र कुमार रस्तोगी जन्म से नेत्रहीन होते हुये भी लखनऊ विश्व विद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम०ए० करने के बाद अभी भारत सरकार के श्रम मंत्रालय में उपनिदेशक के पद पर तैनात हैं और उनके प्रयासों से अबतक हजारों नेत्रहीनों और विकलांगों को रोजगार प्राप्त हो चुका है। रोचक तथ्य तो यह है कि श्री रस्तोगी की पत्नी डॉली रस्तोगी भी नेत्रहीन हैं और उन्होंने एम०एम०टी०सी० में वरिष्ठ प्रबंधक पद से हाल ही में निजी कारणों से स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति ले ली है। इस नेत्रहीन दंपत्ति की सफलता दूसरों के लिये बेहतरीन मिसाल है।

इसी प्रकार डॉ० सुभाष रूहेला ने नेत्रहीन होते हुये भी हिंदू कॉलेज से बी०ए० किया था। दिल्ली विश्वविद्यालय में टॉपर रहे। फिर हिंदू कॉलेज से ही एम०ए०, पी-एच०डी० करने के बाद 1987 से ही दिल्ली विश्वविद्यालय के जाकिर हुसैन कॉलेज में हिंदी विभाग में रीडर के पद पर कार्यरत हैं। ठीक वैसे ही जामिया मिलिया इस्लामिया में कार्यरत प्रो० एस० आर० मित्तलन जन्मजात अँधता को अपनी प्रगति की राह का रोड़ा नहीं बनने दिया।उत्तर प्रदेश के बिजनौर शहर से सटा कसबा गढ़ी का नेत्रहीन रेडियो मैकेनिक मोहम्मद मुस्तकीय अपने ग्राहकों के रेडियो, टी०वी०, टेपरिकार्डर की मरम्मत का हफ्तों नहीं लटकाकर ग्राहक को हाथ के हाथ करके देने में विश्वास रखते हैं।

असफलता सफलता के लिये आधार स्तंभ खड़ा करने में सहयोग करती है। कई असफलताएँ व्यक्ति की बुनियाद को और मजबूत बनाती हैं। इसलिए यदि किसी कारणवश असफलता का सामना करना पड़ जाए तो इससे निराश होने की आवश्यकता नहीं है। ऐसी स्थिति में असफलता के कारणों की पड़ताल कर उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाना चाहिए। ऐसे समय में अनुभवी लोगों के मार्गदर्शन प्राप्त किये जा सकते हैं।

यह सच है कि असफलता विचलन उत्पन्न करती है और व्यक्ति के भीतर हीन भावना आ जाती है,पर असफलता क्षणिक दुःख भले ही दे वह मार्ग से विचलित नहीं कर सकती है। इसलिए जरूरत इस बात की है कि असफलता से विचलित होकर अपने अंदर हीन भावना नहीं आने दें, क्योंकि इससे शारीरिक और मानसिक शक्ति की बर्बादी आरंभ हो जाती है। इसलिए कड़ी मेहनत करने की दरकार है। असफलता हमें और कठोर श्रम करने की प्रेरणा देती है। मंजिल तक पहुँचने के लिए एक कारगर रणनीति और समर्पण के साथ कोशिश की जानी चाहिए। कुशल रणनीति के साथ तैयारी करने पर असफल होने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

संपर्क:– 'बसेरा',
पुरन्दरपुर पटना-800001

बुजुर्गों को अब विदा करने का वक्त

❑ सिद्धेश्वर

यह बात ठीक है कि राजनीति में न कोई टायर्ड होता है और न कोई रिटायर्ड, पर विचार भले ही थके, न थके उम्र अंततः थक जाती है, सांसें थक जाती हैं और इरादे नहीं कदम लड़खड़ा जाते हैं। भारतीय राजनीति के अधिकांश राजनीतिक दलों के एक-दो नेता अस्सी के इधर-उधर पांव लटकाये, अपने सार्वजनिक एवं राजनीतिक जीवन के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुके हैं। इसलिये बुजुर्गों को अब राजनीति से विदा करने का वक्त आ चुका है और नयी पीढ़ी का बदलाव अवश्यंभावी है।

भारतीय जनता पार्टी जब अपनी स्थापना की 25वीं साल गिरह मना रही है राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ सुप्रीमों के.सी. सुदर्शन ने भाजपा में राजनीति की जोड़ी नंबर वन अटल बिहारी वाजपेयी और लालकृष्ण आडवाणी के लिये राजनीति से विदा की वेला कह डाली है और उनके स्थान पर युवा पीढ़ी को लाने की 'सलाह' दी है। श्री सुदर्शन की अटल-आडवाणी के रिटायर होने की 'सलाह' का खुद भी 'समर्थन' कर पूर्व प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने पूरे विवाद को नया मोड़ दे दिया है। श्री अटल ने कहा है कि 'यह अच्छा परामर्श है और उनके पास न तो कोई दायित्व है और न ही काम। हमारी युवा पीढ़ी नेतृत्व संभालने व किसी भी चुनौती से जूझने के लिये तैयार है।' यह तो अच्छा हुआ कि श्री वाजपेयी ने राजनीति से रिटायर होने की बात स्वयं स्वीकार कर ली है अन्यथा उम्र के लिहाज से वैसे भी स्वेच्छा से उन्हें राजनीति से किनारा कर लेना न्यायोचित होगा, क्योंकि भाजपा में वैसे भी मुरली मनोहर जोशी, अरुण जेटली, उमा भारती, जशवंत सिंह, सुषमा स्वराज, मुख्तार अब्बास नकवी, प्रमोद महाजन जैसे कर्मठ नेता दायित्व संभालने के लिये काफी हैं।

इसी प्रकार माकपा ने अपने राष्ट्रीय सम्मेलन में पार्टी के महासचिव पद पर हरकिशन सिंह सुरजीत के बदले प्रकाश करात को बैठाकर तथा सीताराम येचुरी को विकसित कर एक महत्त्वपूर्ण कदम बढ़ाया है। पार्टी ने भले ही सुरजीत और ज्योति बसु के अवकाश की अर्जी को अस्वीकार कर दिया, लेकिन पीढ़ी का बदलाव आसानी से कर डाला। भाजपा में इतनी आसानी से

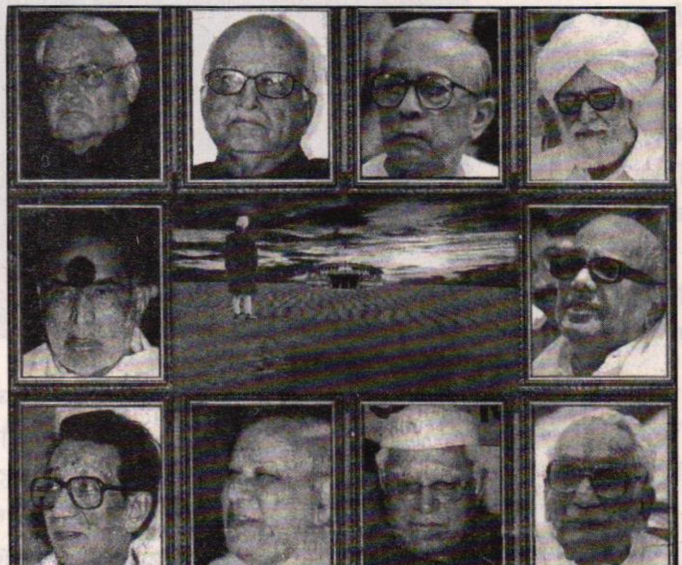

पीढ़ी का बदलाव इसलिये नहीं हो सकता कि पार्टी को अंततः कोई ऐसा चेहरा चाहिये जो जनता और आर.एस.एस. के अतिरिक्त सहयोगी दलों को भी भाये।

भाजपा और माकपा के अलावा भारतीय राजनीति में पिछले दो-तीन दशकों से अपनी छाप छोड़ चुके सजपा के चंद्रशेखर, शिवसेना के बालठाकरे, काँग्रेस के भजनलाल, अर्जुन सिंह, नारायणदत्त तिवारी तथा करुणाकरण जद (यू.) के जार्ज फर्नांडीस, राकांपा के शरद पवार, डीएम के. के., करुणानिधि पूर्व प्रधानमंत्री बी.पी. सिंह, प्रकाश सिंह बादल, काशीराम तथा नेशनल कांफ्रेंस फारूक अब्दुल्ला जैसे नेता भी अपनी उम्र के इस पड़ाव पर पहुँच चुके हैं जहां राजनीतिक गहमा-गहमी में वे अपने को खपा नहीं पायेंगे। शीर्ष नेताओं की संभवतः यह अंतिम पीढ़ी है जिसने किसी न किसी रूप में आजादी की लड़ाई को देखा है। इनके बाद देश का दायित्व एक ऐसी पीढ़ी के कंधों पर होगा जिसके पास आपातकाल की कड़वी यादें हों तो हों, पर लालकिले की प्राचीर पर पहली बार फहराये गये तिरंगे की उल्लासपूर्ण स्मृति नहीं होगी। कह नहीं सकता विदा ले रही राजनीतिक पीढ़ी के इन नेताओं में प्रायः अधिकांश दलों, विचारों और क्षेत्रों की अगुआई कर रहे नेताओं की शून्यता की भरपाई कैसे हो पायेगी। संभव है कुछ नेताओं के साथ उनके दल की प्रासंगिकता भी समाप्त हो जाये। जैसे पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर के पास एक दल है, लेकिन उनकी पहचान अब सिर्फ एक व्यक्ति के रूप में बरकरार है। ठीक इसी प्रकार पूर्व प्रधामंत्री वी.पी. सिंह के पास कोई दल नहीं है और उनके परिवार में भी उनकी राजनीति को आगे बढ़ानेवाला कोई नहीं है। बड़ौदा डायनामाइट केस से लेकर तहलका, ताबूद और रक्षा सौदों तक के विवादों से घिरे जार्ज फर्नांडीस, जो आज भी विपक्षियों एवं सत्ताधारियों के निशाने पर सबसे अधिक हैं के विदा लेने पर उनके नेतृत्व की कमी जद (यू.) की राजनीति को अधिक खलेगी या उसे ज्यादा प्रभावित करेगी, ऐसा नहीं लगता।

काँग्रेस के अर्जुन सिंह, नारायणदत्त

तिवारी, भजनलाल, करुणाकरण अपनी राजनीतिक यात्रा लगभग पूरी कर अपने अपने लाड़ले को अपनी जगह स्थापित करने की कोशिश में जुटे हैं। वंशवादी होने के बावजूद काँग्रेस की दूसरी पीढ़ी अन्य दलों के मुकाबले ज्यादा मजबूत है, क्योंकि अपने अपने पिता की विरासत को संभालने के लिये ज्योतिरादित्य सिंधिया, जतिन प्रसाद, सचिन पायलट, नवीन जिंदल, संदीप दीक्षित, रणदीप सिंह सुरजेवाला, राहुल गाँधी तथा मिलिंद देवड़ा आदि पुत्र-पलटन मोर्चा तैयारी में है। इसी प्रकार दूसरे दलों यथा शिवसेना में उद्व्रम ठाकरे, डी.एम.के. में स्टालिन, मुरासोलि मारन के दोनों बेटे दयानिधि, कलानिधि मारन, अकाली दल के सुखबीर सिंह बादल, राकांपा के शरद पवार की बेटी तथा भतीजे प्रफुल्ल पटेल,और फारूक अब्दुल्ला के बेटे अमर अब्दुल्ला अपने-अपने दल के जनाधार को कहाँ तक बरकरार रख पायेंगे, यह तो वक्त ही बतायेगा। हाँ बसपा में यों तो काशीराम की जगह मायावती ने ले ली है, लेकिन मायावती को भी पता है कि किसी संकट के क्षण में वह बिल्कुल निहत्था हो जायेंगी।

दरअसल भारतीय राजनीति में व्याप्त जड़ता का एक कारण यह भी है कि अधिकांश राजनीतिक दलों का नेतृत्व बुजुर्ग नेताओं के हाथों में है। ये बुजुर्ग नेतागण नयी सोच व नयी कार्य पद्धति को पार्टी के क्रियाकलापों में शामिल करने की बजाय यथास्थितिवाद बनाये रखने के पक्षधर हैं। इस धारणा के पीछे एक तो लंबे समय से पार्टी नेतृत्व संभाले रहने से उपजा आत्मविश्वास है और दूसरे उम्र की स्वाभाविक थकान। इसका नतीजा यह है कि पार्टियाँ लंबे समय से एक निश्चित ढर्रे पर चलती दिखती हैं और बदलाव की कोई बयार उनपर कोई असर नहीं डाल पाती। ऐसा नहीं है कि राजनीतिक दलों में द्वितीय पंक्ति या युवा नेतृत्व मौजूद नहीं है। जैसा कि उपरोक्त पंक्तियों में मैंने बताया कि वह है लेकिन बुजुर्ग नेताओं का व्यक्तित्व उनके लिये बरगद साबित हो रहा है। इससे युवा नेता एक सीमा तक ही उभर पाता है और फिर उसकी कौंध बुझने लगती है, फिर उनमें निराशा के भाव उत्पन्न होने लगते हैं। यही वजह है कि प्राय: प्रत्येक पार्टी में

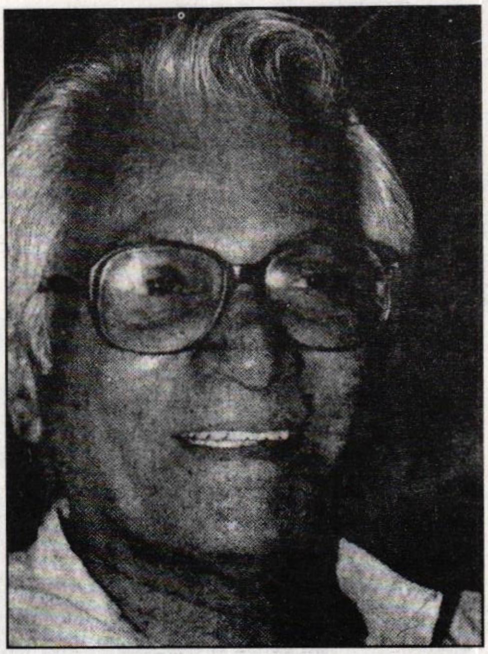

संगठन भी लुँज-पूँज तरीके से चल रहे हैं। राजनीतिक पार्टियों के बुजुर्ग नेतृत्व के मंसूबे से ऐसा प्रतीत होता है कि वे उसी पुराने ढर्रे पर चलते रहेंगे जिसपर चलने का उन्हें पिछले कई दशक से अभ्यास है।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि भारतीय राजनीति में बड़े-बुजुर्गों की अहमियत और बोलबाला है, जिनके जीवन में सक्रियता समाप्त हो चुकी है। इनमें से कुछ को तो कार्यालय और अस्पताल के बीच चक्कर लगाने से फुर्शत नहीं है और कुछ संसद तथा अन्य बैठकों के समय सो कर समय गुजार रहे हैं। वे करें भी तो आखिर क्या करें? भारतीय राजनीति में अवकाश प्राप्त करने की कोई उम्र सीमा नहीं है। जबकि माननीय उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश 65 वर्ष की उम्र पर सेवानिवृत होते हैं और सरकारी कर्मचारियों को 60 वर्ष की उम्र पाते ही उन्हें अवकाश प्राप्त करना पड़ता है। यहाँ तक कि एक चतुर्थवर्गीय कर्मचारी के लिये भी उम्र और शिक्षा का एक न्यूनतम मापदंड है, लेकिन भारतीय राजनीति में प्रवेश पानेवाले राजनेताओं के लिये कोई उम्र सीमा नहीं।

इसके ठीक विपरीत पश्चिम के देशों में राजनीति का नेतृत्व युवा पीढ़ी के हाथ में रहता है। यही कारण है कि वहाँ तेज और सटीक निर्णय लिये जाते हैं और इसीलिये वहाँ विकास भी त्वरित होता है। जॉन एफ केनेडी 43 वर्ष की उम्र में अमेरिका के राष्ट्रपति बने थे। भारत में 80 वर्ष की उम्र के आस-पास हो जाने के बावजूद सत्ता पर काबिज होने के लिये लोग लालयित रहते हैं और सत्ता पर रहकर ही अथवा राजनीति के जरिये ही अमरत्व प्राप्त करना चाहते हैं। जबकि मार्शल टीटो ने एक बार कहा था-"राजनीतिक मौत सबसे बुरी मौत होती है।" पर यहाँ तो सत्ता में रहनेवाले अधिकांश राजनेता अपने को भगवान की तरह अजर और अमर मानकर चलते हैं। पर सच तो यह है कि बढ़ती उम्र राजनीति के लिये बाधक है, क्योंकि जैसे-जैसे उम्र बढ़ती जाती है वैसे-वैसे शारीरिक क्षमता भी कम होती जाती है। मस्तिष्क की क्षमता पर भी असर पड़ता है। बुजुर्ग राजनेता अपनी बात पर ही अड़े रहते हैं जिसके परिणामस्वरूप निर्णय लेने में देरी हो जाती है और विकास कार्यों में बाधा पड़ती है।

पर कुल मिलाकर देखा जाये तो वर्तमान उम्रदराज नेताओं के बगैर भी देश की राजनीति अपनी गति से चलती रहेगी, मगर उनके विचार, प्रतिबद्धता और तेजस्विता की बहुरंगी छबियों की वापसी शायद फिर कभी होगी, मुश्किल प्रतीत होती है।

बिहार में फिर चुनाव का घमासान

विचार कार्यालय, पटना

पिछले फरवरी माह में बिहार विधान सभा चुनाव में खण्डित जनादेश के बाद रामविलास पासवान की हठधार्मिता की वजह से राजनीतिक दलों के न तो राजग और न ही सप्रंग सरकार बनाने में समर्थ हो सका। फलतः राष्ट्रपति शासन के तकरीबन दो महीने के अंदर ही बिना गठित हुए विधान सभा भंग कर दी गई और केंद्र सरकार की ओर से यह कहा गया कि लोजपा विधायकों की खरीद-फरोख्त की वजह से उसने राजब की इस चाल को सफल नहीं होने दिया गया और उसके सारे मनसूबों पर पानी फेर दिया गया। दरअसल लालू प्रसाद किसी भी सूरत में बिहार की सत्ता राजग के हाथों में नहीं देना चाहते।

सच कहा जाय तो इस घटनाक्रम के बाद मायावती के पदचिन्हों पर चलने वाले लोजपा प्रमुख रामविलास पासवान को सबसे अधिक नुकसान इसलिये हुआ कि उनके दल के अधिकांश विधायकों ने लोजपा से पाला झाड़ा क्योंकि श्री पासवान ने दलित राजनीति को अपनी व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं के लिये इस्तेमाल करना चाहा। इसलिये मायावती की तरह वे भी अपने दल को तार-तार विखरता देखने को विवश हुये।

लोजपा विधायकों को जिस प्रकार जमशेदपुर और घाटशिला में नाटक करते देखा गया उस पर गहराई से यदि विचार किया जाये तो उससे क्या इस बात से इनकार किया जा सकता है कि लोजपा विधायकों को भारी लालच देने के ख्याल से उन्हें भाजपा वाली सरकार के राज्य में उसी प्रकार नजरबंद किया गया जिस प्रकार पिछली बार झारखण्ड के राजग विधायकों को भाजपा की सरकार वाले राज्य राजस्थान की राजधानी जयपुर ले जाया गया था। इस संदर्भ में इस बात पर भी ध्यान दिया जाना जरुरी है कि जिस तरह राम विलास पासवान ने अपने 10 विधायकों को दिल्ली से जाकर टी०वी० चैनल पर परेड कराया उससे कम-से-कम इतना तो अवश्य सिद्ध होता है कि लोजपा के बाकी 19 विधायक ही बच गये थे जो दल-बदल कानून की वैधता के लिये काफी नहीं था। एक विधायक की कमी हो रही थी। यानी राजग में कम-से-कम 20 विधायकों के मिलने के बाद ही वे विधायक दल-बदल-कानून से बच सकते थे।

मान लिया जाये कि दिल्ली में परेड कराये गये विधायकों में से कुछ और टूटकर राजग में शामिल भी हो जाते तो नीतीश कुमार

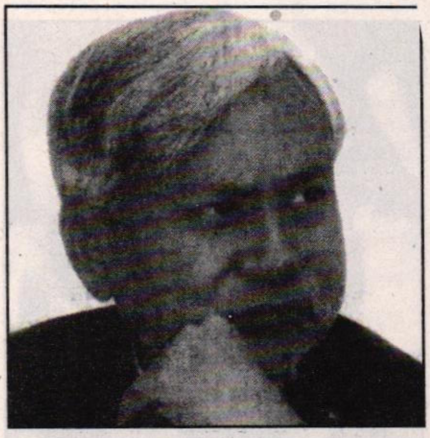

के नेतृत्व में बननेवाली सरकार का स्वरूप कैसा होता। क्या लोजपा के जिन बाहुबली एवं अपराधी किस्म के विधायकों को लेकर राजग के लोग तथा आम मतदाता उँगलियाँ उठा रहे थे उनमें से अधिकता नीतीश कुमार के मंत्रिमंडल में शामिल नहीं होते और यदि होते तो किस माने में राजद की सरकार से अच्छे होते! यही नहीं लोजपा के बागी विधायकों सहित निर्दलीय विधायकों के कम-से-कम 25 विधायकों को मंत्रिमंडल में शामिल किया जाता तो मात्र राजग के 92 विधायकों में से 11 विधायकों को ही मंत्रिमंडल में शामिल होने का मौका मिलता जो उन्हें कतई बर्दास्त नहीं होता और इस वजह से नीतीश कुमार के नेतृत्व में बनी सरकार भी चंद दिनों के लिये ही होती। इस दृष्टि से देखा जाए तो बिहार विधान सभा को भंग होना ही था। इसलिये अनैतिक सरकार बनाने से तो बेहतर यही है कि मध्यावधि चुनाव कराया जाये। हालांकि यह भी सत्य है कि यह कोई जरूरी नहीं कि मध्यावधि चुनाव के बाद किसी एक गठबंधन को बहुमत हो ही जाए। यदि पुनः खण्डित जनादेश मिला तो यह दुर्भाग्यपूर्ण होगा। ऐसा लगता है कि जब तक सामाजिक न्याय की ताकतों तथा सामाजिक न्याय की विचारधारा को मानने वालों की शक्तियाँ विभाजित रहेंगी, तब तक बिहार की राजनीति पटरी पर नहीं आयेगी और इसका खामियाजा बिहार की जनता को भुगतना ही पड़ेगा।

दरअसल देखा जाए तो बिहार तथा उत्तर प्रदेश में एक ही जाति में सत्ता के केंद्रीकरण की वजह से सामाजिक न्याय के उद्देश्य विफल हो रहे हैं यह सामाजिक न्याय के पुराधाओं को समझना होगा। उन्हें जात से जमात की ओर बढ़ने की कोशिश करनी होगी। दूसरी बात यह है कि यदि नीतीश कुमार बिहार की जनता के चाहते हुये भी मुख्य मंत्री नहीं बन पा रहे हैं तो उसकी एक वजह यह भी है कि वह लालू प्रसाद का सही विकल्प नहीं बन पा रहे हैं और राजग में भी एक ऐसा वर्ग है जो उन्हें मुख्य मंत्री की कुर्सी पर नहीं देखना चाहता। कारण कि वे उनकी क्षमता से पूरी तरह परिचित हैं। उन्हें यह भय है कि कहीं सत्ता पर काबिज होने पर लालू जी की तरह डेढ़ दशक तक ही नहीं, बल्कि दो दशक तक न वह रह जाएँ। भला यह उन्हें कैसे मंजूर होगा। आजादी के बाद लगभग चार दशक तक जिन लोगों ने आजादी का फल चाभा है उन्हें नीतीश कुमार का मुख्य मंत्री की कुर्सी पर बैठना भी बर्दास्त नहीं। जहाँ खुद जद (यू०) के ही बहुत ऐसे नेता है जिनके दिल पर सांप लोट जाता है जब नीतीश कुमार के नेतृत्व में सरकार बनाने की बात उठती है वहीं भाजपा का एक बड़ा खेमा भी नीतीश कुमार को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं दिखता। यह तो कहिए कि भाजपा का आलाकमान इस बात को अच्छी तरह समझ चुका है कि बिना नीतीश कुमार के सहयोग के भाजपा की नाव बिहार में किनारे नहीं लगेगी।

सच तो यह है कि भाजपा जद(यू) लोजपा के बागी एवं निर्दलीय विधायकों के सहयोग से सरकार के गठन में सफल हो जाते तो वह सरकार अस्थिरता से ग्रस्त होती और बाहुबली एवं अपराधी छबि के विधायकों के बल पर बनी सरकार शायद ही बिहार को साफ-सुथरा प्रशासन दे पाती।

हालांकि यह भी सही है कि खण्डित जनादेश की स्थिति में सरकार के गठन में कठिनाईयाँ आती ही हैं किंतु इन कठिनाइयों की आड़ लेकर सरकार गठन की प्रक्रिया को

अनुचित तरीके से रोकना अलोकतांत्रित और गैरकानूनी करार दिया जायेगा। दुर्भाग्य से केंद्र सरकार ने ऐसा ही किया।

कुल मिलाकर देखा जाये तो सरकार गठन के वक्त विधायकों की खरीद फरोख्त के आरोपों का यह सिलसिला साबित करता है कि भारतीय राजनीति में मूल्यों के लिये कोई जगह नहीं रह गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि देशभक्ति एवं समाज सेवा इस देश के राजनेताओं के लिये अब एक ढकोसला बनकर रह गई है।

खैर, अब जो हो, बिहार में चुनाव का डंका बज चुका है। इसमें संदेह नहीं कि 15 साल के लालू-राबड़ी राज के बाद और लोजपा से पाला बदल चुके विधायकों की ताकत से राजग को लाभ मिलने की आशा तभी की जा सकती है जब नीतीश कुमार समेत राजग की पूरी फौज ढंग से चुनावी जीत के लिये परिश्रम करे।

पुनः चुनाव होंगे, पुनः चुनावी घोषणा-पत्र बनेंगे लेकिन बिहार के विकास पर कम आरोपों प्रत्यारोपों पर ज्यादा जोर रहेगा। कोई लालू राज फिर से नहीं आने की बात करेगा तो कोई गरीबों के हित लड़ाई की बात वातानुकूलित रथ में बैठ कर करेगा तो कोई सिर्फ मुसलमान मुख्यमंत्री बनाने से ही विकास संभव होने की बात करेगा। मगर जनता फिर बौराई सी सोचती रहेगी और उन्हीं धूर्तों, बाहुबलियों व धन पशुओं में कम धूर्त का विकल्प खोजने की कोशिश करेगी। इस चुनाव में यह भी तय है कि सप्रंग तथा राजग दोनों लोजपा के बोट बैंक पर ही झपट्टा मारेंगे क्योंकि पिछले विधान सभा चुनाव में से 12.62 प्रतिशत वोट ही फ्लोटिंग है। जो हो बदली परिस्थिति में वोटों का विखराव रुकेगा। इस चुनाव में राजद और काँग्रेस की भी यही कोशिश होगी कि पिछली गलतियों से सीख लेते हुए धर्मनिरपेक्षता के मोर्चे पर मजबूत गोलबंदी के बूत राजग को शिकस्त दी जाये।

पिछले दो दशक के भारतीय राजनीति के इतिहास को देखने से ऐसा लगता है कि जोड़-तोड़ की राजनीति द्वारा सत्तासीन होने की प्रवृत्ति बड़ी तेजी से बढ़ी है। इसी दशक में व्यक्तिगत हितों की पूर्ति के लिये सिद्धांतों एवं मूल्य-मर्यादाओं को तिलांजलि दी गई, नियम तोड़े-मरोड़े गये। सत्तापक्ष हो या प्रतिपक्ष सबका एक ही नारा है- सत्ता का सुख भोगों, हमें भी भोगने दो। प्रायः सभी राजनीतिक दलों एवं जनप्रतिनिधियों ने अपनी विश्वसनीयता खो दी है। सत्ता के प्रति असंतोष काफी जोर से उपजा है क्योंकि विकास का प्रवाह जहाँ-तहाँ थम-सा गया है। उसका संपूर्ण प्रतिरूप किसी तालाब के ठहरे हुये पानी-सा हो गया है, जो जीवन का प्रतीक और समृद्धि का आधार होते हुये भी सड़ांध पैदा कर रहा है।

भारत को आजाद हुये 58 वर्ष बीत

गये, किंतु आजादी के समय जो समस्यायें मौजूद थीं वे आज भी विकराल रूप में हमारे सामने मौजूद हैं। सच तो यह है कि वे पहले से जयादा घनीभूत होती जा रही हैं। गरीबी, बेरोजगारी, मंहगाई, असमानता और अशिक्षा

आदि समस्यायें जयों-कि-त्यों हमें घेरे हुये हैं। इन समस्यायें ज्यों-कि-त्यों हमें घेरे हुये हैं। ये समस्याओं के समाधान के लिये न तो राजनीतिक दलों में कोई आम सहमति है और न केंद्र तथा राज्य सरकारों के बीच परस्पर तालमेल और ना ही इससे निपटने के लिये विशेष रणनीति।

दरअसल राजनीति में आज तरक्की पसंद लोगों का पतन होता जा रहा है और माफिया ने अपना राजनीतिक अड्डा बना लिया है। दल देश से बड़ा और व्यक्ति दल से बड़ा बनने की होड़ में है। यह संताप बहुत ही गहरा और गंभीर है। निश्चित रूप से यह हमारे लोकतंत्र के लिये खतरे का संकेत है, क्योंकि भ्रष्टाचार में डूबी आज के राजनीतिक बिरादरी में चंद सिक्के ही खरे हैं, बाकी तो सब खोटे ही खोटे हैं। इन्हें बदनामी का डर नहीं होता, क्योंकि यही तो इनकी फितरत है।

इस प्रकार देखा जाय तो हमारे देश की संसदीय व्यवस्था एक हल्के दौर से गुजर रही है, जिसका इसकी प्रगति पर विपरीत प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। परंतु मेरा दृढ़ विश्वास है कि हमारे देश की जनता में इस सामयिक समस्या से जूझने की आंतरिक ऊर्जा है और इस लोकतांत्रिक प्रणाली में राजनीतिक प्रतियोगियों को जनता भी अपना वजूद दिखा देने में सक्षम भी है। यदि हमें राजनीतिक दलों की उच्छृंखलता का मुकाबला करना है तो हमें जागना होगा तथा आंतरिक चेतना लानी होगी अन्यथा राजनीति के प्रति फैला निषेध भाव और भी मजबूत होगा जो लोकतंत्र को नष्ट कर देगा।

मुझे ऐसा लगता है कि इन ढ़ेर सारी चुनौतियों से जूझने की अपरिमित शक्ति और संकल्प से जुड़े अनुभव इस देश व समाज के प्रबुद्ध जनों एवं सजग नागरिकों में है जो संघर्ष की प्रतिबद्धता को जीवंत, धारदार और संगठित करने में सहायक हो सकते हैं। उनसे यह अपेक्षा की जा सकती है कि परिवर्तन की एक नई लहर, नए सोपान की तलाश की जिजीविषा को गतिमान वे करेंगे। जरूरत केवल इस बात की है कि वैसे पहरुए की खोज कर हम उन्हें संगठित करें। वैसे भी शासन और सरकार चलाने वाले राजनेता नहीं सुनते और वे उदंड, उदासीन, भ्रष्ट, कुनबापरस्त और निज में सिमटकर संकट तथा संत्रास को जन्म दे रहे हों तो जनता व मतदाता को उसकी नींद तोड़कर जगाना ही होगा। उसके जागे बिना शासक की उदंडता, अत्याचार और शोषण का अंत असंभव है। विश्व की तमाम क्रांतियाँ इसकी गवाह हैं। जब समाज के लोग जगेंगे तभी शासन का दानव दैन्य भाव से सेवारत होगा। स्वाभिमानी समाज ही शासन और शासक को अपना सेवक बनाकर रख सकता है। कुछ यदि आज की भाँति इसी प्रकार अलग-अलग रोते रहे तो कल उनके साथ रोनेवाले भी नहीं मिलेंगे।

'डायन' के बहाने औरतों पर अत्याचार

❑ अशोक कुमार सिन्हा

कहने को तो गौरव के साथ मैं भी कहता हूँ कि दुनिया के कई अन्य देशों की तरह भारत में भी पुरुष एकाधिकार वाले ज्यादातर क्षेत्रों में महिलाओं की हिस्सेदारी लगातार बढ़ती जा रही है। इस संदर्भ में मैं भारतीय पुलिस सेवा की पहली महिला अधिकारी किरण वेदी से लेकर एयर मार्शल पदमावती, समाजसेविका मेधा पाटेकर, लेखिका महाश्वेता देवी और देश के प्रमुख मीडिया हाउस, हिन्दुस्तान टाइम्स की संपादकीय निदेशक शोभना भरतिया तक के नाम गिना देता हूँ, लेकिन जब मेरी नजर देश के कुछ राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को डायन कहकर प्रताड़ित किये जाने की घटनाओं पर टिकती है तो अपनी बात पर संकोच होने लगता है। ऐसा लगता है कि भारतीय समाज का एक बड़ा तबका इस इक्कीसवीं सदी में भी प्राचीन काल की समाजिक-मानसिक रूढ़ियों, पूर्वाग्रहों और अंधविश्वासों से न तो मुक्त हो सका है और न ही पुरुष प्रधानता की सामंतवादी मानसिकता से उबर पाया है। उनके बीच पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी की डायन प्रथा जैसी कुप्रथा आज भी अपना असर दिखा रही है।

बिहार, झारखण्ड और उड़ीसा जैसे राज्यों के दूर-दराज के ग्रामीण इलाकों में शायद ही कोई माह ऐसा गुजरता होगा, जिसमें डायन करार देकर निर्दोष महिला की हत्या कर दिये जाने की दो-चार घटनाएँ सुनने को न मिलती हो, पश्चिम बंगाल, असम, छत्तीसगढ़ और उत्तर प्रदेश जैसे राज्य भी इस मामले में पीछे नहीं है।

सरकारी आंकड़े बोलते हैं कि पिछले पांच वर्षो के दौरान देश के विभिन्न राज्यों में जादू-टोना एवं डायन संबंधी अंधविश्वासों के चलते एक हजार से ज्यादा महिलाओं की हत्याएँ हुई हैं। इनमें भी सबसे ज्यादा हत्यायें उन राज्यों के आदिवासी और पिछड़े बहुल इलाकों में हुई है। हलांकि कभी-कभार इन राज्यों के शहरी इलाकों में भी डायन हत्या की इक्का-दुक्का घटनाएँ देखने-सुनने को मिलती रहती हैं।

लेकिन सरकारी आंकड़ों में डायन हत्या की सिर्फ वही घटनाएँ शामिल की जाती हैं, जिसकी सूचना स्थानीय थानों में दर्ज होती है। कहीं-कहीं भुक्तभोगी या मीडिया के प्रयास से ये घटनाएँ प्रकाश में आती हैं। चूंकि डायन हत्या की अधिकांश घटनाएँ जिला मुख्यालय से दूर-दराज के ग्रामीण क्षेत्रों में होती हैं, वैसी

स्थिति में पुलिस या मीडिया को उसकी जानकारी कभी-कभार ही मिल पाती है। इसलिए गैर-सरकारी सूत्रों के मुताबिक डायन हत्या की वास्तविक संख्या सरकारी आंकड़ों से कहीं अधिक हो सकती है।

जिस देश में मानवाधिकारों की रक्षा के लिए इतने सारे संगठन खड़े हों, उसी के कुछ राज्यों में डायन प्रथा के तहत प्रतिवर्ष सैंकड़ों महिलाओं की हत्या कर दी जा रही है, या फिर उन्हें शारीरिक एवं मानसिक रूप से प्रताड़ित किया जा रहा है, इस बात पर सहसा किसी को यकीन नहीं होगा। लेकिन जिन्हें बिहार, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, असम, उत्तर प्रदेश एवं उत्तरांचल जैसे राज्यों के ग्रामीण जन-जीवन को नजदीक से देखने का अवसर मिला है, उनके लिए डायन हत्या की घटनाएँ आश्चर्यजनक नहीं है।

अतीत पर निगाह डालें तो स्पष्ट होता है कि चुड़ैल, डायन, भूत-प्रेत आदि दुष्टात्माओं का अस्तित्व इन राज्यों के ग्रामीण इलाकों में पुरातन काल से ही मान्य है। लोगों को विश्वास है कि डायन होती है और अपने तंत्र-मंत्र से दूसरों को नुकसान पहुँचाती है। शारीरिक, मानसिक एवं अन्य बीमारियों के लिए लोग डायन को ही जिम्मेवार मानते हैं और डाक्टर की बजाय ओझा से इलाज कराना न्यादा पसंद करते हैं।

समाजशास्त्री भी यह स्वीकार करते हैं कि अज्ञानता, गरीबी एवं अशिक्षा के चलते अलौकिक तत्वों को लेकर देश के कुछ राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी भय का माहौल है। वहाँ के लोग डायन, ओझा-गुनी और भूत-प्रेत को अपनी जिंदगी से जुदा नहीं मानते। दरअसल, उन राज्यों के सुदूर ग्रामीण इलाकों में स्वास्थ्य सुविधा की अनुपलब्धता के चलते लोगों की धड़ल्ले से असामयिक मौतें होती हैं और पीड़ित परिवार के लोग अज्ञानता और अंधविश्वासों के कारण जादू-टोना एवं टोटका में ही इसका हल ढूँढ़ते हैं। ऋतु परिवर्तन, कुपोषण, विषाक्त भोजन या अन्य किसी कारण से परिवार का कोई सदस्य बीमार पड़ा नहीं कि वे ओझाओं की शरण में चले आते हैं। वह उन्हें डायन भूत, प्रेत आदि से मुक्ति दिलाता है। ओझा की बात को वे "ब्रह्म वाक्य" मानते हैं और हर बीमारी में डाक्टर की बजाय झाड़-फूँक से इलाज कराना ज्यादा पसंद करते हैं। उन्हें विश्वास होता है कि ओझा अपनी शक्ति के बल पर बीमारी के लिए जिम्मेवार डायनों की खोज कर लेता है। प्रेतात्माओं को अपने वश में रखने के वह (ओझा) दावे भी करता है। वह झाड़-फूँक के सहारे रोगी को ठीक करने का प्रयास करता है और इसके एवज में मुर्गा, दारू वगैरह लेता है। अगर रोगी ठीक हो जाता है तो ओझा के प्रति लोगों का विश्वास और गहरा हो जाता है। रोगी के ठीक नहीं होने पर वह बड़ी चालाकी से यह विश्वास दिलाता है कि कोई न कोई डायन इस बीमारी के लिए जिम्मेवार है। शुरूआत में वह किसी महिला पर डायन होने का सीधे आरोप नहीं लगाता।

वह रहस्यमयात्मक ढंग से उस महिला की पहचान कुछ इस तरह बताता है-काला जादू करनेवाली महिला कोई विधवा है, बूढ़ी है या फिर बदसूरत चेहरे वाली बांझ है। फिर रोगी के परिजनों के अनुरोध पर वह डायन को वश में करने के लिए विशेष पूजा का उपाय बताता है। विशेष पूजा यानि ओझा की विशेष कमाई। इस बीच अगर रोगी अपने आप ठीक हो गया तो ओझा की तो बल्ले-बल्ले। अगर रोगी नहीं बचा तो ओझा का तब भी कोई दोष नहीं क्योंकि डायन जबर्दस्त जो है। फिर वह अनुष्ठान का नाटक करता है।

इसके तहत वह जलती आग में लोहवाम या मिर्च डालकर एक खास तरह की गंध पैदा करता है। फिर विचित्र स्वर में मंत्रोच्चारण, गाने और उछलने-कुदने के बाद वह घोषणा करता है कि असली अपराधी ढूँढ़ लिया गया है और वह फलां औरत है, जिसने अपने मंत्रों के द्वारा उस आदमी को बीमार कर दिया है या मार दिया है। ओझा की बात पर विश्वास कर हर कोई उसे डायन मानने लगता है। फिर ओझा के इशारे पर कुछ लोग गाँव की उस कमजोर या असहाय औरत को पकड़ कर ले आते हैं। वह औरत बूढ़ी, बदसूरत, विधवा, नि:संतान, कोई भी हो सकती है। इसके बाद ओझा भीड़ के सामने डायन करार दी गई औरत को शारीरिक या मानसिक रूप से प्रताड़ित करना शुरू कर देता है। वह उस औरत की पिटाई तक करता है। उसके हाथ में रस्सी, मोर पंख, झाड़ू या डंडा होता है। कहीं-कहीं तो उस औरत से यह कबूल करवाने के लिए कि, उसी ने अमूक आदमी या बच्चे को अपने काले जादू से नुकसान पहुचाया है, उसकी नाक में मिर्च का धुआँ तक छोड़ता है। उसकी यातना का दौर उस समय तक चलता है, जब तक डायन करार दी गई औरत यह स्वीकार न कर लें कि वह डायन है। उस औरत द्वारा मजबूरन डायन होना स्वीकार किये जाने के बाद ओझा-महाराज की जय-जयकार होने लगती है। तत्पश्चात अपने इष्टदेव को खुश करने के लिए वह चढ़ावे के नाम पर लोगों से ढेर सारे रुपये ऐंठ लेता है। डायन करार दी गई औरत की सजा ओझा के कथनानुसार बहाल होती है। कहीं उसे मैला खिलाकर तो कहीं उसके सिर के बाल मुड़वाकर समाज से बाहर निकाल दिया जाता है। फिर उसकी संपत्ति का प्रभावशाली लोगों द्वारा आपस में बँटवारा कर लिया जाता है। कभी-कभार पत्थरों और डंडों से पीटकर उसे मार भी डाला जाता है। अगर उक्त महिला के सगे-संबंधी इसका विरोध करते हैं तो महिला समेत उनकी भी हत्या कर दी जाती है।

आम लोगों को यह कहकर भ्रमित किया जाता है कि डायन नवरात्रि के अवसर पर किसी को मार कर सिद्धि प्राप्त करती है और डायन बनने के लिए किसी औरत को साधना की कठिन एवं जटिल प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। सबसे पहले वे किसी कथित सिद्ध डायन से संपर्क करती है। एक प्रचलित अंधविश्वास के अनुसार कार्तिक अमावस्या की भयानक कालरात्रि के गहन सन्नाटे में डायनों की काली दीक्षा विधि प्रारंभ होती है। डायन नंगे बदन होकर सुनसान श्मशान में नर खोपड़ी का दीया जलाकर भयानक मंत्रोच्चारन के साथ काल-भैरवी की भांति नृत्य करती है। इनकी कथित गुरुआईन पशु बलि या काले मूर्गे का रक्त तर्पण करती हुई डायन विद्या देती है। इसी क्रम में डाकिनियाँ व पिशाचिनी नाना रूप धारण कर विकराल मायावी आकृतियों से नौसिखुए डायनों को भयभीत कर दीक्षा भ्रष्ट का प्रयास करती है और डायन उनसे सिद्धि का वरदान मांगती है। यदि वह डायन बिना डरे साधना जारी रखती है, तब जाकर उसे सिद्धि हासिल होती है। कहा जाता है कि कथित सिद्ध डायनें अपने मंत्रबल से किसी भी शिशु का कलेजा निकाल कर खा सकती है। यही कारण है कि ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी माताएँ नवरात्रि के समय अपने नौनिहालों के हाथ-पांव के तलवे और पेट की नाभियों में काजल लगा कर रखती हैं।

प्राय: ऐसा देखा गया है कि प्रत्येक गाँव में एक या दो महिला ही डायन के रूप में प्रसिद्ध होती है। थोड़ी सी पढ़ी-लिखी या सुंदर महिला हो तो उसे भी डायन नहीं माना जाता। कहने का तात्पर्य यह है कि जो महिला देखने में कुरूप होती है, उन्हें ही डायन घोषित किया जाता है। जाहिर है कि दलित, आदिवासी एवं पिछड़े वर्गों की संतानहीन, विधवा, कमजोर एवं अधिक पूजा-पाठ करनेवाली असहाय महिला ही अक्सरहां डायन घोषित की जाती है। इस बात का जबाब कोई नहीं देता कि आदिवासी, दलित एवं पिछड़े वर्ग की कुरूप या लाचार महिलाएँ ही डायन क्यों होती हैं?

यही कारण है कि गाँव-देहात में कोई बदसूरत चेहरेवाली औरत (कथित डायन) जब अपने घर से निकलती है तो गाँव की अन्य महिलाएँ अपने छोटे बच्चों को ओट में छिपा लेती हैं। उस औरत की नजर अगर गलती से उनके बच्चों पर पड़ जाती है तो वे आग जलाकर सरसों के दाने से ओइंछ कर अपने बच्चों का नजर उतारती है। डायन से रक्षा के लिए माताएँ अपने बच्चों की कमर में काले रंग का कपड़ा बांधकर रखती है, जिसमें लोहे की कुंजी या ताबीज रहता है। उनका मानना है कि काला कपड़ा और लोहे की किसी वस्तु के शरीर से सटे रहने पर डायन के वाण का कोई असर नहीं होता है। यानि डायन का आतंक बालमन में ही डाल दिया जाता है जो बड़ा होने पर भी उनका पीछा नहीं छोड़ता।

बिहार के पिछड़े एवं दलित परिवार के लोग आज भी भूत-प्रेत, डायन विद्या एवं टोना-टोटका के पीछे किस कदर पागल हैं, उसका अंदाजा राजधानी पटना में पिछले अक्टूबर माह में घटी एक घटना से लगाया जा सकता है। पटना शहर के लोहानीपुर मुहल्ले के मुसहर टोली में रहनेवाले एक 14 वर्षीय किशोर की अज्ञात बीमारी के कारण मृत्यु हो गई। ओझा ने उसकी मौत के लिए मुहल्ले की 60 वर्षीय विधवा महतबिया देवी की डायन विद्या को जिम्मेवार ठहराया। मुहल्लेवासियों ने ओझा की बातों में आकर महतबिया देवी को मृत किशोर को जिंदा करने का आदेश दिया। महतबिया देवी द्वारा असमर्थता व्यक्त किये जाने पर लोगों ने उसे जबरन उस किशोर के शव के साथ एक झोपड़ी में बंद कर दिया। महतबिया देवी रात भर शव के साथ झोपड़ी में बंद रही। सुबह होते ही मृत किशोर के घर वालों के साथ मुहल्लेवासियों ने वृद्धा पर जुल्म ढाहना शुरू कर दिया। न सिर्फ उसे निर्दयतापूर्वक पीटा गया बल्कि इंसानियत और मानवता की सभी सरहदें पार करते हुए लोगों ने 60 वर्षीय विधवा के गुप्तांग में डंडा डालकर उसे प्रताड़ित किया। महतबिया देवी दर्द से चिल्लाती रही लेकिन कोई भी उसके समर्थन में सामने नहीं आया। अंतत: 6 घंटे की यातना और मार सहने के बाद महतबिया देती ने दम तोड़ दिया।

इससे मिलती-जुलती एक और घटना

पिछले 17 अप्रैल, 2005 की है। बिहार के पूर्णिया शहर के आदिवासी टोले में रहनेवाले हीरा उराँव के पिता का श्राद्ध था। श्राद्ध के अवसर पर आयोजित भोज में उसी टोला की सुमित्रा देवी भी शामिल थी। उसी दरम्यिान सुमित्रा ने हीरा उराँव की बेटी को स्नेहवश दुलार-पुचकार किया। संयोगवश थोड़ी देर बाद ही वह बच्ची बीमार पड़ गयी और अगले दिन उसकी मौत भी हो गयी। श्राद्ध के दिन बच्ची के साथ प्यार-दुलार करते हुए सुमित्रा को कई लोगों ने देखा था। इसलिए यह हवा उड़ते देर नहीं लगी कि सुमित्रा ने डायन बिद्या के द्वारा बच्ची को मार डाला है। थोड़ी देर में ही सुमित्रा के घर भरी भीड़ जुट गयी और उसने सुमित्रा पर बच्ची को जिंदा करने के लिए दबाव डालना शुरू कर दिया। ऐसा नहीं होने पर भीड़ ने सुमित्रा की पिटाई शुरू कर दी। पिटाई का दौर सुमित्रा की मौत होने तक जारी रहा।

डायन हत्या के लिए कुंठित यौनाचार भी एक विशेष कारण बन कर उभरा है। यदि किसी विधवा या असहाय औरत ने क्षेत्र के किसी प्रभावी मर्द के साथ यौनाचार से इन्कार कर दिया तो प्रतिशोध में उस औरत को डायन करार दिया जाता है। इसके मूल में यह भावना होती है कि चूंकि उसने मेरी इच्छा पूरी नहीं की है, इसीलिए अब मैं उसे चैन से जीने नहीं दूँगा। झारखंड के पश्चिमी सिंहभूम जिले के नारंगबेरा गाँव में कई बच्चे एक साथ बीमार पड़ गये। बीमारी के लक्षण स्पष्ट रूप से हैजा के थे। उचित इलाज के अभाव में दो-तीन बच्चों ने दम भी तोड़ दिया। इसी बीच ग्राम प्रधान के दबाव में आकर ओझा ने पूरे गाँव में यह खबर फैला दी कि बच्चे गाँव की पार्वती गोप नामक महिला के जादू-टोना के चलते मरे हैं। तब ग्राम प्रधान की अध्यक्षता में गाँववालों की एक बैठक बुलायी गयी और बैठक में लिये गये निर्णय के आलोक में पार्वती गोप और उसके परिवार के तीन अन्य सदस्यों की हत्या कर दी गई। बाद में पुलिस की छानबीन से यह निष्कर्ष निकला कि गाँव के प्रधान की बुरी नजर पार्वती गोप की तरफ थी। पार्वती गोप की सुंदरता पूरे इलाके में चर्चित थी। एक दिन प्रधान ने उसके साथ जोर जबर्दस्ती करनी चाही थी लेकिन पार्वती गोप द्वारा प्रतिरोध किये जाने के कारण वह अपने कुत्सित उद्देश्य में सफल नहीं हो सका था। तभी से वह पार्वती गोप से बदला लेने की फिराक में था।

बिहार की एक चर्चित स्वयंसेवी संस्था ''जगदेव फाउन्डेशन'' द्वारा डायन हत्या के कारणों की जांच-पड़ताल किये जाने पर काफी चौकानेवाले तथ्य सामने आये हैं। संस्था के सचिव आर० के० राजू के मुताबिक लोगों की अज्ञानता, कुंठित यौनाचार और उनका अंधविश्वासी ही इस कुप्रथा का एकमात्र कारण नहीं है, आपसी रंजिश एवं अन्य कारणों से भी लोग किसी महिला पर डायन होने का आरोप लगाते हैं। अन्य कारणों में भूमि संबंधी लालच प्रमुख है। सर्वेक्षण के मुताबिक देहाती इलाकों में डायन हत्या की 90 प्रतिशत घटनाएँ उन उम्रदराज बांझ महिलाओं या विधवाओं की होती है, जिनके पास खेती लायक भूमि होती है। गाँव के प्रभावशाली लोगों द्वारा ओझाओं की मिलीभगत से वैसी ही महिलाओं को निशाना बनाया जाता है जिनकी संपत्ति का कोई वारिस नहीं होता ताकि उनकी हत्या के बाद उसकी भूमि, संपत्ति पर कब्जा जमाया जा सके। प्रभावशाली लोगों में गाँव का जमींदार, मुखिया, ओझा या धनाढ्य व्यक्ति, कोई भी हो सकता है।

इसके तहत जिस औरत को ''डायन'' घोषित करना होता है, प्रभावशाली लोग उसे ''तेज नजर'' कहना शुरू कर देते हैं। इसी बीच यदि उस गाँव का कोई व्यक्ति अचानक बीमार पड़ जाता है या मर जाता है तो वे ओझा के साथ मिलकर गाँववालों को यह कहकर बरगलाते हैं कि अमूक औरत डायन है और उसने ही अपने जादू-टोना से उस आदमी को बीमार कर दिया है या मार दिया है। तदुपरान्त विधवा की हत्या कर गाँव के संपन्न या प्रभावशाली लोगों द्वारा उसकी संपत्ति का आपस में बंटवारा कर लिया जाता है। पिछले 26 अगस्त को उड़ीसा के बलांगीर के बगेसरा गाँव की बंझ मंगरी देवी को उसके भतीजे मलार उरांव ने डायन कहकर टांगी से टुकड़े-टुकड़े कर मार डाला। पुलिस ने गिरफ्तार कर जब पूछ-ताछ की तो मलार उरांव ने यह कबूल किया कि संपत्ति के लालच में उसने हत्या की है।

महिलाओं को डायन करार देकर उन्हें जान से मार डालने अथवा प्रताड़ित करने की प्रचलित प्रथा के निरोधात्मक उपायों हेतु अविभाजित बिहार सरकार द्वारा वर्ष 1999 के अक्टूबर माह में डायन प्रतिबंध अधिनियम लागू किया गया था, जो झारखंड राज्य में भी लागू है। अधिनियम में यह वर्णित है कि यदि कोई व्यक्ति किसी औरत को डायन कहकर उसे शारीरिक या मानसिक यातना अथवा प्रताड़ित करता है तो उसे 6 माह तक की अवधि के लिए कारावास की सजा अथवा दो हजार रुपये तक के जुर्माने अथवा दो हजार रुपये तक के जूर्माने अथवा दोनों सजा से दंडित किया जाता है। उम्मीद की गई थी कि इस अधिनियम के लागू होने के बाद महिलाओं को डायन कहकर प्रताड़ित किये जाने की घटनाओं पर काफी हद तक काबू पाया जा सकेगा। लेकिन पिछले साढ़े पांच वर्षो के दौरान बिहार एवं झारखण्ड में डायन करार देकर 500 से अधिक महिलाओं की हत्या ने अधिनियम की सफलता पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है।

दरअसल, डंडे या कानून के जोर पर सैंकड़ों साल से चली आ रही परंपरा या अंधविश्वास चंद महीनों में उन्मूलित नहीं हो सकते। इस समस्या का अगर कोई स्थायी समाधान है तो वह है समाज की मानसिकता में परिवर्तन। पूरे समाज को उन रूढ़ियों और अंधविश्वासों से मुक्त कराना होगा, जिनके चलते ऐसी घटनाएँ घटती हैं। अशिक्षा और आर्थिक पिछड़ेपन, अंधविश्वास के लिए मुख्य रूप से जिम्मेवार हैं। जब आमजन विशेषकर महिलाएँ शिक्षित होंगी, स्वास्थ्य कार्यक्रमों में रूचि लेगी, तभी अंधविश्वासों को मिटाया जा सकता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि भारत सरकार और राज्य सरकारें अधिनियमों को चक्कर में न पड़कर लोकशिक्षण और जनजागरण अभियान चलाकर ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त अंधविश्वास को मिटाने की कार्रवाई करें। इस अभियान में व्यवस्था के सभी अंगों के अलावा समाज के सभी वर्गो को भी शामिल कर उसे एक प्रभावी रूप दिया जाना चाहिए। यह कार्य दीर्घकालीन तो है, लेकिन दुःश्वार नहीं। आखिर पाबंदियाँ तभी कारगर होती हैं, जब लोग तैयार होते हैं।

संपर्क : मकान संख्या-बी-20, इंदिरापुरी कॉलोनी, पो०-बी०भी० कॉलेज, पटना-800014 (बिहार), दूरभाष : 2581949, 09431049498

DENSA

PHARMACEUTICALS PVT. LTD.

Fact. Add. :Plot No. 10, Dewan&Sons Udyog Nagar,
Taluka Palghar, Dist. Thane, MAHARASHTRA

Phone No.: (952525) 55285èk54471, Fax: 55286

&

DANBAXY

PHARMACEUTICALS PVT. LTD.

(SOFT GELATIN)

Fact. Add: Plot No. K-38, MIDCTarapur,
Boisar, Dist. Thane, MAHARASHTRA

Office Address:

1, Anurag Mansion, Ashokvan,
Shiv Vallabh Raod, Dahisar (E),
Mumbai-400068

Phone No.: 8974777, Fax: 8972458

MR. DEVENDRA KUMAR SINGH, C.M.D

अणुव्रत अनुशास्ता एवं अहिंसा यात्रा के प्रवर्तक

आचार्यश्री महाप्रज्ञ के दिल्ली शुभागमन पर नागरिक अभिनंदन

दिल्ली के बड़े लोगों का ध्यान छोटी बातों की ओर दिलाने आये हैं महाप्रज्ञ

विचार कार्यालय, दिल्ली

दिल्ली में बड़े-बड़े लोग रहते हैं, जिनका ध्यान भी बड़ी-बड़ी बातों की ओर रहता है। इन बड़े लोगों का ध्यान छोटी बातों

की ओर आकर्षित करने हम दिल्ली आए हैं। विकास की बड़ी-बड़ी योजनाएँ बन रही हैं पर भूखे और दीन-दुखियों का कोई इलाज नहीं हो पा रहा है, बड़े लोगों की दृष्टि में भूख और अभाव कोई समस्या नहीं है जबकि मानव की भूख सबसे बड़ी समस्या है यही हिंसा, सांप्रदायिक एवं जातीय उन्माद एवं आतंकवाद का सबसे बड़ा कारण है। वर्तमान विकास इसी मिथ्या अवधारणा पर चल रहा है। इस विकास के नीचे हिंसा, युद्ध, उन्माद को पनपने के अवसर मिलते हैं। इसलिए जरूरत है समस्या के मूल के प्रति जागरूक होने की, उसे सुलझाने का दृष्टिकोण विकसित करने की और चिंतन को मूर्तरूप देने की।

ये उदगार, हैं अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री महाप्रज्ञ के जिसे उन्होंने दिल्ली शुभागमन पर अपने अभिनंदन समारोह में व्यक्त किए। 27 जून 2005 को महरौली के छतरपुर रोड स्थित आध्यात्म साधना केंद्र के अणुव्रत सभागार में दिल्ली के नागरिकों की ओर से आचार्यश्री महाप्रज्ञ तथा युवाचार्यश्री महाश्रमण का नागरिक अभिनंदन किया गया। समारोह में मुख्य अतिथि तथा दिल्ली के उपराज्यपाल श्री बी० एल० जोशी, महापौर श्री सतवीर सिंहतथा डॉ० साहिब वर्मा के अतिरिक्त नगर के साहित्यकार, पत्रकार, प्रबुद्धजन, समाज सेवियों सहित हजारों नागरिक उपस्थित थे। विभिन्न संगठनों के साथ राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक संस्था 'राष्ट्रीय विचार मंच' का प्रतिनिधित्व कर रहे थे मंच के राष्ट्रीय महासचिव तथा 'विचार दृष्टि' के संपादक श्री सिद्धेश्वर अपने संगठन के सदस्यों सहित।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री बी० एल० जोशी ने कहा कि अहिंसा, शांति, अनुशासन और संयम के मार्ग पर चलकर ही कोई परिवार, समाज और राष्ट्र वास्तविक विकास कर सकता है। आज हमारे देशवासियों का इन महान मूल्यों को आत्मसात करने की आवश्यकता है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि दिल्ली में आचार्यश्री के चातुर्मास बिताने के दौरान राजधानीवासी उनके सान्निध्य से लाभान्वित होंगे। दिल्ली के महापौर श्री सतवीर सिंह ने अभिनंदन-पत्र पढ़ा तथा उपराज्यपाल एवं दिल्ली के पूर्व मुख्यमंत्री डॉ० साहिब सिंह वर्मा ने सम्मिलित रूप से आचार्यश्री महाप्रज्ञ को अभिनंदन-पत्र भेंट किए।

अभिनंदन समारोह से पूर्व आचार्यश्री महाप्रज्ञ की अहिंसा यात्रा की एक भव्य रैली के० एल० जैन फार्म हाउस, बसंत कुँज से रवाना हुई जहाँ दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने आचार्यश्री महाप्रज्ञ का स्वागत करते हुए कहा कि दिल्ली में अहिंसा यात्रा के आगमन से राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सौहार्द को बल मिलेगा।

प्रारंभ में अहिंसा यात्रा के राष्ट्रीय प्रवक्ता मुनिश्री लोकप्रकाश 'लोकेश' ने आचार्य श्री महाप्रज्ञ के अभिवंदन में उनके दिल्ली प्रवास का अधिकाधिक लाभ लेने की भावना व्यक्त करते हुए कहा कि अहिंसा यात्रा के दौरान महाप्रज्ञ ने अनेकों प्रांतों एवं सैकड़ों गाँवों में अहिंसा एवं शांति की स्थापना के लिए सफल एवं अभिनव उपक्रम किए हैं। इस अवसर पर डॉ० साहिब सिंह वर्मा ने कहा कि महाप्रज्ञ जी जिस प्रकार अहिंसक वातावरण बना रहे हैं वह स्तुत्य है।

युवाचार्यश्री महाश्रमण ने अपने उद्‌गार में अहिंसक चेतना, नैतिक मूल्यों और मानवीय एकता के विकास पर बल दिया।

साध्वी प्रमुखा कनक प्रभा, प्रवास व्यवस्था समिति के अध्यक्ष मांगीलाल सेठिया, जैन समाज के रतन जैन आदि ने भी अपने विचार व्यक्त करते हुए महाप्रज्ञजी का अभिनन्दन किया। श्री सुखराज सेठिया ने मंच संचालन तथा प्रवास समिति के वरिष्ठ उपाध्यक्ष कन्हैया लाल पटावरी ने आभार व्यक्त किया।

साहित्यिक पत्रकारिता का लक्ष्य उच्चतर मूल्य की स्थापना होना चाहिए

-डॉ० भगवती शरण मिश्र

'साहित्यिक पत्रकारिता की चुनौतियाँ' पर संगोष्ठी

विगत 27 अप्रैल को पटना में अवर अभियंता संघ, समय संवाद, आनंदाश्रम तथा जाह्नवी विचार मंच के संयुक्त तत्त्वावधान में ई० भोला प्र० सिंह तोमर की 9 वीं पुण्य तिथि पर 'साहित्यिक पत्रकारिता की चुनौतियाँ', पर आयोजित संगोष्ठी में अपराजिता के संपादक डॉ० भगवती शरण मिश्र ने कहा कि साहित्यिक पत्रकारिता का लक्ष्य उच्चतर मूल्यों की स्थापना होना चाहिये। जो संस्कार और संस्कृति को चौपट कर रहा है उसके विरूद्ध नहीं लिखने का फैशन बन गया है। डॉ० रामशोभित प्र० सिंह की अध्यक्षता में आयोजित इस संगोष्ठी के विशिष्ट अतिथि जिया लाल आर्य ने डॉ० तोमर को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके रास्ते पर चलने की बात कही । 'विचार दृष्टि' के संपादक सिद्धेश्वर ने संगोष्ठी के निर्धारित विषय पर एक आलेख प्रस्तुत करते हुये कहा कि लोकतंत्र का बदलता हुआ स्वभाव और

सांस्कृतिक आक्रमण में निरंतर वृद्धि -ये साहित्यिक पत्रकारिता के समक्ष दो बड़ी चुनौतियां हैं जिससे निपटने के लिये साहित्यिक पत्रिकाओं को पहल करनी होगी और जनता को भी अपना मौन तोड़ना होगा। इसके लिये उन्हें जनता के पहरेदार बन कर उनमें चेतना जाग्रत करने होंगे। संगोष्ठी में डॉ० राधाकृष्ण सिंह ने भी अपने विचार

रखे। संगोष्ठी के दूसरे चरण में आयोजित काव्य गोष्ठी में विजय गुँजन, राजकुमार प्रेमी, भगवती प्र० द्विवेदी, आनंद किशोर शास्त्री, हरिन्द्र विद्यार्थी, स्वयं प्रभा झा तथा घमंडी राम ने अपने काव्य-पाठ से लोगों को सराबोर किया। प्रारंभ में हृषीकेष पाठक ने अतिथियों का स्वागत तथा डॉ० शिवनारायण ने संचालन किया। आभार व्यक्त किया अजय लाल जाह्नवी ने।

शंकर प्रसाद जायसवाल, पटना से

डॉ० भगवती शरण मिश्र के सम्मान में

ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा पर संगोष्ठी

विचार कार्यालय, पटना

विगत 28 अप्रैल को समय संवाद, जगदेव फाउंडेशन एवं अ० भा० जहनू विचार मंच के संयुक्त तत्त्वावधान में स्थानीय सिन्हा लाइब्रेरी के सभागार में आयोजित समारोह में 'अपराजिता' के संपादक डॉ० भगवती शरण मिश्र को सम्मानित किया गया और ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा पर एक संगोष्ठी भी हुई जिसमें आधार आलेख प्रस्तुत करते हुये कृष्णानन्द ने कहा कि ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की परंपरा भारतेन्दु युग से ही चली आ रही है और इनकी अपनी सीमा होती है। डॉ० मिश्र के सम्मान में जियालाल आर्य, डॉ० एस०एन०पी० सिनहा, सिद्धेश्वर, डॉ० राधाकृष्ण सिंह, परेश सिन्हा आदि ने अपने उदगार व्यक्त किये। अपने सम्मान के उत्तर में डॉ० भगवती शरण मिश्र ने कहा कि ऐतिहासिक उपन्यास लिखने का उद्देश्य ऐतिहासिक तथ्यों को तोड़-मरोड़कर नहीं, बल्कि रोचक ढंग से प्रस्तुत कर नयी पीढ़ी को उन तथ्यों से अवगत कराना ही होता है।

डॉ० रामशोभित प्रसाद सिंह की अध्यक्षता में संपन्न इस संगोष्ठी के प्रारंभ में जगदेव फाउंडेशन के अशोक कुमार सिन्हा ने अतिथियों का स्वागत किया तथा हृषीकेष पाठक ने आभार प्रकट किया। कार्यक्रम का संचालन डॉ० शिवनारायण ने किया।

–शिवकुमार, पटना से।

उत्तर आधुनिक संस्कृति की विद्रुपताओं का आख्यान प्रस्तुत करती उदभ्रांत की कविताएँ

विगत 16 जून को पटना के सिन्हा लाइब्रेरी में समय संवाद एवं जगदेव फाउंडेशन की ओर से कवि रमाकांत शर्मा 'उदभ्रांत' के सम्मान में आयोजित एकल काव्य-पाठ में वक्ताओं ने कहा कि कवि उद्भ्रांत की कविताएँ उतर आधुनिक संस्कृति की विद्रुपताओं का आख्यान प्रस्तुत करती हैं । डॉ रामशोभित प्र० सिंह की अध्यक्षता में संपन्न इस कार्यक्रम में कवि उदभ्रांत ने अपनी 'स्वाहा', 'जूता', 'सनसनी', 'वृक्ष की छांव' तथा तलाक-तलाक कविताओं का पाठ कर राजनीति पर कई तीखे व्यंग्य प्रहार किए। कवि परेश सिन्हा, 'विचार दृष्टि' के संपादक सिद्धेश्वर, कवयित्री स्वयं प्रभा झा, डॉ मेहता नगेन्द्र सिंह, कृष्णानंद, कथाकार मधुकर सिंह तथा चित्रकार आनंदी प्रसाद बादल ने उद्भ्रांत की कविताओं पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि इस कवि में छोटे विषय के माध्यम से बड़ी बातें कहने की कला है। प्रारंभ में अशोक कुमार सिन्हा ने अतिथियों का स्वागत तथा अजब लाल जन्हावी ने आभार व्यक्त किया । कार्यक्रम का सफल संचालन डॉ० शिवनारायण ने किया।

-अशोक कुमार सिन्हा, पटना से

हैदराबाद की चिट्ठी

प्रस्तुतिः चन्द्रमौलेश्वर प्रसाद

कलाः कला सदा से ही सम्मानित रही है। यदि राज्य और अन्य धनाड्य लोग कला को प्रोत्साहित न करें तो कलाकारों की परिस्थिति दयनीय हो जायेगी। एम० एफ० हुसैन जैसे वरिष्ठ एवं प्रसिद्ध कलाकार को भी परमेश्वर गोदरेज जैसी कला प्रेमी का संरक्षण मिला, तब ही उन्होंने अपने हैदराबाद निवास 'सिनेमा घर' को संग्रहालय बनाने का निश्चय किया। हैदराबाद शहर कलाकारों के आकर्षण का केन्द्र बनता जा रहा है। इसका एक मुख्य कारण राज्य से प्रोत्साहन मिलना भी है। 9 अप्रैल 2005 को राज्य के मुख्यमंत्री डॉ० वाई० एस० राजशेखर रेड्डी ने रबिन्द्र भारती के कला भवन में 'सिरी हेरिटेज कलर्स' कला प्रदर्शिनी का उदघाट्न किया जिसमें लगभग 100 पेंटिंगस मौजूद थे। इन कलाओं में महिलाओं की विभिन्न मुद्राओं के चित्रों के साथ-साथ मोनालिसा नल-दमयंती, महात्मा गाँधी आदि के पोट्रेट आदि को काफी सराहना मिली।

साहित्यः अखिल भारतीय लेखिका सम्मेलनः साहित्य अकादमी, नई दिल्ली और सांस्कृतिक विभाग, आंध्र प्रदेश के संयुक्त तत्वावधान में हैदराबाद के पब्लिक गार्डन स्थित जुबली हाल में तीन-दिवसीय अखिल भारतीय लेखिका सम्मेलन 28 से 30 जनवरी 2005 तक चला जिसमें देश भर से आये विभिन्न भाषाओं की लेखिकाओं ने भाग लिया। इस सम्मेलन में बंगला की नवनीता देव सेन, अंग्रेजी की सूजी थारना, शशि देशपांडे, हिंदी की चित्रा मुद्‌गल, मृदुला गर्ग, अलका सरावगी, सुनिता जैन, उर्दू की जिलानी बाबू, तेलुगू की वासीरेड्डी सीता देवी, वोल्गा, अब्बूरी छाया देवी, तमिल की शिवशंकरी, मराठी की मीना काकोडकर, कश्मीर से नीरजा मट्टू, उड़िया की लिपि पुष्पा नायक, मलयालम की बी. चंद्रिका आदि ने भाग लिया। सम्मेलन में विभिन्न भारतीय भाषाओं की शिरकत तो हुई, परंतु उन्हें अपनी रचनाएँ अंग्रेजी में अनुदित करके सुनानी पड़ी, जिससे लेखिकाएं काफी अप्रसन्न थीं। ऐसे में, हिंदी साहित्यकार मृदुला गर्ग ने अपनी कहानी हिंदी में ही सुनाई, जिसका अन्य लेखिकाओं ने समर्थन किया और उनके इस अभियान को सराहा।

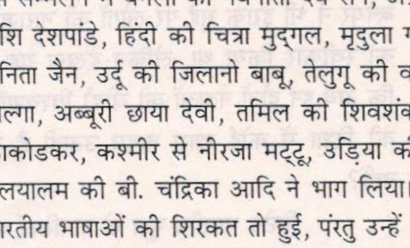

हिंदी साहित्य सम्मेलनः हैदराबाद के काचीगुडा स्थित मैडम अंजय्पा हॉल में हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के 57 वें अखिल भारतीय अधिवेशन का दो-दिवसीय कार्यक्रम 6 और 7 मार्च 2005 को सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम का उद्‌घाटन पूर्व सांसद एवं अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ के अध्यक्ष लक्ष्मीमल सिंघवी ने किया। समारोह के सभापति सुप्रसिद्ध कवि शेषेन्द्र शर्मा, हिंदी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी, प्रधानमंत्री विभूति मिश्र, गोकुल चंद्र शास्त्री, राजकुमारी इंदिरा धनराजगीर, डॉ. कैलाशचंद्र मौर्य, मिथिलेश कुमारी मिश्र, डॉ. राखी उपाध्याय आदि ने इस कार्यक्रम में भाग लिया। इस अवसर पर पद्मभूषण विष्णु प्रभाकर तथा भारतीय ज्ञानपीठ के निदेशक डॉ० प्रभाकर श्रोत्रिय की मौजूदगी ने हिंदी प्रेमियों को लाभान्वित किया। कार्यक्रम का संचालन श्याम कृष्ण पाण्डेय ने किया तथा संयोजन डॉ. जे. वी. कुलकर्णी ने किया।

खेलः10 वॉ राष्ट्रीय युवा उत्सवः 21 फरवरी 2005 को हैदराबाद के लालबहादुर स्टेडियम में 10 वॉ राष्ट्रीय युवा उत्सव मनाया गया जिसका शुभारंभ राज्यपाल सुशील कुमार शिंदे ने किया। देश के युवाओं में छिपी प्रतिभा व कला को प्रोत्साहन देने, क्षेत्रीय कलाओं का प्रदर्शन करने एवं युवाओं को राष्ट्रीय निर्माण हेतु प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से आयोजित इस कार्यक्रम में छतीसगढ, नागालैंड, मध्य प्रदेश, गोवा, पंजाब, मणिपुर, राजस्थान, असम, त्रिपुरा आदि के प्रतिभागियों ने पारंपारिक वेशभूषा में लोकनृत्य प्रस्तुत किए।

संपर्कः 1-8-28, यशवंत भवन, अलवाल,
सिकंद्राबाद-500 010
(आंध्र प्रदेश)

जर्मनी के जोसेफ राटजिंगर नये पोप

प्रभु कृपा में असीम आस्था रखने वाले जर्मनी के कार्डीनल जोसेफ राटजिंगर को 265 वें पोप के पद पर चुना गया। धर्म को राजनीति से अलग करने की जोरदार वकालत करने वाले इस नये पोप का मानना है कि धर्म और राजनीति के ताल मेल से आध्यात्मिकता नष्ट होती है। तलाक और पुनःविवाह पर खिलाफ विचार के रूप में जाने जानेवाले इस पोप के विचारों से यूरोप और अमेरिका में भले

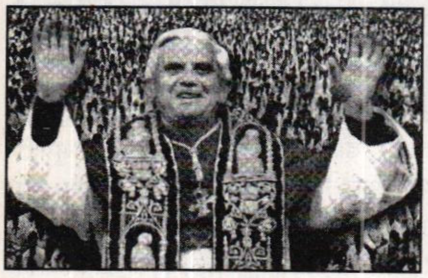

ही कुछ समय तक खलबली मचे, लेकिन एशिया, अफ्रीका और लतिन अमेरिकी देशों में उनके विचारों का स्वागत होगा। वे शांति व चर्च एकता के लिये समाधानात्मक मार्ग अपनायेंगे, ऐसा समझा जाता है।

वर्तमान उपभोक्तावादी पश्चिमी सोच जिसमें व्यक्ति स्वार्थ और बेइमानी में लिप्त दिखता है। स्वार्थपरक नीतियों को समूह कल्याण में तथा चर्च के समक्ष महती चुनौती होगी। ईसा ने कहा है 'मनुष्य को क्या लाभ कि वह सारी दुनिया की दौलत कमाए, लेकिन अपनी आत्मा खो बैठे।' नये पोप को इस संदर्भ में देखना होगा। पोप जॉन पोल द्वितीय की तरह नये पोप का नजरिया भी यही है कि ईश्वर और प्रकृति के साथ छेड़छाड़ ठीक नहीं है। दिल्ली कैथोलिक धर्मप्रांत के मास मीडिया के निदेशक फादर इमानुएल डोमनिक कहते हैं,---'पोप के रूप में जोसफ राटजिंगर का चुनाव इस दृष्टि से भी संपूर्ण मानव जाति के लिये खुशी का खबर है कि एक ऐसे विचारधारा वाला धर्मगुरू विश्व को मिला है, जो स्वयं को आम आदमी के लिये ईश्वर का सेवक मानता है, जो धर्म को त्याग व सेवा से जोड़ता है और जो जाति व भाषाई मानसिकता की संकीर्णता से काफी ऊँचा है।'

डॉ० नायर 'गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार' से सम्मानित

राष्ट्रपति भवन में महामहिम राष्ट्रपति जी से एक लाख रूपए का ''गणेश शंकर विद्यार्थी पुरुस्कार'' स्वीकार करते हुए राष्ट्रीय विचार मंच की केरल शाखा के अध्यक्ष डॉ० एन० चन्द्रशेखरन नायर।

'विचार दृष्टि' के संपादक सिद्धेश्वर सम्मानित

'विचार दृष्टि' के संपादक भी श्री सिद्धेश्वर जी को शॉल ओढ़ाकर सम्मानित करते तमिलनाडु

हिन्दी अकादमी के अध्यक्ष डॉ० बाल शौरि रेड्डी और साथ में सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ० एन० चन्द्रशेखरन नायर तथा श्री पी० के० बालासुब्रह्मण्यम।

कादरे को बुकर पुरस्कार

कादरे को बुकर पुरस्कार अल्बानिया के प्रसिद्ध कवि और उपन्यासकार इस्माइल कादरे को मैन बुकर अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

टोनी ब्लेयर की तीसरी जीत

ब्रिटेन के आम चुनाव में 646 सीटों वाली ब्रिटिश संसद में लेबर पार्टी के टोनी ब्लेयर ने 353 सीटें हासिलकर एक नये इतिहास का सृजन किया। यह पहली बार है जब लेबर पार्टी को लगातार तीसरी बार सत्ता में आने का अवसर मिला। इस चुनाव में ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था, स्वास्थ्य, शिक्षा, अपराध और आब्रजन के साथ इराक पर अमेरिकी हमला तथा उसमें ब्रिटेन की सक्रिय भागीदारी एक प्रमुख मुद्दा था। यह आश्चर्यजनक है कि एक समय इराक युद्ध को लेकर अपने प्रधान मंत्री टोनी ब्लेयर को कठघरे में खड़ा करने और उन्हें अमेरिका के राष्ट्रपति जार्ज बुश का पिछलग्गू बतानेवाली ब्रिटिश जनता ने अंततः उनके ही पक्ष में मतदान किया।

आखिर ब्रिटेन की मानवाधिकारों और युद्ध विरोधी जनता चुनाव में प्रभावी क्यों नहीं सिद्व हो सँकी? यद्यपि जार्ज बुश की तरह टोनी ब्लेयर ने भी इराक मुद्दे पर लोगों की नाराजगी को स्वीकार किया था, लेकिन देखना यह है कि अब इन दोनों नेताओं की जोड़ी विश्वशांति की दिशा में कोई खास कदम उठाती है या नहीं?

ब्रिटेन भारतीय मूल के नागरिकों का अच्छा-खासा प्रतिशत होते हुये भी भारतीय मूल के केवल छह उम्मीदवार ही चुनाव जीतने में सफल हुये। चूंकि सत्तारूढ़ लेबर पार्टी की ओर से भारतीय मूल के पाँच सांसद चुनाव जीतने में सफल रहे इसलिये यह उम्मीद की जानी चाहिये कि आनेवाले दिनों में भारत और ब्रिटेन के आपसी रिश्ते और अधिक प्रगाढ़ होंगे।

एक और जनता के पोप विदा

❑ सिद्धेश्वर

पिछले दिनों 23 अप्रैल 2005 को विश्व रोमन कैथोलिक के विश्व विख्यात धर्मगुरु पोप जान पाल द्वितीय के निधन पर भारत में भी तीन दिवसीय राष्ट्रीय शोक रहा। पोप धर्मगुरु के साथ ही दुनिया के सबसे छोटे एवं संप्रभु राष्ट्र वेटिकन के राष्ट्राध्यक्ष भी थे। 265 वें पोप जान पाल द्वितीय पहले गैर इटलीवासी कैथोलिक पोप थे जो अपनी सह्रदयता, उदारता और क्षमायाची प्रवृति के चलते प्रतिष्ठित थे और जिनके जाने का दुख इस्लामी देशों को भी हुआ। कारण कि उन्होंने यही संदेश दिया कि युद्ध या हिंसा किसी समस्या का हल नहीं है। इनसे कभी कोई समस्या का समाधान नहीं निकल पाया। विशाल ह्रदय और संत प्रतिभा के धनी पोप राष्ट्राध्यक्ष के रूप पूरी दुनिया का दौरा करते रहे और राष्ट्राध्यक्ष की बजाय धर्म प्रचार का काम करते रहे। दुनिया के धर्म अथवा पंथ निरपेक्ष आग्रही लोगों के लिये यह विषय चुनौतीपूर्ण अध्ययन का है। उनकी महत्ता इस दृष्टिकोण से गुरुत्तर है। इतिहास जिनसे महान काम लेता है उन्हें इतिहास पुरुष भी बनाता है।

दरअसल प्रत्येक व्यक्ति या संगठन और समूह का एक दृष्टिकोण होता है। अध्ययन, ज्ञान-विज्ञान किसी दृष्टिकोण की संरचना में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसी में से विचार बनते हैं; लेकिन दर्शन इन सबके ऊपर होता है। अनुभव बेसक व्यक्तिगत वैयक्तिक होते हैं; लेकिन अनुभूतियाँ सार्वभौम होती हैं। पोप जॉन पॉल की अनुभूतियाँ भी ऐसी ही थी। यह बात अलग है कि आज उनके निधन से दुनियाभर के लोग दुखी हैं और उनको अपना सद्‌गुरु मानते हैं; किंतु उनकी बात सुनी क्यों नहीं। सच तो यह है कि हमारी बनावट ही कुछ ऐसी है कि जब कृष्ण हुये थे, बुद्ध थे, महावीर थे, ईसा मसीह थे, मोहम्मद हुए यहाँ तक कि गाँधी हुए तो उनके जीवनकाल में भी बहुत थोड़े लोगों ने ही उनकी बात सुनी और हम मूढ़ के मूढ़ रहे, इसमें कहीं न कहीं हमारे निहित स्वार्थ जुड़े रहे हैं।

दुनिया के कोने-कोने में फैले एक सौ करोड़ से अधिक कैथोलिक ईसाइयों के सर्वोच्च धर्मगुरु पोप जॉन पॉल द्विजीय करुणा, दया एवं प्रेम की अप्रतिम प्रतिमूर्ति थे, जो न केवल ईसाई धर्मावलंबियों के अराध्य थे, वरन विश्व समुदाय की संपूर्ण मानव जाति के श्रद्धा के केंद्र भी थे। वह मात्र मसीही धर्मध्वजा के संवाहक ही नहीं, अपितु चिरंतन मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना हेतु विश्व के सभरांगण के अजेय योद्धा भी थे। उनके धार्मिक आदर्श अध्यात्म की प्रखर ज्योति बन इस धरा की अज्ञानता के गहन अँधकार को चीरकर सामान्य मानव वर्ग को प्रशस्त करते रहे। एक ओर जहाँ उन्होंने वामपंथियों की नाक में नकेल कसी तो वहीं दूसरी ओर पूंजीवादियों के सुरसा के मुँह की तरह बढ़ते लोभ पर लानत भेजी। यही

कारण है कि वर्ष 1994 में टाइम पत्रिका ने वर्ष पुरुष का अलंकरण प्रदान करते समय उन्हें इस धरा का अद्वितीय व्यक्ति के सम्मान से नवाजा।

यह जॉन पोप ही थे, जिन्होंने इराक मामले पर जार्ज बुश और टोनी ब्लेयर को सावधान किया था कि यदि वे लड़ाई का रास्ता अख्तियार करते हैं तो उन्हें ईश्वर अपनी अंतरात्मा और इतिहास को जवाब देना होगा। उनके इस बयान को अब तक का शायद सबसे बड़ा बयान कहा जाता है। उन्होंने वैटिकन से सद्दाम हुसैन को जबरदस्ती निहत्था करने की बहुत ही कड़ाई से मुखालफत की थी। पोप ने बगदाद में अपने प्रतिनिधि को आदेश दिया था कि वह वहीं बने रहें और लड़ाई के दौरान मानवीय सहायता देने का काम करें। इसी प्रकार भ्रूण हत्या, समलैंगिकता, गर्भ निरोध तथा नशाखोरी जैसे विवादित मुद्दों पर अपने सशक्त विरोध के कारण वह सदैव दिशाहीन आधुनिकता के समर्थकों के कोपभाजन बने। यही नहीं एक ओर वेटिकन की प्राचीन मान्यताओं का उन्होंने पूरी तरह पालन करने का प्रयास किया, तो वहीं दूसरी ओर गिरिजा के लोकतांत्रीकरण की वकालत की जिसके कारण उनके समालोचक भी दिग्भ्रमित हो जाते थे।

संधिवात तथा पार्किसंस रोग से पीड़ित होने के बावजूद सेंट पीटर्स की धर्मयात्रा के संवाहक इस परिव्राजक ने निरंतर 129 देशों में यात्राओं के माध्यम से 12.5 लाख किलो मीटर के दुर्गम पथ को तय कर असंख्य ह्रदयों को शांति, सहिष्णुता एवं सद्‌भाव का संदेश सुनाया। 'पोप' के अस्तित्व को चर्च के दायरे से बाहर निकालकर उसे आम लोगों कि संवेदनाओं के साथ जोड़ने के कारण ही उन्हें 'नये युग का नया पोप' भी कहा गया। पोप की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उन्होंने स्वयं को आम आदमी से जोड़ा, उसके हितों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी और इसे चर्च की सार्थकता से संयुक्त कर दिया। धर्मगुरु के रूप में उन्होंने जातिगत, भाषायी और परंपरावादी शत्रुओं को समाप्त करने की दिशा में अहम भूमिका निभायी। पोप जॉन पाल ने नये युग की जरूरत को पहचाना जिसमें गरीब व आम लोगों की भलाई में ही पूरे विश्व का कल्याण है। मानव जाति को पाप के गर्त से निकालना ही उनका उद्देश्य रहा।

पोप जॉन पॉल द्वितीय ऐसे पहले पोप थे, जिनका भारत से भावनात्मक लगाव था। वह भारत के सभी धार्मिक उत्सवों से भावनात्मक स्तर पर जुड़े हुये थे। यही कारण है कि उन्होंने भारत की यात्रा एक बार नहीं, बल्कि दो बार की। पहली बार फरवरी 1986 में भारत आये थे और अपने दस दिन की यात्रा में वह नयी दिल्ली, कोलकाता, शिलांग, चेन्नई, गोवा, मंगलौर, केरल, मुंबई और पुणे गये थे। फिर दूसरी बार वे दो दिनों के लिये दिल्ली दीवाली के वक्त आये थे। विदित हो कि भारत

में 2.4 प्रतिशत आबादी ईसाइयों की है जिनका 65 प्रतिशत हिस्सा रोमन कैथोलिक है किंतु पोप जॉन पॉल ने केवल इन ईसाइयों के नहीं, बल्कि उन्होंने मदर टेरेसा को संत का दर्जा देने की प्रक्रिया आरंभ कर प्रत्येक भारतीय के दिल में खास जगह बनायी। लगभग 26 वर्ष तक पोप ने कैथोलिक चर्च का दिशा-निर्देशन किया। साथ ही मानवाधिकारों के हनन की निंदा करते हुये अन्य अपराध को खत्म करनेवाली सभ्यता की पैरवी की। उनका कहना था- Social justice can not be attained by voilence. voilence kills that it intends to create!

पोप पीठ के इतिहास में जॉन पॉल द्वितीय को एक ऐसे धर्माचार्य के रूप में स्मरण किया जायेगा जिसका व्यक्तित्व परंपरा, रूढ़ि, सुधार और परिवर्तन को एक साथ समेटकर एक ऐसी धार्मिक परिकल्पना प्रस्तुत करता था जिसकी सीमायें धर्म के क्षितिज के पार समाज, अर्थव्यवस्था और विश्व व्यवस्था तक के स्वप्न दिखती थी भले ही इस सपने से उनके मतानुयायियों में से भी कुछ सहमत नहीं हों। इनके सपनों के टूटने की खनक विगत अप्रैल के प्रथम शनिवार की रात वेटिकन सिटी में सिसकियों के रूप में सुनाई पड़ी और शायद उस मूक रुदन में भी जो अनेक श्रद्धालुओं की आँखों में जज्ब नहीं हो पा रहा था।

जॉन पॉल द्वितीय का मूल, नाम कैरोल जोसेफ वायतिवा था। उनका जन्म पोलैंड के पैडोविच में 18 मई 1920 को हुआ था। जब वे केवल आठ वर्ष के थे तो उनकी माँ चल बसी और 21 वर्ष की उम्र में उनके सिर से पिता का साया भी उठ गया। इसके पहले उनके बड़े भाई की मौत हो चुकी थी। इस प्रकार एक-एक कर अपने परिजनों के विछोह से कैरोल को अकेलेपन की वेदना के मर्म का उसकी शिद्दत के साथ एहसास हुआ। केवल नौ वर्ष की आयु में कैथोलिक धार्मिक संस्कार में ही आ लेने वाले कैरोल ने 1940 से 1944 के बीच एक सामान्य व्यक्ति की तरह जीविका के लिये कई जगह नौकरी भी की और 1948 में उन्होंने राम से दर्शनशास्त्र में डाक्टरेट की उपाधि ग्रहण की। फिर 1958 में कैरोल क्रेकोव नगर, पोलैंड का सहायक धर्माध्यक्ष में नियुक्ति पाकर धीरे-धीरे कैथोलिक धर्म के शिखर पर पहुँचे और विश्व विश्यात धर्मगुरु कहलाये।

कौन लायेंगे अब नारदजी की खबर?

पिछले 45 सालों से लगातार 'हिन्दुस्तान के लिये स्तंभ 'नारद जी खबर लाये हैं' लिखनेवाले सुप्रसिद्ध पत्रकार व साहित्यकार गोपाल प्रसाद व्यास का विगत 28 मई को 93 वर्ष की उम्र में निधन हो गया और अब नारदजी की खबर कौन लायेगा।

पद्मश्री तथा श्लाका सम्मान के साथ

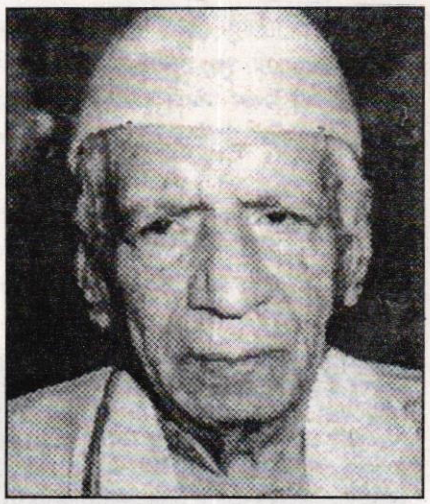

साथ अभी हाल ही में उ०प्र० सरकार के सर्वोच्च सम्मान 'यश भारती' से सम्मानित गोपाल प्रसाद व्यास ने सन 1943 में हिन्दुस्तान से जुड़ने पर 25 सालों तक 'यत्र-तत्र सर्वत्र नाम से नियकमित स्तंभ और मरने के दिन तक' नारद जी खबर लाये हैं' स्तंभ में लिखा। वह ब्रजभाषा और पिंगल के मर्मज्ञ विद्वान माने जाते थे कदम कदम बढ़ाये जा, 'हास्य-सागर8, व्यास के हास परिहास', 'कहो व्यास कैसे कही' जैसी कृतियों के रचयिता स्व० व्यास ने राजर्षि अभिनंदन ग्रंथ, कन्हैयालाल पोद्दार अभिनंदन गंथ, गाँधी हिंदी दर्शन तथा ब्रज विभव जैसे उत्कृष्ट ग्रंथों का उन्होंने संपादन किया। वह हिंदी साहित्य सम्मेलन के महामंत्री के पद पर लगभग अर्द्ध शताब्दी तक बने रहे और पुरुषोतम हिंदी भव न्यास समिति के आजीवन महामंत्री भी थे । हिंदी जगत के इस यशस्वी हस्ताक्षर को 'विचार दृष्टि' की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि।

हिंदी के सच्चे सेवक विष्णुकांत शास्त्री का निधन

विचार कार्यालय, पटना

हूँ सौ बार गुनाहो से लड़कर लेकिन बार-बार उठा हूँ मैं गिर-गिरकर। इससे मेरा हर गुनाह भी मुझसे हारा मैं अपने जीवन को इस तरह सँवारा।

'गीता में आध्यात्म' विषय पर व्याख्यान देने के लिये कोलकाता से पटना पधार रहे उपरोक्त पंक्तियों के रचयिता तथा उत्तर प्रदेश के पूर्व राज्यपाल एवं साहित्यकार विष्णुकांत शास्त्री

का पिछले 17 अप्रैल को हावड़ा-दानापुर एक्सप्रेस में दिल का दौरा पड़ने से निधन हो गया। वे हिंदी के सच्चे सेवक के रूप में जाने जाते थे। इन्होंने काव्य-निबंध-संस्मरण, यात्रावृतांत आदि पर अनेक मौलिक ग्रंथों की रचना की। कुछ चंदन की कुछ कपूर की, 'चिंतनभद्रा', 'अनुचित', 'तुलसी के हिय हरि', 'बांग्ला देश के संदर्भ में, 'संस्मरण को पायल बनने दो', 'सुधियाँ उस चंदन के बन की', 'अनंत पथ के यात्री'', ज्ञान और कर्म', 'जीवन पथ पर चलते-चलते', आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। अच्छी कृतियों के लिये उन्हें सम्मानित भी किया गया। राजनीति में उनका पदार्पण जे० पी० आंदोलन के वक्त सन् 1977 में हुआ और वे उसी वर्ष प० बंगाल विधान सभा का सदस्य जनता पार्टी के टिकट पर हुये। वे एक बार राज्य सभा के सदस्य भी रहे। सक्रिय राजनीति में रहने के बावजूद साहित्य की सरस साधना को कभी नहीं बिसरनेवाले विष्णुकांत शास्त्री को 'विचार दृष्टि' परिवार की श्रद्धांजलि।

अचूक सुरुचि और सरोकारों के सृजनकार नेमिचंद्र जैन नहीं रहे

विचार कार्यालय, दिल्ली

'तारसप्तक' के कवि, हिंदी के यशस्वी आलोचक नाट्य समीक्षक और अचूक सुरुचि एवं सरोकारों के सृजनकार नेमिचंद्र जैन का लंबी बीमारी के बाद निधन हो गया और उनका यह निधन समूचे साहित्य एवं रंग जगत को प्रभावित कर गया, क्योंकि जो कुछ उन्होंने लिखा सदैव करीने और जतन से लिखा, मुकम्मल लिखा। उनमें खुलापन और जिम्मेदार समझ बराबर रहते थे। बुद्धि और सृजन को ही सच्चा वैभव माननेवाले नेमिचंद्र जैन जी कभी सत्ता और धनसंपत्ति के आतंक में नहीं रहे। सुख-सुविधाओं को लेकर उनके मन में कभी कोई क्लेश नहीं रहा। 'जो नहीं है उसका गम क्या'– शमशेर की इस उक्ति को उन्होंने आजीवन चरितार्थ किया।

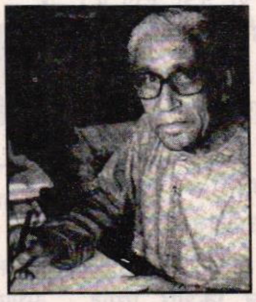

नेमिचंद्र जी ने नयी नाट्य समीक्षा के प्रतिमानों को तो स्थापित किया ही, साथ ही रंगमंच नाटककार, निर्देशक, रंगभाषा, रंगशिल्प सभी पर मौलिक विचार-विमर्श की स्थितियों को भी वे बनाते रहे। दरअसल उनकी रचनात्मक और सजग दृष्टि भी। यही कारण है कि उनके संपादकीय आधुनिक चिंतन, राष्ट्रीय- अंतर राष्ट्रीय स्तर के विषयों से जुडे रहे। इधर उन्होंने 'मुक्तिबोध रचनावली' का जो संपादन किया, वह भी अनेक साहित्यिक, सर्जक, आलोचक व्यक्तित्व का खासकर उसकी भूमिका और उसमें मुक्तिबोध का मूल्यांकन उल्लेखनीय है। उनकी 'रंगदर्शन', 'जनान्तिक', दृश्य-अदृश्य', 'तीसरे पाठ', मेरे साक्षात्कार आदि ग्रंथों' में नेमिचन्द्र जी के लेखन और नाट्य समीक्षा की मौलिकता को देखा जा सकता है। मेरे साक्षात्कार में नाटक और रंगमंच पर उनकी समग्र विचार-दृष्टि देखी जा सकती है। प्रकृति से संवेदनशील नेमिचंद्र जैन एक गंभीर वैचारिक चिंतन और विमर्श की संभावनाओं के रचनाकार रहे।

संगीत में नेमिचंद्र जी की रुचि की शुरुआज तो बचपन में ही हो गयी थी पर उसे पक्का आधार मिला इप्टा में बिताये दिनों में जब वे रविशंकर आदि संगीतकारों की सोहबत में आये। युवा गायकों में उनकी गहरी दिलचस्पी थी। नेमिचंद्रजी को अपने समय के अज्ञेय, मुक्ति बोध, शमशेर, शंभु मित्र, हबीब तनवीर, बव कारंत, रवि शंकर, बिरेजू महाराज जैसे अनेक मूर्धन्यों के साथ मित्रता और संवाद के अवसर मिले। उनकी निर्मलता का प्रवाह और दिशा ऐसे रहे हैं कि उसमें सब कुछ घुलता-मिलता रहा। मुक्तिबोध और शंभु मित्र के साथ नेमिजी की मित्रता ही इस बात का प्रमाण है कि साहित्य और रंगकर्म में उनकी दिलचस्पी व्यावहारिक-वैचारिक होने के साथ उसके प्रति उनकी सरसता, आत्मीयता और मानवीय संवेदना की भी साक्षी है।

संतोष इस बात को लेकर है कि नेमिचंद्र जैन के प्रति हिंदी लेखक एवं रंगकर्मी समाज में व्यापक सद्भाव और आदर रहा है जिससे निश्चित रूप से यह आशा बँधती है कि हिंदी में सच्चे और मेहनती की पहचान अब भी मुमकिन है। संस्कृति के सम्यक चिंतक नेमिचंद्र जैन जी को विचार दृष्टि परिवार की हार्दिक श्रद्धांजलि।

हेलीकॉप्टर दुर्घटना में दो मंत्रियों की मृत्यु

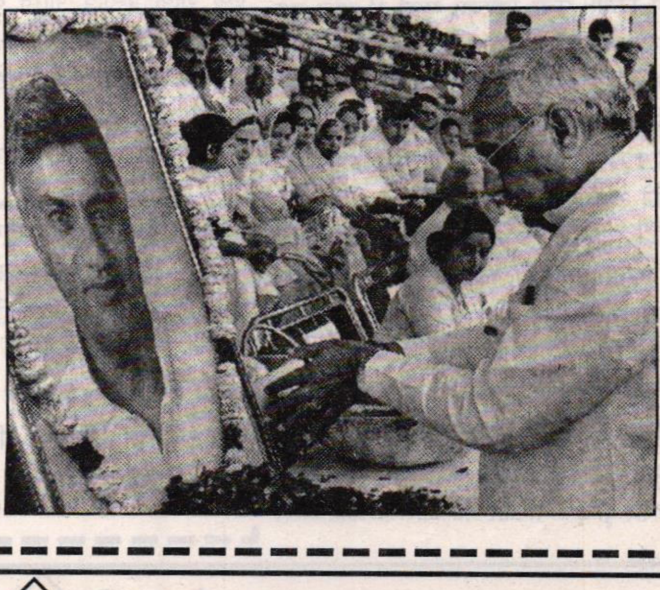

पिछले 31 मार्च को उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले के मेंघी गाँव में हुई एक हेलीकाप्टर दुर्घटना में पूर्व मुख्य मंत्री वंशीलाल के पुत्र और हरियाणा के कृषि मंत्री सुरेन्द्र सिंह तथा उर्जा मंत्री ओ० पी० जिंदल के साथ पायलट टी० एस० चौहान की मौत हो गयी। हिसार विध न सभा सीट से 75 वर्षीय जिंदल तीसरी बार विधायक निर्वाचित हुए थे। 59 वर्षीय सुरेन्द्र सिंह ने अपने संपूर्ण राजनीतिक जीवन में युवा वर्ग का दिल जीता और जमीन से जुडे नेता की पहचान बनाई। किसानों व गरीबों के प्रति उनका लगाव सदैव याद रखा जायेगा। विचार दृष्टि परिवार की ओर से स्व० सिंह एवं स्व० जिंदल सहित पायलट चौहान को श्रद्धांजलि।

मौन हो गया वह महानायक

जिन्हें जिंदगी भर सालता रहा विभाजन

जीवन संघर्ष में विजेता के रूप में उभरे मशहूर फिल्म स्टार तथा भारत के खेल मंत्री सुनील दत्त ने एक अभिनेता, सांसद, मंत्री तथा सामाजिक कार्यकर्त्ता की हैसियत से जीवन के हर क्षेत्र में अपनी छाप छोड़ी। सीमा पार जवानों में जोश भरने तथा कैंसर एवं एड्स जैसी असाध्य बीमारियों के खिलाके जंग में बढ़-चढ़कर हिस्सा लेने और गरीबों की मदद करने के लिए हमेशा तत्पर सुनील दत्त का हँसता-खिलखिलाता चेहरा अब सिर्फ परदे पर ही दिखेगा। पिछले 25 मई को दिल का दौरा पड़ने से अचानक उनका निधन हो गया।

6 जून, 1929 को झेलम जिले के खर्द गाँव में जन्में सुनील दत्त करोड़ों पंजाबियों की तरह उन्होंने भी भारत के विभाजन का दर्द झेला और यह पीड़ा हमेशा उनके मन में रही। 'रेलवे प्लेटफार्म' फिल्म से अपनी फिल्मी दुनिया में कदम रखकर 'एक ही रास्ता', 'मदर

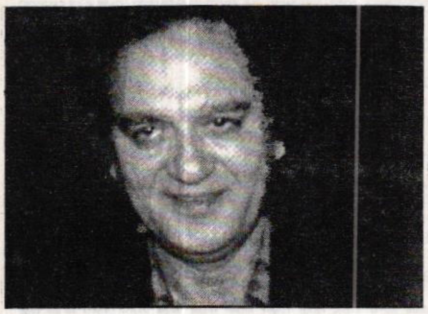

इंडिया', 'सुजाता', मैं चुप रहूँगी, 'मिलन' जैसी दमदार फिल्मों में उन्होंने काफी उत्साह पूर्वक काम किया। उत्तर पश्चिम मुंबई से पाँच बार सांसद बने सुनील दत्त जी पहली बार 2004 में खेल मंत्री बनाए गए। ग्रैड फिक्स अवार्ड, शिरोमणि अवार्ड, आर्डर ऑफ पिपुल्स सहित उन्हें 1998 मैं राजीव गाँधी सद्भावना पुरस्कार से भी नवाजा गया।

स्व० दत्त कहा करते थे कि आज की भागम-भागवाली जिदगी में रोजी-रोटी की जुगाड़ में पिस रहे लोगों को दो पल के लिए भी मनोरंजन का साधन उपलब्ध करा देना या 'साधन' बन जाना क्या किसी सेवा से कम है! मौन हो गया वह साधक महानायक, जिन्हें जिंदगी भर सालता रहा भारत का विभाजन। 'विचार दृष्टि' परिवार की ओर से श्रद्धांजलि।

साहित्यकार सुदामा मिश्र को भावभीनी श्रद्धांजलि

विचार कार्यालय, पटना

पटना के चर्चित कवि एवं रचनाकार सुदामा मिश्र को उनके निधन पर राष्ट्रीय विचार मंच द्वारा आज यहाँ स्थानीय पुरन्दरपुर स्थित 'बसेरा' में आयोजित एक शोक सभा में मंच के कार्यकलापों तथा साहित्य में उनके उल्लेखनीय योगदान की चर्चा करते हुये सुधीजनों ने भावभीनी श्रद्धांललि अर्पित की। इस अवसर पर 'विचार दृष्टि' के संपादक सिद्धेश्वर ने समाज व साहित्य में स्व. मिश्र के योगदान की चर्चा करते हुये कहा कि वे एक ऐसे अत्यंत संवेदनशील और समर्पित साहित्य-सेवी थे, जो जीवन-पर्यत पुस्तकों से जुड़े रहे। उनमें हृदय-ग्राहिकी सरसता की गौरवास्पद संभावनाओं के बीज की झाँकी देखने को मिलती थी। उनकी भावुकतामयी वाणी अनायास हृदय को उल्लास से भर देती थी।

रचनाकार युगल किशोर प्रसाद, दयानन्द सिंह लाल दास पासवान, प्रो. कपिलदेव प्र. सिंह, राजभवन सिंह तथा मंच के महासचिव डॉ. शाहिद जमील ने भी स्व. मिश्र को अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुये कहा कि भले ही उनके दैहिक जीवन को विराम लग गया, पर आज भी उनका हँसमुख रूप, मुस्कराता चेहरा, मीठी आवाज और आत्मीय भाव हमारे मानस-पटल पर उभर आते हैं।

मंच के राष्ट्रीय महासचिव सिद्धेश्वर की अध्यक्षता में आयोजित इस शोक सभा में एक शोक प्रस्ताव पारित कर दिवंगत आत्मा को चिर शांति और शोक-संतप्त-परिवार को सहनशक्ति प्रदान करने हेतु जगन्नियंता से प्रार्थना की गयी।

डॉ. शाहिद जमील, पटना से

डॉ० बरसाने लाल चतुर्वेदी का निधन

हास्य व्यंग्य के कवि पद्मश्री डॉ० बरसाने लाल चतुर्वेदी का 84 वर्ष की उम्र में मथुरा स्थित अपने पैत्रिक निवास में निधन हो गया। उनके पुत्र सुरेन्द्र चतुर्वेदी ने मुखाग्नि दी। 'विचार दृष्टि' परिवार की ओर से उन्हें श्रद्धांजलि

पानी का अविलंब राशनिंग हो : राष्ट्रीय सम्पदा घोषित हो!

डॉ० सत्येन्द्र चतुर्वेदी

जल संकट के संदर्भ में पत्र-पत्रिकाओं ने जो अभियान छेड़ा है, उसकी जन जन का सहज समर्थन अवश्य मिलना चाहिए। एक प्रसंग यहाँ उल्लेख्य हे- ''किसी बैठक के दौरान एक बार गाँधीजी को, नेहरूजी लोटे से पानी पिला रहे थे-थोडा पानी नीचे ढुलक गया। इस पर गाँधीजी विकल हो उठे। पास में खड़ी सरोजिनी नायडू ने कहा-बापू नेहरू से थोड़ा

पानी फैल गया तो क्या हुआ? पर गाँधीजी ने पानी के अपव्यय पर गंभीर आपत्ति प्रकट की। आज जिन सोभाग्यशाली श्रीमानों को पानी महज पीने के लिए ही नहीं, फार्मों, स्वीमिंग पूल, रेनडांस और भी तरह के ''फलों' के लिए पानी सुलभ हो रहा है, क्या वे कभी ''हिये की आँखों'' से उन अभागों की पीड़ा देख सकेंगे, जो अपने तल के टपकने या टैंकर के शुभागमन की प्रतीक्षा में, घंटों-घंटों टकटकी लगाए बाट जोहते रहते हैं। सूखे कुएँ, बावड़ी लंबे समय से अपने दुभाग्य की कहानी कह रही हैं। महिलाएं घरवालों की प्यास बुझाने के लिए कोसों दूर से पानी लाने को विवश हैं- जिंदगी सांसत में है। सही अर्थों में जल जीवन है-इसकी सटीक वे ही समझ सकते हैं। ज्यादा शोर शराबा होने पर आज की संवेदनहीन दायित्वविरत सरकारें बस कुछ फोरी कार्यवाही करती हैं। दीर्घकानीन योजनाएं अर्थाभाव, प्रबल इच्छाशक्ति के अभाव के कारण पूरी नहीं हो पा रही हैं, वैसे भी अंधाधुंध दोहन से स्रोतों में पानी बचा भी कितना है। जाहिर है, जल संकट 'जीवन का संकट' बन गया है जो आगामी समय में भीषण उपद्रव उत्पात भड़का सकता है। इस विषाद वेला में सरकार को जल को अविलंब राष्ट्रीय सम्पदा घोषित कर उसका राशनिंग कर देना चाहिए। जनता को भी अपना पुनीत कर्त्तव्य समय पानी की बचत के सब अभियानों में स्वेच्छा से सहयोग करना चाहिए। आज हठात पूर्व प्रधनमंत्री हुतात्मा लालबहादुर शास्त्री के अन्न संकट के संदर्भ में देशवासियों से सोमवार का व्रत रखने के आहवान की याद आ जाती है- काश कोई नैतिकबल का धनी जननायक आज फिर ऐसी पहल करता!

**संपर्क: 23 चन्द्रपथ, सूर्यनगर (प०)
सिविल लाइन्स, जयपुर-6**

With Best Compliments from

PATNA FLOORING CO.

Kotwali Maszid, Budha Marg
Patna-800001

Resi.: Pasupati Niwas, Bander Bagicha
Frazer Road, Patna-800 001

0612-2225774 (S)
0612-2225781 (R)

Mobile: 9835244482

Prop: Gajendra Singh

Solutions Point

SOLUTIONS IN:

Computer Assembling
Maintenance
Laptop Repair
AMC
Networking
Web & Graphics Designing
Software Development

Contact : *Mr. Sudhir Ranjan*

Head Office : U-207, Shakarpur, Vikas Marg, Delhi-92
Tel/Fax : 011-22059410, 22530652
Website: www.solutionspoint.org

People's Co-Operative House Construction Society Ltd.
Kankar Bagh, Patna-800020

समिति में निम्न आय वर्ग के कुल १७३० सदस्य हैं जिनमें १६०० सदस्यों को लोहियानगर, कंकड़बाग में स्थित विभिन्न सेक्टरों में भूखंड आवंटित हैं तथा शेष को जगनपुरा में भूखंड आवंटित हैं। समिति के द्वारा प्रत्येक सदस्य से अभियान चलाकर नौमिनी फार्म भरवाया जा रहा था, परन्तु बहुत से सदस्यों के द्वारा अभी भी नौमिनी फार्म नहीं भरा जा सका है। अतः वैसे सदस्यों से अनुरोध है कि अपना नौमिनी फार्म समिति कार्यालय से प्राप्त कर शीघ्र भरकर जमा कर दें।

समिति अपने सदस्यों के पुत्र-पुत्री, पौत्र-पौत्री, भाई-बहन एवं स्वयं के विवाहोत्सव तथा संबंधित प्रयोजनों के लिए आधे दर पर सामुदायिक भवन प्राथमिकता के आधार पर उपलब्ध करती है।

समिति के सदस्यों की सुविधा के लिए स्ट्रीट लाइट, सड़क मरम्मत, मैनहोल सफाई, पार्क निर्माण एवं अन्य विकास कार्यों को भी निर्धारित नियमानुसार सम्पन्न किया जाता है।

एल.पी.के.राजगृहार	सिद्धेश्वर प्रसाद	प्रो. एम.पी. सिन्हा
अध्यक्ष	उपाध्यक्ष	सचिव

साभार स्वीकार

पत्रिकाएं

1. मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद् पत्रिका जून 05
प्र. संपादक : डॉ० बी० राम संजीवय्या, बैंगलूर
2. युगीन- अप्रैल-जून 05
संपादक : डॉ. मधुकर गंगाधर, दिल्ली
3. हम सब साथ-साथ मार्च, 05
संपादक : श्रीमती शशि श्रीवास्तव, नई दिल्ली
4. तैलिक बंधु - मार्च 05
संपादक : श्री कृष्ण शाह, पटना
5. विवरण पत्रिका - मार्च, अप्रैल, मई 05
संपादक : घोण्डीराव जाधव, हैदराबाद
6. गीता से जुड़े - मई,जून 05
प्र. संपादक : दामोदर भगेरिया, जयपुर
7. अणुव्रत : मई, जून 05
संपादक : डॉ. महेन्द्र कर्णावट, नई दिल्ली
8. दिल्ली विज्ञप्ति- मई 05
संपादक : पुखराज सेठिया, ललित गर्ग, दिल्ली
9. रेल राजभाषा - जनवरी मार्च 05
संपादक : जे. एन. भाटिया, दिल्ली
10. भारतीय रेल - मई 05
संपादक : प्रमोद कुमार यादव, दिल्ली
11. रैन बसेरा - अप्रैल, मई 05
प्र. संपादक : डॉ. जयसिंह व्यथित, अहमदाबाद
12. सनद-12
संपादक : मंजु मल्लिक मनु, पटना
13. मानस चंदन - अप्रैल, जून 05
प्र. संपादक : डॉ गणेशदत्त सारस्वत, सीतापुर
14. हरित वसुंधरा, जनवरी-मार्च 04
संपादक : डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह, पटना
15. साहित्य परिक्रमा, जनवरी जून 05
संपादक : योगेन्द्र गोस्वामी नई दिल्ली
16. हिंदी हृदय - अप्रैल 05
लेखक : डॉ. एस. सुब्रहमण्यम, विष्णुप्रिया, चेन्नै
17. गजल सृजन कला प्रसार केंद्र, जालौन
संचालक : नासिर अली 'नदीम' जालौन, उ. प्र.

दिल्ली चातुर्मास के दौरान आचार्यश्री महाप्रज्ञ के सान्निध्य में महत्वपूर्ण कार्यक्रम

स्थानः आध्यात्म साधना केंद्र, छतरपुर रोड, महरौली

क्रमांक	तिथि	कार्यक्रम
1.	3 जुलाई	महाप्रज्ञ का 86 वां जन्म दिवस प्रज्ञा दिवस के रूप में। प्रमुख नागरिकों सहित लालकृष्ण आडवाणी तथा लक्ष्मीमल सिंघवी विशिष्ट अतिथि
2.	4 जुलाई	राष्ट्रपति डॉ. ए.पी. जे. अब्दुल कलाम द्वारा उनसे मिलकर जन्म दिवस पर बधाई
3.	5 जुलाई	प्रज्ञा दिवस का आयोजन
4.	9 जुलाई	'हिंसा और आतंकवाद' पर राष्ट्रीय संगोष्ठी
5.	16 जुलाई	'आधुनिक शिक्षा प्रणाली व मानवीय मूल्यों' पर राष्ट्रीय संगोष्ठी
6.	23 जुलाई	अर्थशास्त्रियों की राष्ट्रीय संगोष्ठी
7.	30 जुलाई	'मीडिया' पर राष्ट्रीय संगोष्ठी
8.	2 अगस्त	राष्ट्रपति भवन में महाप्रज्ञ जी को 'सांप्रदायिक सद्भावना पुरस्कार'
9.	20, 21अगस्त	प्रबुद्धजनों का सम्मेलन
10.	12 सितंबर	विकास महोत्सव
11.	2,3 अक्टूबर	अणुव्रत अधिवेशन
12.	20 अक्टूबर	जैन विश्व भारती संस्थान का दीक्षांत समारोह
13.	23 अक्टूबर	'वर्तमान की चुनौतियाँ' पर संगोष्ठी
14.	2 नवंबर	भगवान महावीर निर्वाण दिवस
15.	3 नवंबर	आचार्य तुलसी का 92 वाँ जन्म दिवस
16.	7 नवंबर	अखिल भारतीय लेखक सम्मेलन
17.	3,4 दिसंबर	डॉक्टर्स सम्मेलन

राष्ट्रीय विचार मंच के दिल्ली तथा उसके आस-पास रहनेवाले सदस्यों से अनुरोध है कि आचार्यश्री महाप्रज्ञ के सान्निध्य में आयोजित कार्यक्रमों में भाग लेकर राष्ट्रीय एकता की दिशा में किये जा रहे प्रयत्नों का एक हिस्सा बनें ताकि समाज व राष्ट्र को समृद्ध किया जा सके। यह आपका न केवल नैतिक कर्त्तव्य है, बल्कि एक राष्ट्रीय दायित्व है। मंच के सजग सदस्य होने के नाते यह आपकी गरिमा के अनुरूप होगा।

गत वर्ष की भाँति 31 अक्टूबर 2005 को सरदार पटेल जयंति-समारोह के अवसर पर राष्ट्रीय एकता रैली का आयोजन किया जायेगा।

विनीत,
सिद्धेश्वर
राष्ट्रीय महासचिव
राष्ट्रीय विचार मंच

'दृष्टि', यू-207 शकरपुर
विकास मार्ग, दिल्ली-92
दूरभाष: 22059410, 22530652

त्रिमूर्ति ज्वेलर्स

बाईपास रोड, चास, बोकारो

झारखंड

दूरभाष : 65765

फैक्स : 65123

परीक्षा

प्रार्थनीय

सुरेश एवं राजीव

त्रिमूर्ति अलंकार

त्रिमूर्ति पैलेस

(रुपक सिनेमा के पूरब)

बाकरगंज,

पटना-800004

दूरभाष : 2662837

आधुनिक आभूषणों के निर्माता, नए डिजाइन, शुद्ध सोने-चाँदी तथा हीरे के गहनों का प्रमुख प्रतिष्ठान

लौह पुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल
के
130वें जयंती-समारोह की सफलता के लिए
हमारी शुभकामनाएँ

पटेल फाउंडेशन
(सरदार पटेल के विचारों के प्रति समर्पित)

संस्था का ध्येय है –

- सरदार पटेल के विचारों को जन-जन तक पहुँचाना
- राष्ट्रीय एकता व अखंडता को अक्षुण्ण बनाए रखना
- सामाजिक समरसता कायम करना
- सांप्रदायिक सद्भाव का वातावरण बनाना
- पाखंड, अंधविश्वास और रूढ़िवादी प्रवृत्तियों से परहेज करना

तो आइए, आप भी इस अभियान का एक हिस्सा बन इसे अपेक्षित सहयोग प्रदान करें।

147, अंसल चैंबर-II, भीकाजी कामा प्लेस, नई दिल्ली

फोन : 30926763 • मो. : 9891491661

वर्ष : 7 | अंक : 24 | जुलाई-सितंबर 2005 | RNI REG. NO. : DEL HIN/1999/791

अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री महाप्रज्ञ के
86वें जन्म दिवस के अवसर पर दिल्ली शुभागमन के लिए

हम गुरुदक्षिणा समर्पित करें
अणुव्रत आचार संहिता को
जीवन में प्रतिष्ठापित कर
स्वयं अणुव्रती बनें, औरों को बनायें

अहिंसा सव्वभूयखेमंकरी
अहिंसा यात्रा
2001–2006

अनुरोध
मगन जैन
छगनलाल, चन्द्रभान, जम्बू कुमार, अशोक, सुदर्शन जैन

कुन्दनलाल रामचन्द्र जैन
पोस्ट : तुषरा (बलांगीर-उड़ीसा) 767030
दूरभाष : (06652) 256114,256341

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी सिद्धेश्वर द्वारा 'दृष्टि', यू-207, शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92 से प्रकाशित एवं प्रोलिफिक इनकारपोरेटिड, एक्स-47, ओखला फेस-2, नई दिल्ली-110020 से मुद्रित। संपादक-सिद्धेश्वर